देवकुमार-ग्रन्थमाला का द्वितीय पुष्प

ज्ञान-प्रदीपिका

तथा

सामुद्रिक-शास्त्रम्

(ज्योतिष-शास्त्र)



अनुवादक और सम्पादक,

ज्योतिषाचार्य पण्डित रामव्यास पाण्डेय

प्रकाशक,

निर्मलकुमार जैन

मन्त्री

श्रीजैन-सिद्धान्त-भवन, आरा।

वीर संवत् २४६० (सन् १९३४)

देवकुमार-ग्रन्थमाला का द्वितीय पुष्प (क)

ज्ञान-प्रदीपिका

अनुवादक और सम्पादक,

ज्योतिषाचार्य पण्डित रामव्यास पाण्डेय

प्रकाशक,

निर्मलकुमार जैन

मन्त्री

श्रीजैन-सिद्धान्त-भवन, आरा।

वीर संवत् २४६० (सन् १९३४)

ज्ञान-प्रदीपिका
की
विषय-सूची

—:*:—

प्रस्तावना ।

प्रस्तुत (ज्ञान प्रदीपिका) पुस्तक जोतिष के उस भाग से सम्बन्ध रखती है जिसमें प्रश्न लग्न पर से फल बताया जाता है। उसे प्रश्नतन्त्र कहते हैं। नीलकण्ठ ने अपनी पुस्तक के अन्तिम अध्याय में इसी विषय का वर्णन किया है। और भी कई प्रश्नतन्त्र की पुस्तकें प्रचलित हैं। प्रश्नतन्त्र के विषय में यह एक स्वतन्त्र और पूर्ण पुस्तक कही जा सकती है। इस ग्रन्थ के रचयिता के नाम आदि के बारे में जानने के लिये हमारे पास साधन नहीं है पर प्रारंभिक मंगलाचरण से इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि वे जैन थे। अस्तु—

जो प्रति हमारे सामने है वह अत्यन्त अशुद्ध है। पाठ शुद्ध करने का कोई भी साधन नहीं है। इस विषय के अन्य ग्रन्थों से मिलान करने पर कुछ कुछ शुद्ध करने का प्रयत्न किया गया है। पर उसमें भी कठिनता यह है कि इस ग्रन्थ में फल कहने का प्रकार कहीं कहीं अन्य ग्रन्थो से बिलकुल निराला है। यह बात एक प्रकार से मान ली गई है कि वर्षफल और प्रश्न फल इस देश में यवनों के संसर्ग से प्रचलित हुये हैं। फिर भी इस ग्रन्थ में स्थान स्थान पर की विशेषताओं के देखने से जान पड़ता है कि इस शास्त्र का विकास भी अन्य शास्त्रों की तरह जैनो में स्वतन्त्र और विलक्षण रूप से हुआ है। व्याकरण की अशुद्धियाँ तो प्रस्तुत प्रति में इतनी अधिक है कि उससे शायद ही कोई श्लोक बचा हो। उनके शुद्ध करने में इस बात का पूरा ध्यान रखा गया है कि ग्रन्थकार का भाव न बिगड़ने पावे। पदो के शुद्ध करने से जिस स्थान पर श्लोक की बन्दिश टूटती दिखाई दी वहां उसे वैसा ही छोड़ दिया गया। इसका कारण परम्परागत अशुद्धि समझी गई और उन्हें ज्यो का त्यो विद्वानों के सम्मुख रखने का प्रयत्न किया गया।

एक बात और। लग्न की जगह पर हर जगह प्रश्नलग्न समझना चाहिये। ग्रहो की स्थिति से प्रश्नकालिक ग्रहों की स्थिति से आशय है जिस प्रकार इस बात को बार बार कहना ग्रन्थकार ने ठीक नहीं समझा उसी प्रकार अनुवाद कर्त्ता ने भी।

कई स्थान पर श्लोक के श्लोक छूट और टूट गये हैं। यथासाध्य अन्य ग्रन्थों से मिला कर उन्हें पूर्ण करने की चेष्टा की गई। फिर भी जो रह गये उन्हें विद्वान् पाठक सुधार लें।

शीघ्रता, प्रमाद, आलस्य आदि कारणों से अशुद्धि रह जाने की संभावना ही नहीं निश्चय है। गुणग्राही पाठक यदि सूचना देंगे तो सुधारने का प्रयत्न किया जायगा।

—अनुवादक

विशेष-वक्तव्य।

१—ज्योतिष-शास्त्र।

जिस शास्त्र के द्वारा सूर्य, चन्द्र, मंगल आदि ग्रहों की गति, स्थिति आदि एवं गणित जातक, होरा आदि का सम्यक् बोध हो उसे ज्योतिषशास्त्र कहते हैं। विद्वानों का मत है कि भिन्न भिन्न शास्त्रों के समान यह शास्त्र भी मनुष्यजाति की प्रथमावस्था में अङ्कुरित हो ज्ञानोन्नति के साथ साथ क्रमशः संशोधित तथा परिवर्धित होकर वर्त्तमान अवस्था को प्राप्त हुआ है। सूर्य चन्द्रादि अन्यान्य ग्रहों का स्वभाव ऐसा अद्भुत एवं अलौकिक है कि उनकी ओर प्राणिमात्र का मन आकर्षित हो जाता है। प्राचीन समय से ही इसकी ओर सभी जातियों का ध्यान विशेषतः आकृष्ट हुआ था और अपनी २ बुद्धि के अनुसार सभी लोगों को इस लोपोपयोगी शास्त्र का यत्किञ्चित् ज्ञान भी अवश्य था। इसी लिये चीन, ग्रीक, मिश्र आदि सभी जातियां अपने को ज्योतिषशास्त्र का प्रवर्त्तक मानती हैं।

भारतीय प्राचीन विद्वानों ने ज्योतिष शास्त्र का सामान्यतः दो विभागों में विभक्त किया है। एक फलित और दूसरा सिद्धांत अथवा गणित। फलित के द्वारा ग्रह नक्षत्रादि की गति या सञ्चारादि देख कर प्राणियों की भावी दशा (अवस्था) और कल्याण तथा अकल्याण का निर्णय किया जाता है। दूसरे सिद्धान्त अथवा गणित के द्वारा स्पष्ट गणना कर के ग्रह नक्षत्रादि की गति, एवं संस्थानादि के नियम, उनका स्वभाव और तज्जन्य फलाफलों का स्पष्टीकरण किया जाता है। आंग्लेय विद्वान् फलित ज्योतिष को Astrology और गणित ज्योतिष को Astronomy कहते हैं। पर यहां एक बात मैं कहे देता हूं, गणितज्ञ फलितज्ञों को सदा उपेक्षा दृष्टि से देखते आये हैं। इस धारणा की पुष्टि में भारतीय गणकशिरोमणि डाकृर गणेशी जी का कथन है कि जन्मकालीन ग्रहनक्षत्रादि की स्थिति देख कर अमुक समय में हमें सुख और अमुक समय में दुःख होगा इसको जानना न कोई कष्टसाध्य बात है और न उससे कोई विशेष लाभ ही है। खैर, यह एक विवादास्पद विषय है, अतः यहाँ मैं इस विषय में विशेष उलझना नहीं चाहता हूं।

अब सामुद्रिक शास्त्र को लीजिये। सामुद्रिक भी फलित ज्योतिष का एक खास विभाग है। इस शास्त्र के द्वारा हस्त, पाद, और ललाट की रेखा एवं भिन्न २ शरीरस्थ चिह्न देख कर मनुष्य का भूत, भविष्य और वर्त्तमान काल सम्बन्धी शुभाशुभ फल जाना

जाता है। इस विद्या को अंग्रेजो में Palmispy अथवा Chiromaney कहते हैं। मुख्यतया हस्ताङ्कित रेखादि देख कर ही इस शास्त्र के द्वारा शुभाशुभ फलों का निर्देश किया जाता है। विद्वानों ने सामुद्रिक शास्त्र को अधिक महत्व क्यों दिया है, इसका खुलासा नीचे किया जाता है।

यद्यपि शरीर के प्रत्येक अङ्ग में शुभाशुभबोधक चिह्न विद्यमान हैं। किन्तु वे चिह्न विशेष रूप से स्पष्ट हथेली में ही पाये जाते हैं। स्वभावतः हस्त को विशेष महत्व देने का हेतु एक और भी है। हमारे सभी काम हाथ से ही होते हैं। मंगल और अमङ्गल कार्यों का करनेवाला यही है। अतः इसी हाथ पर शुभाशुभ चिह्नों का चित्रण करना उपयुक्त ही है। इसके साथ २ एक और भी बात है, अगर मनुष्य में इस विद्या का ज्ञान और अनुभव हो वह अपना हाथ स्वयं अन्य अंगों की अपेक्षा आसानी से देख सकता है। यह कार्य अन्य किसी अङ्ग से सुलभ नहीं हो सकता। इसी से हस्त की रेखा परिज्ञान के लिये विशेष स्थान प्राप्त है। विद्वानों का मत है कि इसके आविष्कारक होने का सौभाग्य भारत को ही प्राप्त है। यहाँ से चीन और ग्रीक में इस विद्या का प्रचार हुआ। पश्चात् ग्रीक से योरप के अन्यान्य भागों में यह विद्या फैली। ऐतिहासिक विद्वानों का यह भी अनुमान है कि ईसा के लगभग ३००० वर्ष पूर्व चीन में एवं २००० वर्ष पूर्व ग्रीक में इसका प्रचार हुआ। अतः निर्भ्रान्तरूप से यह जाना जा सकता है कि भारत में इसके पहले से ही इसका प्रचार रहा होगा। हाथ में जितनी ही कम रेखायें होंगी और हाथ साफ रहेगा वह पुरुष उतना ही अधिक भाग्यशाली समझा जाता है। हथैली के प्रधानतः सात रेखाओं पर ही विचार होता है। (१) पितृरेखा (२) मातृ-रेखा (३) आयूरेखा (४) भाग्यरेखा (५) चन्द्ररेखा (६) स्वास्थ्यरेखा और (७) धनरेखा। इनमें आदि के चार प्रधान हैं। इनके अतिरिक्त सन्तान, शत्रु, मित्र, धर्म, अधर्म आदि और भी कई रेखायें होती हैं। अस्तु इस विषय को यहां अधिक बढ़ाना अप्रासंगिक होगा।

अब मुझे यहां पर यह विचार करना है कि ग्रहों के शुभाशुभ फलकथन के सम्बन्ध में लोगों की क्या धारणा है। वैज्ञानिकों का कथन है कि मनुष्य अपने अपने कर्मानुसार ही समय समय पर सुखी या दुःखी हुआ करते हैं। उनके उस सुख-दुःख में सूर्य चन्द्रादि खगोल के ग्रह कारण नहीं हैं। हाँ, ग्रहों की स्थिति के अनुसार प्राणियों के भावी कल्याण या अकल्याण का अनुमान किया जा सकता है। ग्रहों के अनुसार भविष्य में विपत्ति की सम्भावना होने पर उसको दूर करने के लिये शान्ति का अनुष्ठान करने से प्राणियों को फिर उस विपत्ति का ग्रास नहीं होना पड़ता आदि।

अस्तु, वैज्ञानिकों का ग्रहफलसम्बन्धी यह मन्तव्य जैनधर्म के ग्रहफलसम्बन्धी मन्तव्यों

से सर्वथा मिलता है। विद्वानों का कथन है कि जैनधर्म एक वैज्ञानिक धर्म है। अतः उल्लिखित मन्तव्य की एकता मुझे तो नितान्त ही उचित जंचती है। किसी किसी ज्योतिषी का यह भी मत है कि अन्यान्य कारणों के समान ग्रहों का अवस्थान भी मानव के सुख-दुःख में अन्यतम कारण है। जो कुछ हो; ग्रहों की स्थिति से भी मनुष्यों को शुभाशुभ फलों की प्राप्ति होती है इससे तो सभी सहमत होंगे।

२—दिगम्बर जैन साहित्य में ज्योतिषशास्त्र का स्थान।

प्रथमानुयोगादि अनुयोगों में ज्योतिषशास्त्र को उच्च स्थान प्राप्त है। गर्भाधानादि अन्यान्य संस्कार एवं प्रतिष्ठा, गृहारंभ, गृहप्रवेश आदि सभी मांगलिक कार्यों के लिये शुभ मुहूर्त्त का ही आश्रय लेना आवश्यक बतलाया है। तीर्थङ्करों के पाँचों कल्याण एवं भिन्न भिन्न महापुरुषों के जन्मादि शुभमुहूर्त में ही प्रतिपादित है। जैन वैद्यक तथा मंत्रशास्त्र सम्बन्धी ग्रन्थों में भी मंगल मुहूर्त्त में ही औषध सम्पन्न एवं ग्रहण और शान्ति, पुष्टि, उच्चाटन आदि कर्मों का विधान है। कर्मकाण्ड-सम्बन्धी प्रतिष्ठापाठ आराधनादि ग्रन्थों में भी इस शास्त्र का अधिक आदर दृष्टिगोचर होता है। यहीं तक नहीं आद्याष्टकादि जो फुटकर स्तोत्र हैं उनमें भी ज्योतिष की जिक्र है। बल्कि नवग्रहपूजा अन्यान्य आराधना आदि ग्रन्थों ने ग्रहशान्त्यर्थ ही जन्म लिया है। मुद्राराक्षसादि प्राचीन हिंदू एवं बौद्ध ग्रंथों से भी जैनी ज्योतिष के विशेष विज्ञ थे यह बात सिद्ध होती है। प्रसिद्ध चीनी यात्री हुवेनच्वांग के यात्राविवरण से भी जैनियों की ज्योतिषशास्त्र की विशेषज्ञता प्रकटित होती है। उल्लिखित प्रमाणों से यह बात निर्विवाद सिद्ध होती है कि जैन साहित्य में ज्योतिष-शास्त्र कुछ कम महत्त्व का नहीं समझा जाता था।

३—दिगम्बर जैन ज्योतिष ग्रन्थ।

आयज्ञान तिलक आदि दो एक ग्रन्थ को छोड़ कर आज तक के उपलब्ध दिगम्बर जैन ज्योतिष ग्रन्थों में मौलिक ग्रन्थ नहीं के बराबर हैं। हां, संख्यापूर्त्ति के लिये जिनेन्द्रमाला, केवलज्ञानहोरा, अर्हन्तपासाकेवली, चन्द्रोन्मीलन प्रश्न आदि कतिपय छोटी मोटी कृतियाँ उपस्थित की जा सकती हैं। परन्तु इन उल्लिखित रचनाओं से न जैन ज्योतिष ग्रन्थों की कमी की पूर्त्ति ही हो सकती है और न जैन साहित्य का महत्त्व एवं गौरव ही व्यक्त हो सकता है। यही बात जैन वैद्यक के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है। सचमुच दर्शन, न्याय, व्याकरण, काव्य अलङ्कारादि विषयों से परिपूर्ण जैन साहित्य के लिये यह त्रुटि

विशेष खटकती है। हाँ, प्राकृत एवं संस्कृत साहित्य की अपेक्षा जैन कन्नड़ साहित्य ने इस विषय में कुछ आगे पैर पढ़ाया है अवश्य। फिर भी वह सन्तोषप्रद नहीं है, क्योंकि तद्विषयक वे ग्रन्थ संस्कृत ग्रन्थो की छायामात्र हैं। अर्थात् वहां भी मौलिकता की महक नहीं है। इस त्रुटि का कारण मुझे तो और ही प्रतीत होता है। जैन साहित्य में मौलिक ग्रन्थो के लेखक ऋषि महर्षि ही हुए हैं। साथ ही साथ जैन धर्म निवृत्तिमार्ग का प्रतिपादक सर्वोच्च लक्ष्य को लिये हुआ एक उत्कृष्ट धर्म है। इसी से ज्ञात होता है कि विषय-विरक्त एवं आध्यात्मिक रसिक उन ऋषि महर्षियों का ध्यान इन लौकिक ग्रन्थो की ओर नहीं गया। या उन्होने सोचा होगा कि हिन्दू वैद्यक तथा ज्योतिष ग्रन्थों से भी जिज्ञासु जैनियो का कार्य चल सकता है। क्योंकि धर्मविरुद्ध कुछ बातो को छोड़ कर हिन्दू एवं जैन वैद्यक तथा ज्योतिष ग्रन्थो में विशेष अन्तर नहीं पाया जाता है। कन्नड़ साहित्य के लेखक अधिक संख्या में गृहस्थ ही थे। अतः उनकी रुचि उस ओर अधिक आकृष्ट होना स्वाभाविक ही कहा जा सकता है। अस्तु फिर भी खोज करने पर इस विषय के मौलिक ग्रन्थ अवश्य ही उपलब्ध हो सकते हैं। अतः साहित्यप्रेमियों को इस कार्य की ओर अवश्य ध्यान देना चाहिये। खास कर कर्णाटक प्रांत के ग्रामों में खोज करने से इस सम्बन्ध में विशेष सफलता मिल सकती है।

४—प्रस्तुत ग्रन्थ जैन हैं ?

यह एक जटिल प्रश्न है। क्योंकि मंगलाचरण के अतिरिक्त इन दोनों (सामुद्रिक-शास्त्र तथा ज्ञानप्रदीपिका) ग्रन्थों में जैनत्व को व्यक्त करने वाली कोई खास बात नजर नहीं आती है। बल्कि जिसका मूल पाठ इस मुद्रित ग्रन्थ के प्रारम्भ में दिया गया है उस ज्ञानप्रदीपिका को तेलगु अक्षर में मुद्रित मैसोर की प्रति में हिन्दुत्वद्योतक ही मंगलाचरण मिलता है। हां, इन ग्रन्थों के अनुवादक सुयोग्य विद्वान् ज्योतिषाचार्य पं० रामव्यास जो प्रस्तुत ग्रन्थद्वय में अन्यतम सामुद्रिक शास्त्र के कर्त्ता—सम्बन्धी मेरे प्रश्नों के उत्तर में ता० २५-९-२९ के अपने पत्र में इस प्रकार लिखते हैं—"आप का पत्र मिला। उत्तर में विदित हो कि पुराणों के सामुद्रिक और इस में भेद है। फल दोनो से एक ही आता है; किन्तु इसकी उक्ति बढ़िया है। चाहे बात कहीं की हो लेकिन यह पुस्तक जैन-सिद्धान्तज्ञनिर्मित ही कही जायगी।"

ज्ञानप्रदीपिका के सम्बन्ध में भी इसी ज्योतिषाचार्यजी ने इस विशेष वक्तव्य के पहली दी हुई अपनी प्रस्तावना में निम्न प्रकार से लिखा है :—

"इस ग्रन्थ में स्थान स्थान पर की विशेषताओ के देखने से जान पड़ता है कि इस शास्त्र का विकास भी अन्य शास्त्रों की तरह जैनों में स्वतन्त्र और विलक्षणरूप में हुआ है।"

ज्ञानप्रदीपिका के सम्बन्ध में पण्डित जी के प्रतिपादित उक्त विचारों के अतिरिक्त "जैन मित्र" वर्ष २४ अङ्क १२ में प्रकाशित "केरल प्रश्नशास्त्र" शीर्षक लेख का कुछ अंश भी अन्वेषक विद्वानों के लाभार्थ निम्नाङ्कित किया जाता है :—

इस लेख में लेखक ने सम्वत् १६३१ में काशी से मुद्रित "केरल प्रश्नशास्त्र" नामक एक पुस्तक के कुछ वाक्यों को उद्धृत कर लिखा है कि ये वाक्य उमास्वामिकृत तत्त्वार्थ-सूत्र के हैं; अतः यह ग्रन्थ किसी जैनाचार्य का ही प्रणीत होना चाहिये। बल्कि अपनी इस धारणा को पुष्ट करने के लिये लेखक लिखते हैं कि इसी नाम का (केरल प्रश्नशास्त्र) एक और पुस्तक सम्वत् १६८० में वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई में प्रकाशित हुआ है। इसके रचयिता पं० नन्दराम हैं। पण्डित जी ने अपनी कृति के आरंभ में लिखा है कि "यद्यपि मिथ्या पण्डिताभिमानी श्वेताम्बरों के द्वारा एतद्विषयक बहुत से प्रबन्ध रचे गये हैं, परन्तु छन्द व्याकरणादि दोषों से दूषित वे प्रबन्ध अरम्य हैं। इसी लिये संक्षिप्त रूप में मैं इस ग्रन्थ की रचना करता हूँ।" यही पण्डित जी आगे फिर लिखते हैं कि "श्वेतवस्त्रधारी एवं बद्धास्य (मुंहढके हुए) ऐसे नास्तिक, कुब्ज, अन्ध, बधिर, वन्ध्या, विकलांग एवं कुष्ठादि रोगग्रस्त आदि व्यक्तियों को छोड कर ही अन्यान्य लोगों से पण्डित प्रश्न कहे।" बल्कि इन्होंने एक जगह यह भी लिखा है कि "श्वेताम्बर जैनों ने जो चन्द्रोन्मीलन नामक ग्रन्थ रचा है वह छन्द व्याकरणादि से दूषित है, अत यह विद्वन्मान्य नहीं हो सकता है"

इस ग्रन्थ की समाप्ति इन्होंने १८२४ आश्विन शुक्ल सप्तमी को की है। जैन मित्र के लेखक अन्त में लिखते हैं कि उपर्युक्त कथन से इस "केरल प्रश्न शास्त्र" के मूल लेखक श्वेताम्बर स्थानकवासी ही स्पष्ट सिद्ध होते हैं।

मैंने इस बात का उल्लेख यहाँ पर इसलिये कर दिया है कि इस ज्ञानप्रदीपिकाको मैसोर की प्रति के प्रारम्भिक पृष्ठ में 'ज्ञानप्रदीपिका' इस नाम के नीचे कोष्ठक में "केरलप्रश्नग्रन्थ" स्पष्ट मुद्रित है। परन्तु ज्ञानप्रदीपिका और जैनमित्र के उक्त लेखक के द्वारा प्रतिपादित केरल प्रश्न-शास्त्र ये दोनों एक नहीं कहे जा सकते, क्योंकि इस मुद्रित भवन की 'ज्ञान-प्रदीपिका' में कहीं भी तत्त्वार्थ-सूत्र के सूत्र या उनके भाग नहीं पाये जाते। हाँ, इससे इतना अवश्य ज्ञात होता है कि जैन विद्वानों ने केरल प्रश्नशास्त्र के नाम से भी एतद्विषयक ग्रन्थ रचा है। उल्लिखित कथन से यह भी ज्ञात होता है कि भारतीय अन्यान्य ज्योतिर्विदों के द्वारा केरल प्रश्न शास्त्र के नाम से कई ग्रन्थ रचे गये हैं। उक्त लेख से यह भी मालूम होता है कि ज्ञानप्रदीपिका और चन्द्रोन्मीलन इन दोनों के कर्त्ता श्वेताम्बर जैन हैं। किन्तु इस सम्बन्ध में जब तक कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता तब तक इसे श्वेताम्बर कृत निर्भ्रान्ति नहीं कहा जा सकता। क्योंकि दिगम्बर विद्वान् इसे दिगम्बर रचित ही मानते हैं।

खैर, श्वेताम्बर हो या दिगम्बर जैन साहित्य हो, इसे जैनीमात्र को अपनाना चाहिये। परन्तु यहाँ पर यह प्रश्न उठ सकता है कि मुद्रित वे ग्रन्थ अगर जैन हैं तो मंगलाचरण का परिवर्तन कैसे ? मंगलाचरण एवं अन्तरंग कलेवर को कुछ उलट-पुलट कर जैनेतर विद्वानों के द्वारा प्रकाशित त्रिविक्रमदेवकृत प्राकृतव्याकरणादि कुछ जैनग्रन्थ हमलोगों के सामने उपस्थित हैं, अतः संभव है कि उन्हीं की तरह इसमें भी कुछ उलट पलट कर दी गयी हो। राय बहादुर हीरालाल एम० ए० ने भी स्वसम्पादित "Catalogue of Sanskrit and Prakrit Manuscripts in the central province and Berar" नामक विस्तृत ग्रन्थसूची में इस ज्ञानप्रदीपिका को जैन ग्रन्थों में ही शामिल किया है।

अब इस सम्बन्ध में प्रस्तुत ग्रन्थों के अन्दर भी स्थूलदृष्टि से एकबार नजर दौड़ाना आवश्यक प्रतीत होता है।

"निर्दिष्टं लक्षणं चैव सामुद्रवचनं यथा"। (सा० शा० पृ० १ श्लोक ३)

"शतवर्षाणि निर्दिष्टं नारदस्य वचो यथा"। („ „ „ ४ „ २१)

"पुरुषत्रितयं हत्वा चतुर्थे जायते सुखम्"। („ „ „ १८ „ २७)

इसी प्रकार—"आदित्यारौ पुनर्भूः स्यात्प्रश्ने वैवाहिके वधूः"।

(ज्ञा० प्र० पृ० ४६ श्लोक १५ आदि)

मैं समझता हूँ कि उक्त श्लोकान्तर्गत कुछ सिद्धान्तों से कतिपय जैन विद्वान प्रस्तुत ग्रन्थों को जैनाचार्यों के द्वारा प्रणीत मानने को प्रायः तैयार नहीं होंगे। किन्तु इसीके उत्तर में अन्यान्य कई जैन विद्वानों का ही कहना है कि ज्योतिष, वैद्यक, मन्त्र, नीति आदि विषय लौकिक एवं सार्वजनिक हैं। अतः तद्विषयक वे ग्रन्थसर्वथा जैन दर्शन के अनुकूल ही नहीं हो सकते अर्थात् कुछ बातें प्रतिकूल भी हो सकती हैं। इस बातको पुष्ट करने के लिये वे विद्वान् भद्रबाहुसंहिता अर्हन्नीति आदि ग्रन्थों को उपस्थित करते हैं। उन्हीं विद्वानों का यह भी कहना है कि एतद्विषयक इन लौकिक ग्रन्थों में भिन्न भिन्न ग्रहों के योग से सुरापान-रती, वेश्या, भ्रष्टा, व्यभिचारिणी, परपुरुषगामिनी आदि होती हैं, ऐसा भी उल्लेख मिलता है। इससे यह बात सिद्ध होती है कि सार्वजनिक लौकिक ग्रन्थों में ये सब बातें उपलब्ध होना स्वाभाविक है। खैर, मतविभिन्नता सदा से चली आ रही है और चलती ही रहेगी। इस विषय में मुझे नहीं पड़ना है।

अब अन्वेषक विद्वानों से मेरी यही प्रार्थना है कि मेरे द्वारा उपस्थित की हुई प्रस्तुत ये सामग्रियाँ उक्त ग्रन्थ जैनाचार्य-प्रणीत निर्भ्रान्त सिद्ध करने के लिये पर्याप्त नहीं हैं, अतः वे इस सम्बन्ध में विशेष खोज करके सबल प्रमाणों को विद्वानों के सामने उपस्थित कर इस विषय को हल कर दें।

५—मूल ग्रन्थ तथा अनुवाद।

"श्रीजैन सिद्धान्त भवन" के सुयोग्य मंत्री एवं साहित्यसेवी जिनवाणीभक्त स्वर्गीय बाबू देवकुमार जी के आदर्श सुपुत्र श्रीमान् बाबू निर्मल कुमार जी के द्वारा अपने पूज्य पिता जी के स्मारक रूप में संचालित "श्रीदेवकुमार-ग्रन्थ-माला" में कतिपय मौलिक एवं लुप्तप्राय जैन वैद्यक तथा ज्योतिष ग्रन्थों का उद्धार करने की आप की उत्कट अभिलाषा चिरकाल से सञ्चित थी। किन्तु तत्सम्बन्धी कोई मौलिक ग्रन्थ उपलब्ध नहीं होने से अपनी उस प्रबल शुभेच्छा को उन्हें कुछ समय तक दबा रखना पड़ा। विशेष अन्वेषण करने पर भी जब कोई महत्त्वपूर्ण उद्दिष्ट ग्रन्थ प्राप्त नहीं हुआ। तब उन्होंने कहा कि इस समय भवन में रक्षित सामुद्रिक ज्ञानप्रदीपिका और चन्द्रोन्मीलन प्रश्न सम्मिलित इन्हीं ग्रन्थों को सानुवाद समाज के सामने समुपस्थित करना श्रेयस्कर होगा। बस, इसी निर्णयानुसार इन ग्रंथों के अनुवाद तथा संपादन का भार इस विषय के विशेषज्ञ एवं सुयोग्य विद्वान् ज्योतिषाचार्य पंडित रामव्यासजी पाण्डेय अध्यापक हिंदू विश्वविद्यालय बनारस को सौंपा गया। अवकाशाभाव के हेतु उक्त वे ग्रंथ दीर्घकाल तक उन्हीं के पास पड़े रहे। अंततोगत्वा 'चन्द्रोन्मीलन' को छोड़कर शेष दो ग्रंथ सानुवाद उनसे प्राप्त हो गये जो आप सबों के सम्मुख उपस्थित हैं। ज्योतिषाचार्य जी के कथनानुसार उक्त ग्रंथ उनसे विशेष अशुद्ध थे.अवश्य, फिर भी मैं यही कहूँगा कि पण्डित जी इनके सम्बन्ध में कुछ अधिक छानबीन करते तो ये ग्रंथ कुछ और ही आकार में आप सबों के सामने उपस्थित किये जाते। खेद की बात है कि मूल एवम् अनुवाद में बहुत सी त्रुटियां रह गयी हैं।

अस्तु, जिस समय इन ग्रन्थों को प्रकाशित करने का विचार पक्का हुआ तभी से इनकी अन्यान्य प्रतियों की खोज ढूंढ़ करने का क्रम जारी रहा। परन्तु अनेक ग्रन्थ भाण्डारों की सूचियाँ टटोल ने पर भी इस सामुद्रिक शास्त्र का पता कहीं भी नहीं लगा। हाँ, सौभाग्य से कारंजा एवं मैसोर राजकीय पुस्तकालय की ग्रन्थनामावली में ज्ञानप्रदीपिका का नाम दृष्टिगत हुआ। इसके बाद ही कारंजा के ग्रन्थभाण्डार के प्रबन्धक को दो पत्र दिये गये। पर खेद की बात है कि ग्रन्थ भेजना तो दूर रहा पत्रोत्तर तक नदारद। मैसोर से भी पहले कोई सन्तोषजनक पत्रोत्तर नहीं मिला। किन्तु भवनस्थित इसी अशुद्ध प्रति को ज्यों त्यों कर छप जाने के उपरान्त श्रीमान् श्रद्धेय न्यायतीर्थ प० शान्तिराज शास्त्रीजी की कृपा से केवल दो सप्ताह के लिये मैसोर की प्रति प्राप्त हो सकी। वह प्रति मुद्रित थी। इसी का मूल पाठ फिर पीछे छपाकर प्रारंभ में जोड़ दिया गया। भवन की प्रति से यह प्रति कुछ विशेष शुद्ध है। किन्तु जहाँ,पर मैसोर की प्रति में भी सन्देह जान पड़ा

वहाँ पर सन्दिग्ध पाठ को छोड़ कर भवन की प्रतिका या स्वतन्त्र शुद्ध पाठ रखने की ही चेष्टा की गयी है। इसी से मूल पाठ और अनुवाद में सर्वत्र एकीकरण होना असंभव है।

अस्तु मैं अब विज्ञ पाठको का विशेष समय नहीं लेना चाहता हूँ। आगे इस ग्रन्थ-माला में श्रीमान् बाबू निर्मल कुमार जी की शुभभावनानुकूल ही "वैद्यसार" "अकलङ्क-संहिता" (वैद्यक) "आयज्ञान-तिलक" (ज्योतिष) ये अपूर्व मौलिक जैन ग्रन्थ क्रमशः प्रकाशित होंगे। वैद्यसार का अनुवाद जारी है। इसके अनुवादक आयुर्वेदाचार्य पण्डित सत्यन्धर जी जैन काव्यतीर्थ छपारा हैं। आप का कहना है कि यह ग्रन्थ बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है और इसमें क़रीब डेढ सौ प्रयोग प्रातःस्मरणीय आचार्यप्रवर पूज्यपाद जी के हैं। इसका कुछ विशेष परिचय मुरादाबाद से प्रकाशित होने वाले सर्वमान्य पत्र "वैद्य" में शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

पूर्व निश्चयानुसार "चन्द्रोन्मीलन प्रश्न" ज्योतिष ग्रन्थ को भी प्रकाशित करने का विचार पहले था। परन्तु इसकी शुद्ध प्रति के अभाव से इस विचार को अभी स्थगित करना पड़ा।

अन्त में विज्ञ पाठकों से मेरा यही नम्र निवेदन है कि इस साहित्यसेवा कार्य में समुचित सहायता प्रदान कर इस ग्रन्थमाला के सञ्चालक श्रीमान् निर्मल कुमारजी का उत्साह बढ़ायेंगे कि जिससे समय समय पर भवन से उत्तमोत्तम ग्रन्थ रत्न प्रकाशित होता रहे।

* ॐ *

शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

भवन—फाल्गुन कृष्ण पञ्चमी रविवार
वि० सं० १९९० वीर सं० २४६०

साहित्य सेवक—
के० भुजबली शास्त्री
पुस्तकालयाध्यक्ष।

श्रीवीतरागाय नमः

ज्ञान-प्रदीपिका



(केरलप्रश्नग्रन्थः)

अथ उपोद्घातकाण्डः

श्रीमद्वीरजिनाधीशं सर्वज्ञं त्रिजगद्गुरुम् ।
प्रातिहार्याष्टकोपेतं प्रकृष्टं प्रणमाम्यहम् ॥१॥
स्थित्युत्पत्तिव्ययात्मीयां भारतीमार्हतीं सतीम् ।
अतिपूतामद्वितीयामहर्निशमभिष्टुवे ॥२॥
ज्ञानप्रदीपकं नाम शास्त्रं लोकोपकारकम् ।
प्रश्नादर्शं प्रवक्ष्यामि सर्वशास्त्रानुसारतः ॥३॥
भूतं भव्यं वर्त्तमानं शुभाशुभनिरीक्षणम् ।
पञ्चप्रकारमार्गञ्च चतुष्केन्द्रबलाबलम् ॥४॥
आरूढं छत्रवर्गञ्चाभ्युदयादिबलाबलम् ।
क्षेत्रं दृष्टिं नरं नारीं युग्मरूपं च वर्णकम् ॥ ५ ॥
मृगादिनररूपाणि किरणान्योजनानि च ।
आयूरसोदयाद्यं च परीक्ष्य कथयेद्बुधः ॥ ६ ॥
चरस्थिरोभयान् राशीन् तत्प्रवेशस्थलानि च ।
निशादिवससन्ध्याश्च कालदेशस्वभावकान् ॥ ७ ॥
धातुं मूलं च जीवं च नष्टं मुष्टिञ्च चिन्तनम् ।
लाभालाभौ गदं मृत्युं भुक्तं स्वप्नञ्च शाकुनम् ॥ ८ ॥
वैवाहिकविचारं च कामचिंतनमेव च ।
जातकर्मायुधं शल्यं कूपं सेनागमं तथा ॥ ९ ॥
सरिदागमनं वृष्टिमर्घ्यंनौसिद्धिमादितः ।
क्रमेण कथयिष्यामि शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके ॥ १० ॥

इति उपोद्घातकाण्डः

अथ आरूढछत्रः

अथ वक्ष्ये विशेषेण ग्रहाणां मित्रनिर्णयम् ।
भौमस्य मित्रे शुक्रज्ञौ भृगोर्ज्ञारार्किमन्त्रिणः ॥ १ ॥
अंगारकं विना सर्वे ग्रहमित्राणि मंत्रिणः ।
आदित्यस्य गुरुर्मित्रं शनेर्विद्गुरुभार्गवाः ॥ २ ॥
भास्करेण विना सर्वे बुधस्य सुहृदस्तथा ।
चंद्रस्य मित्रं जीवज्ञौ मित्रवर्ग उदाहृतः ॥ ३ ॥
सिंहस्याधिपतिः सूर्यः कर्कटस्य निशाकरः ।
मेषवृश्चिकयोर्भौमस्तुलावृषभयोस्सितः ॥ ४ ॥
धनुर्मीनयोर्मन्त्री तुलावृषभयोर्भृगुः ।
शनेर्मकरकुम्भौ च राशीनामधिपास्स्मृताः ॥ ५ ॥
धनुर्मिथुनपाठीनकन्योक्षाणां शनिः सुहृत् ।
रविश्चापान्त्ययोरारः तुलायुग्मोक्षयोषिताम् ॥ ६ ॥
कन्यामिथुनयोस्सौम्यश्शनिर्मकरकुम्भयोः ॥
धीषणो मीनधनुषोर्स्सिंहस्य दिनकृत्पतिः ॥७॥
कुलीरस्य निशानाथः चेत्राधिपतयः क्रमात् ।
कोदण्डमीनमिथुनकन्यकानां शशी सुहृत् ॥८॥
बुधस्य चापनक्रालिकर्ग्यजोक्षतुलाघटाः ।
क्रियामिथुनकोदण्डकुम्भालिमकरा भृगोः ॥९॥
गुरोः कन्यातुलाकुंभमिथुनोक्षमृगेश्वराः ।
राशिमैत्रं ग्रहाणाञ्च मैत्रमेवमुदाहृतम् ॥१०॥
सूर्य्येन्द्वोः परिधेर्जीवा धूमक्षशनिभोगिनाम् ।
शक्रचापकुजैणानां शुक्रस्योच्चास्त्वजादयः ॥११॥
अत्युच्चं दशमं वह्निर्मनुयुक् च तिथीन्द्रियैः ।
सप्तविंशतिकं विंशद्भागाः सप्तग्रहाः क्रमात् ॥१२॥
बुधस्य वैरी दिनकृत् चन्द्रादित्यौ भृगोररी ।
भौमस्य रिपवोभानोर्विना जीवं परेऽरयः ॥१३॥
गुरुसौम्यौ विना चेन्दो रवीन्द्ववनिजा ग्रहाः ।
बृहस्पते रिपुर्भौमः सितचंद्रात्मजौ विना ॥१४॥
शनेश्च रिपवः सर्वे तेषां तत्तद्ग्रहाणि च

रवेर्वणिगलिस्त्विन्दोः कुलीरोऽगारकस्य च ॥१५॥
ज्ञस्य मीनस्त्वजः सौरेः कन्या शुक्रस्य कथ्यते।
सुराचार्यस्य मकरस्त्वेतेषां नीचराशयः ॥१६॥
राहोर्वृषयुगं चेन्द्रधनुष्केण मृगेश्वराः।
परिवेषस्य कोदण्डः कुंभो धूमस्य नीचभूः ॥१७॥
मित्रन्तुलानक्रकन्यायुग्मचापझषास्त्वहेः।
कुम्भक्षेत्रमहेः शत्रुः कुलीरो मृगराट्क्रियौ ॥१८॥
उदयादिचतुष्कन्तु जलकेन्द्रमुदाहृतम्।
तच्चतुर्थं चास्तमयं तत्तुर्यं वियदुच्यते ॥१९॥
तत्तुर्यमुदयञ्चैव चतुष्केन्द्रमुदाहृतम्।
चिन्तनेयं तु दशमे हिबुके स्वप्नचिंतनम् ॥२०॥
छत्रे मुष्टिं चयं नष्टमन्त्ये चारूढतोऽपि वा।
चापोक्षकर्किनक्रा ये ते पृष्ठोदयराशयः ॥ २१ ॥
तिर्यगदिनबलाः शेषा राशयो मस्तकोदयाः।
अर्काङ्गारकमन्दास्तु सन्ति पृष्ठोदयोदयाः ॥२२॥
उद्यतस्तीर्यगेवेन्दुकेतू तत्र प्रकीर्तितौ।
उदये बलिनौ जीवबुधौ तुं पुरुषौ स्मृतौ ॥२३॥
अन्ते चतुष्पदौ भानुभूमिजौ बलिनौ ततः।
चतुर्थे शुक्रशशिनौ जलराशौ बलोत्तरौ ॥२४॥
अर्क्यहौ बलिनौ चास्ते कीटकाश्च भवन्ति हि।
युग्मकन्याधनुःकुंभतुला मानुषराशयः ॥२५॥
द्वन्द्वोदयौ मीनमृगौ अन्ये सर्वे स्वभावतः।
चतुष्पादा मेषवृषौ सिंहचापौ भवन्ति हि ॥२६॥
कुलीराली बहुपादौ प्रक्षीणौ मृगमीनभौ।
द्विपादाः कुम्भमिथुनतुलाकन्या भवन्ति हि ॥२७॥
द्विपादा जीवविच्छुक्राः शन्यर्काराश्चतुष्पदाः।
शशिसर्पौ बहुपादौ शनिसौम्यौ च पाक्षणौ ॥२८॥
शशिसर्पौ जानुगती पद्भ्यां यान्तीतरे ग्रहाः।
उदीयन्तेऽजवीथ्यान्तु चत्वारो वृषभादयः ॥२९॥
युग्मवीथ्यामुदीयन्ते चत्वारो वृश्चिकादयः।

उक्तवीथ्यामुदीयन्ते मीनमेषतुलाः स्त्रियः ॥२०॥
राशिचक्रं समालिख्य प्रागादिवृषभादिकम् ।
प्रदक्षिणक्रमेणैव द्वादशारूढसंज्ञकम् ॥२१॥
वृषश्चैव वृश्चिकस्य मिथुनस्य शरासनम् ।
मकरस्तु कुलीरस्य सिंहस्य घट उच्यते ॥२२॥
मीनस्तु कन्यकायाश्च तुलाया मेष उच्यते ।
प्रतिसूत्रवशादेते परस्परनिरीक्षकाः ॥२३॥
गगनं भास्करः प्रोक्तो भूमिश्चन्द्र उदाहृतः ।
पुमान् भानुर्वधूश्चन्द्रः खचक्रप्राणवन्तविः (?) ॥२४॥
भूचक्रदेहश्चन्द्रः स्यादिति शास्त्रस्य निर्णयः ।
रवेः शुक्रः कुजस्यार्कः गुरोरिन्दुरहेर्बुधः ॥२५॥
ध्वजादिव्युत्क्रमेणैव तत्तत्कालं विनिर्दिशेत् ।

इत्यारूढछत्राः

अथ धातुचिन्ता

प्रष्टुरारूढभं ज्ञात्वा तद्वीथीमवलोक्य च ।
आरूढाद्यावती विधिस्तावती तूदयादिका ॥१॥
तद्राशिच्छत्रमित्युक्तं शास्त्रे ज्ञान-प्रदीपके ।
आरूढाद्भानुगां वीथीं परिगण्योदयादितः ॥२॥
तावता राशिना छत्रमिति केचित् प्रचक्षते ।
मेषस्य वृषभं छत्रं मेषच्छत्रं वृषस्य च ॥३॥
युग्मकर्कटसिंहानां मेषच्छत्रमुदाहृतम् ।
कन्याया वृषभं छत्रं तुलाया वृषभस्तथा ॥४॥
वृश्चिकस्य युगच्छत्रं धनुषो मिथुनं तथा ।
नक्रस्य मिथुनच्छत्रं युगः कुम्भस्य कीर्त्तितः ॥५॥
मीनस्य वृषभच्छत्रं छत्रमेवमुदाहृतम् ।
उदयात्सप्तमे पूर्णमर्धं पश्येत्त्रिकोणके ॥६॥
चतुरस्रे त्रिपादं च दशमे पाद एव च ।
एकादशे तृतीये च पदार्धं वीक्षणं भवेत् ॥७॥
रवीन्दुसितसौम्यास्तु बलिनः पूर्णवीक्षणे ।

अर्धेक्षणे सुराचार्यस्त्रिपात्पादार्धयोः कुजः ॥८॥
पादेक्षणे बली सौरिः वीक्षणाद्बलमीरितम् ।
तिर्यक् पश्यन्ति तिर्यञ्चो मनुष्याः समदृष्टयः ॥९॥
ऊर्ध्वेक्षणः पत्ररथः अधोनेत्राः सरीसृपाः ।
अन्योन्यालोकितौ जीवचन्द्रौ ऊर्ध्वेक्षणो रविः ॥१०॥
पश्यत्यरः कटाक्षेण पश्यतोऽधः कवीन्दुजौ ।
एकदृष्ट्याहिमंदौ च ग्रहाणामवलोकनम् ॥११॥
मेषः प्राच्यां धनुःसिंहावग्नावुक्षश्च दक्षिणे ।
मृगकन्ये च नैऋत्यां मिथुनः पश्चिमे तथा ॥१२॥
वायुभागे तुलाकुम्भौ उदीच्यां कर्क उच्यते ।
ईशभागेऽलिमीनौ च क्रमान्नष्टादिसूचकाः ॥१३॥
अर्कशुक्रारराहर्किचन्द्रज्ञगुरवः क्रमात् ।
पूर्वादीनां दिशामीशाः क्रमान्नष्टादिसूचकाः ॥१४॥
मेषयुग्मधनुःकुम्भतुलासिंहाश्च पूरुषाः ।
राशयोऽन्ये स्त्रियः प्रोक्ता ग्रहाणां भेद उच्यते ॥१५॥
पुमांसोऽर्कारगुरवः शुक्रेन्दुभुजगास्त्रियः ।
मन्दज्ञकेतवः क्लीबा ग्रहभेदाः प्रकीर्त्तिताः ॥१६॥
तुलाकोदण्डमिथुना घटयुग्मं नराः स्मृताः ।
एकाकिनौ मेषसिंहौ वृषकर्क्यालिकन्यकाः ॥१७॥
एकाकिन्यः स्त्रियः प्रोक्ताः स्त्रीयुग्मं मकरान्तिमौ ।
एकाकिनोऽर्केन्दुकुजाः शुक्रज्ञार्काहिमन्त्रिणः ॥१८॥
एते युग्मग्रहाः प्रोक्ताः शास्त्रे ज्ञान-प्रदीपके ।
विप्राः कर्क्यालिमीनाश्च धनुःसिंहक्रिया नृपाः ॥१९॥
तुलायुग्मघटा वैश्याः शूद्रा नक्रोक्षकन्यकाः ।
नृपौ अर्ककुजौ विप्रौ बृहस्पतिनिशाकरौ ॥२०॥
बुधो वैश्यो भृगुः शूद्रो नीचावर्क्यभुजंगमौ ।
रक्ताः मेषधनुःसिंहाः कुलीरोक्षतुलाः सिताः ॥२१॥
कुम्भालिमीनाः श्यामाःस्युः कृष्णायुग्मांगना मृगाः ।
शुक्रः सितः कुजो रक्तः पिङ्गलाङ्गो बृहस्पतिः ॥२२॥
बुधः श्यामः शशी श्वेतः रक्तः सूर्योऽसितः शनिः ।
राहुस्तु कृष्णवर्णः स्यात् वर्णभेदा उदाहृताः ॥२३॥

चतुरस्रं च वृत्तश्च कृशमध्यं त्रिकोणकम् ।
दीर्घवृत्तं तथाष्टास्रं चतुरस्रायतं तथा ॥२४॥
दीर्घायेते क्रमादेते सूर्याद्या कृतयो मताः ।
पञ्चैकविंशद्विरयो नवाशा षोडशाब्धयः ॥२५॥
भास्करादिग्रहाणाञ्च किरणाः परिकीर्त्तिताः ।
वसुरुद्रस्तु रुद्राश्च वह्निषट्कं चतुर्दश ॥२६॥
विश्वर्तकश्च वेदाश्च चतुस्त्रिंशदजादिना ।
कुलीराजतुलाकुंभकिरणा वसुसंख्यकाः ॥२७॥
* मिथुनोक्षमृगाणाञ्च किरणा ऋतुसंख्यकाः ।
सिंहस्य किरणाः सप्त कन्याकार्मुकयोर्भवः ॥२८॥
चत्वारो वृश्चिकस्योक्ताः सप्तविंशो झषस्य च ।
सप्ताष्टशरवह्न्यद्रिरुद्रयुग्धाब्धिषड्वसु ॥२९॥
सप्तविंशतिसंख्यां च मेषादीनां परे विदुः ।
कुजेन्दुशनयो ह्रस्वा दीर्घा जीवबुधोरगा ॥३०॥
रविशुक्रौ समौ प्रोक्तौ शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके ।
आदित्यशनिसौम्यानां योजनान्यष्टसंख्यया ॥३१॥
शुक्रस्य षोडषोक्तानि गुरोश्च नवयोजनम् ।
कुजस्य सप्त विख्याताः शशांकस्यैकयोजनम् ॥३२॥
भूमिजः षोडशवयाः शुक्रः सप्तवयास्तथा ।
विंशद्वयाश्चन्द्रसुतः गुरुस्त्रिंशद्वयाः स्मृतः ॥३३॥
शशांकः सप्ततिवया पञ्चाशद्भास्करस्य वै ।
शनैश्चरस्य राहोश्च शतसंख्यं वयो भवेत् ॥३४॥
तिक्तं शनैश्चरो राहुः मधुरस्तु बृहस्पतेः ।
आम्लं भृगोर्विधोः क्षारं कुजस्य क्रूरजा रसाः ॥३५॥
तवरः सोमपुत्रस्य भास्करस्य कटुर्भवेत् ।
सौम्यार्ककुजजीवानां दक्षिणे लाञ्छनं भवेत् ॥३६॥
फणीन्दुशुक्रमंदानां वामे भवति लाञ्छनम् ।
शुक्रस्य वदने पृष्ठे कुजस्यांसे बृहस्पतेः ॥३७॥
कक्षे बुधस्य चन्द्रस्य मूर्ध्नि भानोः कटीतटे ।
ऊरौ शनेः पदे राहो लाञ्छनानि भवन्ति हि ॥३८॥

* यह पङ्क्ति तथा इसी तरह की कई पङ्क्तियां मैसोर की प्रति में नहीं हैं

बुधादित्यौ भग्नशृङ्गौ चंद्रः शृङ्गविवर्जितः।
तीक्ष्णशृङ्गः कुजो दीर्घशृङ्गौ जीवकवी तथा ॥३६॥
शनिराहू भग्नशृङ्गौ शृङ्गभेद उदाहृतः।
वृषसिंहालिकुंभाश्च तिष्ठन्ति स्थिरराशयः ॥४०॥
कर्किनक्रतुलामेषाश्चरन्ति चरराशयः।
युग्मकन्याधनुर्मीनराशय उभयराशयः ॥४१॥
धनुर्मेषौ वनप्रांते कन्यकामिथुनं पुरे।
हरिर्गिरौ तुलामीनमकराः सलिलेषु च ॥४२॥
नद्यां कुलीरः कुल्यायां वृषकुंभौ पयोघटे।
वृश्चिकः कूपसलिले राशीनां स्थितिरीरिता ॥४३॥
वनकेदारकोद्यानकुल्याद्रिवनभूमयः।
आपगातीरसद्वापी तड़ाकाः सरितस्तथा ॥४४॥
जलकुम्भश्च कूपश्च नष्टद्रव्यादिसूचकाः।
घटकन्यायुग्मतुला ग्रामेऽजालिधनुर्हरिः ॥४५॥
वने देशे कुलीरोक्षौ नक्रमीनौ जलस्थितौ।
विपिने शनिभौमारा भृगुचंद्रौ जले स्थितौ ॥४६॥
बुधजीवौ तु नगरे नष्टद्रव्यादिसूचकौ।
भौमो भूमिर्जले काव्यशशिनौ बुधभोगिनौ ॥४७॥
निष्कुटश्चैव रन्ध्रञ्च गुरुभास्करयोर्नभः।
मन्दस्य वनभूमिश्च बलोत्तरखगस्थितौ ॥४८॥
सूर्याङ्गारबलं भूमौ गुरुशुक्रबलन्तु खे।
चन्द्रसौम्यबलं मध्ये केश्चिदेवमुदाहृतम् ॥४६॥
निशादिवससन्ध्याश्च भानुयुग्राशिमादितः।
चरराशिवशादेवमिति केचित्प्रचक्षते ॥५०॥
ग्रहेषु बलवान् यस्तु तद्वशात्कालमीरयेत्।
शनेर्वर्षं तदर्धंस्याद्भानोर्मासद्वयं विदुः ॥५१॥
शुक्रस्य पक्षो जीवस्य मासो भौमस्य वासरः।
इन्दोर्मुहूर्त्तमित्युक्तं ग्रहाणां बलतो वदेत् ॥५२॥
एतेषां घटिका प्रोक्ता उच्चस्थानजुषां क्रमात्।
स्वगृहेषु दिनं प्रोक्तं मित्रभे मासमादिशेत् ॥५३॥
शत्रुस्थानेषु नीचेषु वत्सरानादुरुत्तमान्।

सूर्यारजीवविच्छुक्रशनिचन्द्रभुजङ्गमाः ॥५४॥
प्रागादिदिक्षु क्रमशश्चरेयुर्यामसंख्यया ।
प्रागादीशादिशः स्वस्ववारेशाद्या भवन्ति हि ॥५५॥
प्रभाते प्रहरे चाद्ये द्वितीयेऽग्न्यादिकोणतः ।
एवं याम्यतृतीये च क्रमेण परिकल्पयेत् ॥५६॥
भूतं भव्यं वर्तमानं वारेशाद्या भवन्ति च ।
रव्यग्निनिधिषट्केषु मुनिव्योमाम्बुभूषु च ॥५७॥
वस्वायशरयुग्मेषु चारूढे चोदयात्क्रमात् ।
भूतञ्च वर्तमानञ्च भविष्यत्कर्कमादिशेत् ॥५८॥
तद्दिने चन्द्रयुक्तर्क्षं यावद्भिर्ल्दयादिकम् ।
तावद्भिर्वासरैः सिद्धं केचिदंशाधिपाद्विदुः ॥५९॥
सूर्यस्योदयमारभ्य सार्द्ध द्विघटिकाः क्रमात् ।
यल्लग्नं तत्र दृश्येत तल्लग्नेन फलं भवेत् ॥६०॥
प्रश्ननाडीर्विनिश्चित्य सार्द्ध द्विघटिका क्रमात् ।
वृषादिगणयेद्धीमान् यल्लग्नं तद्वशात्फलम् ॥६१॥
प्रश्ने निश्चित्य घटिकाः सार्द्ध द्विघटिकाः क्रमात् ।
सार्द्ध द्विनाड़िपर्यन्तमर्कलग्नं प्रवर्त्तते ॥६२॥
तद्यथा काललग्नं तु ज्ञात्वा पूर्वादिकं न्यसेत् ।
तद्वशात्प्रष्टुरारूढं ज्ञात्वा चारूढकेश्वरान् ॥६३॥
आरूढाधिपतिर्यत्र प्रभाते नष्टनिर्गमः ।
मेषकर्कितुलानक्राश्चत्वारो धातुराशयः ॥६४॥
कुंभसिंहालिवृषभाः श्रूयन्ते मूलराशयः ।
धनुर्मीननृयुक्कन्या राशयो जीवसंज्ञकाः ॥६५॥
कुजेन्दुसौरिभुजगा धातवः परिकीर्तिताः ।
मूलं भृगुदिनाधीशौ जीवौ धिषणसौम्यजौ ॥६६॥
स्वक्षेत्रभानुरुश्चन्द्रो धातुरन्यत्र पूर्ववत् ।
स्वक्षेत्रभानुजो मूलं स्वक्षेत्रे धातुरिन्दुजः ॥६७॥
ताम्रो भौमस्त्रपुर्शश्च काञ्चनं धिषणो भवेत् ।
रौप्यं शुक्रः शशी कांस्यः अयसं मन्दभोगिनौ ॥६८॥
भौमार्कमन्दशुक्रास्तु स्वस्वलोहस्वभे स्थिताः ।
चन्द्रज्ञगुरवः स्वस्वलोहाः स्वक्षेत्रमित्रगाः ॥६९॥

मिश्रे मिश्रफलं ब्रूयात् ग्रहाणाञ्च बलं क्रमात् ।
शिलां भानोर्बुधस्याहुः मृत्पात्रं तूषरं विधोः ॥७०॥
सितस्य मुक्तास्फटिके प्रवालं भूसुतस्य च ।
अयसं भानुपुत्रस्य मन्त्रिणः स्यान्मनःशिला ॥७१॥
नीलं शनेश्च वैडूर्यं भृगोर्मरकतं विदुः ।
सूर्यकान्तो दिनेशस्य चन्द्रकान्तो निशापतेः ॥७२॥
तत्तद्ग्रहवशाद्वर्णं तत्तद्राशिवशादपि ।
बलाबलविभागेन मिश्रे मिश्रफलं वदेत् ॥७३॥
नृराशौ नृखगैर्दृष्टे युक्ते वा मर्त्यभूषणम् ।
तत्तद्राशिवशादन्ये तत्तद्रूपं विनिर्दिशेत् ॥७४॥

इति धातुचिन्ता

अथ मूलकाण्डः

मूलचिन्ताविधौ मूलान्युच्यन्ते मूलशास्त्रतः ।
क्षुद्रसस्यानि भौमस्य सस्यानि बुधशुक्रयोः ॥१॥
कक्षाणि ज्ञस्य भानोश्च वृक्षश्चन्द्रस्य वल्लरी ।
गुरोरिक्षुर्भृगोश्चिञ्चा भूरुहाः परिकीर्तिताः ॥२॥
शनिधूमोरगाणाञ्च तिक्तकण्टकभूरुहाः ।
अजालिक्षुद्रसस्यानि वृषकर्कितुलालता ॥३॥
कन्यकामिथुने वृक्षाः कण्टकद्रुर्घटे मृगे ।
इक्षुर्मीनक्रमाच्चैव केचिदाहुर्मनीषिणः ॥४॥
अकण्टकद्रुमाः सौम्याः क्रूराः कण्टकभूरुहाः ।
युग्मकण्टकमादित्यो भूमिजो ह्रस्वकण्टकः ॥५॥
वक्राश्च कण्टकाः प्रोक्ताः शनैश्चरभुजंगयोः ।
पापग्रहाणां क्षेत्राणि तथाकण्टकिनो द्रुमाः ॥६॥
शिष्टकक्षाणि सौम्यस्य भृगोर्निष्कण्टकद्रुमाः ।
कदली चौषधीशस्य गिरिवृक्षा विवस्वतः ॥७॥
बृहत्पत्रयुता वृक्षा नारिकेलादयो गुरोः ।
तालाशनेश्च राहोश्च सारासारौ तरू वदेत् ॥८॥

सारहीनाः शनीन्द्वर्का अन्तस्सारौ कवीज्यकौ ।
बहिस्साराः स्वराशिस्थशनिज्ञकुजपन्नगाः ॥६॥
अन्तस्साराः स्वराशिस्था बहिस्सारास्तदन्यके ।

इति मूलकाण्डः

अथ मूलधातुकाण्डः

त्वक्कन्दपुष्पच्छदनफलपक्वफलानि च ।
मूलं लता च सूर्याद्याः स्वस्वक्षेत्रेषु ते तथा ॥१॥
मुद्गं ज्ञस्याढकः श्वेतः भृगोश्च चणकं कुजः ।
तिलं शशांको निष्पावं रविर्जीवोऽरुणाढकं ॥२॥
माषं शनिभुजंगौ च तथान्यत् धान्यमुच्यते ।
प्रियंगुर्भूमिपुत्रस्य बुधस्य व्रीहयः स्मृताः ॥३॥
स्वस्वरूपानुरूपेण तेषां धान्यानि निर्दिशेत् ।
उन्नते भानुकुजयोर्वल्मीके बुधभोगिनौ ॥४॥
सलिले चन्द्रसितयोः गुरोः शैलतटे तथा ।
शनेः कृष्णशिला स्थाने मूलान्येतानि भूमिषु ॥५॥
वर्ण रसं कुलं रत्नमायसं चोक्तमूलिका ।
पत्रं फलं पक्वफलं त्वङ्मूलं पूर्वभाषितम् ॥६॥
ग्रहोक्तमालिकां ज्ञात्वा कथयेदुदयादिभिः ।

इति मूलधातुकाण्डः

अथ पञ्चभूतकाण्डः

चन्द्रो माता पितादित्यः सर्वेषां जगतामपि ।
गुरुशुक्रारमन्दज्ञाः पञ्च भूतस्वरूपिणः ॥१॥
श्रोत्रत्वक्चक्षूरसनाघ्राणाः पञ्चेन्द्रियाण्यमी ।
शब्दस्पर्शौ रूपरसौ गन्धश्च विषया अमी ॥२॥
ज्ञानं गुर्वादिपञ्चानां ग्रहाणां कथयेत् क्रमात् ।
गुरोः पञ्च भृगोश्चाब्धिः ज्ञस्य द्वित्रिः कुजस्य च ॥३॥
एकं ज्ञानं शनेरुक्तं शास्त्रे ज्ञान-प्रदीपके ।

बुधवर्गा इमे प्रोक्ताः शंखशुक्तिवराटकाः ॥४॥
मत्कुणाः शिथिलीयूकमक्षिकाश्च पिपीलिकाः ।
भौमवर्गा इमे प्रोक्ताः षट्पदा ये भृगोस्तथा ॥५॥
देवा मनुष्याः पशवो भुजंगविहगा गुरोः ।
तथैकज्ञानिनो वृत्ताः शनिवर्गाः प्रकीर्त्तिताः ॥६॥
एकद्वित्रिचतुःपञ्चगगनादिगुणाः स्मृताः ।
देहो जीवस्सितो जिह्वा बुधोनासेक्षणं कुजः ॥७॥
श्रोत्रं शनैश्चरश्चैव ग्रहावयव ईरितः ।
द्विपाच्चतुष्पाद्बहुपाद्विहगा जानुगाः क्रमात् ॥८॥
शङ्खशम्बूकसन्धांश्च पादहीनान् विनिर्दिशेत् ।
यूकमत्कुणमुख्याश्च बहुपादा उदाहृताः ॥९॥
गोधाः कमठमुख्याश्च तथा चंक्रमणोचिताः ।

इति पञ्चभूतकाण्डः

——:※:——

अथ पक्षिकाण्डः

मृगमीनौ तु खचरौ तत्रस्थौ मन्दभूमिजौ ।
वनकुक्कुटकाकौ च चिन्तिताविति कीर्तयेत् ॥१॥
तद्राशिस्थे भृगौ हंसः शुक्रः सौम्ये विधौ शिखी ।
वीक्षिते च तदा ब्रूयात् ग्रहे राशौ विचक्षणः ॥२॥
तद्राशिस्थे रवौ तेन दृष्टे ब्रूयात्खगेश्वरम् ।
बृहस्पतौ सितबको भारद्वाजस्तु भोगिनि ॥३॥
कुक्कुटो ज्ञस्य शुक्रस्य दिवान्धः परिकीर्त्तितः ।
अन्यराशिस्थखेटेषु तत्तद्राशिफलं भवेत् ॥४॥
सौम्ये खेटेऽण्डजाः सौम्या क्रूराः क्रूरग्रहैः खगाः ।

इति पक्षिकाण्डः

——:※:——

अथ मनुष्यकाण्डः

उच्चराश्युदये सूर्ये दृष्टे भूपास्तदाश्रिताः ।
उच्चस्थाने स्थिते राजा नेता स्वक्षेत्रगे स्थिते ॥१॥

राजाश्रितो मित्रभस्ते वीक्षिते समभे भटः ।
चरराश्युदये सूर्ये नृपाद्याश्च बलान्विते ॥२॥
अन्यराशिषु युक्ते वा दृष्टे वा संकरान्वदेत् ।
कांस्यकारः कुलालश्च कांसविक्रयिणस्तथा ॥३॥
शंखच्छिदो धातुचूर्णान्वेक्षिणश्चूर्णकारिणः ।
नृराशौ जीवदृष्टे वा भानुवद्ब्राह्मणोदयः ॥४॥
कुजयुक्तेऽथवा दृष्टे तत्तद्रूपात्तपस्विनः ।
बुधयुक्तेऽथवा दृष्टे तत्तद्ब्रूयात्तपस्विनः ॥५॥
तद्वच्छुक्रेषु वृषलान् शंकरान् शशिभोगिनः ।
किञ्चिदस्मिन् विशेषोऽस्ति जनहारकशंकरः ॥६॥
चन्द्रस्य भिषजो ज्ञस्य वैश्यश्चौरगणाः स्मृताः ।
राहोर्गरदचाण्डालस्तस्कराः परिकीर्त्तिताः ॥७॥
शनेस्तरुच्छिदः प्रोक्ताः राहोर्धीवरजालिनः ।
शंखच्छेदी नटः कारुनर्तकः शिल्पिनस्तथा ॥८॥
चूर्णकृन्मौक्तिकग्राही शुक्रस्य परिकीर्त्तितः ।
तत्तद्राशिवशाज्जातिस्तत्तद्राशिगतैर्ग्रहैः ॥९॥
तत्तद्राशिस्थखेटानां बलात्तु नष्टनिर्गमौ ।

इति मनुष्यकाण्डः

अथ मृगादिजीवकाण्डः

मेषराशिस्थिते भौमे मेषमाहुर्मनीषिणः ।
तस्मिन्नर्के स्थिते व्याघ्रं गोलाङ्गूलं बुधे स्थिते ॥१॥
शुक्रे गौर्वृषभश्चन्द्रे गुरावश्वः तत परम् ।
महिषी सूर्यतनये फणौ गवय उच्यते ॥२॥
वृषभस्थे भृगौ धेनुः कुजेऽन्यं कुरुदाहृतः ।
बुधे कपिर्गुरावश्वः शशांके धेनुरुच्यते ॥३॥
आदित्ये शरभः प्रोक्तो महिषी शनिसर्पयोः ।
कर्किस्थे च करो भौमे महिषी नक्रगे कुजे ॥४॥
वृषभस्थे हरिर्युग्मकन्ययोः श्वा च फेरवः ।

हरिस्थे भूमिजे व्याघ्रं रवीन्द्वोस्तत्र केशरी ॥५॥
शुक्रे श्वा वासरः सौम्ये त्वन्ये स्वाकृतयो मृगाः ।
तुलागते भृगोर्वत्सश्चन्द्रे गौः परिकीर्त्तिता ॥६॥
धनुः स्थितेषु जीवेन्दुकुजेषु तुरगो भवेत् ।
मन्दादित्यस्थितौ तत्र मतङ्गज उदाहृतः ॥७॥
सर्पस्थे तत्र महिषो वानरो बुधशुक्रयोः ।
शुक्रामृतांशुसौम्येषु स्थितेषु पशुरुच्यते ॥८॥
जीवार्किभुजगे गर्भं वन्ध्या स्त्री च शनीक्षिते ।
अंगारकेक्षिते शुक्रस्तत्र ज्ञात्वा वदेत् सुधीः ॥९॥

इति मृगादिजीवकाण्डः

अथ चिन्तनकाण्डः

वक्ष्येऽहं चिन्तनां सूक्ष्मां जनैस्तु परिचिन्तिताम् ।
धिषणे कुंभराशिस्थे त्रिकोणे वाथ पश्यति ॥१॥
मृगराजे स्थिते सौम्ये धनुषि वीक्षिते शुभे ।
स्मृतो गजस्ततो मीनधनुषि वीक्षिते शुभैः ॥२॥
स्मृतः कपिर्मेषगते भानौ ब्रूयान्मतङ्गजम् ।
कुजे मेषगते छागं बुधे नर्तकगायकान् ॥३॥
गुरुशुक्रदिनेशेषु वणिजं वस्त्रजीविनम् ।
चन्द्रे तथा वदेन्मन्दे सिंहस्थे रिपुचिन्तनम् ॥४॥
वृषस्थे महिषी तौले चक्रिणं वृश्चिके गदम् ।
मेषगे सूर्यतनये मृत्युः क्लेशादयस्तथा ॥५॥
मित्रादिपञ्चवर्गंश्च ज्ञात्वा ब्रूयात्पुरोक्तितः ।

इति चिन्तनकाण्डः

अथ धातुकाण्डः

धातुराशौ धातुखगे दृष्टे तच्छत्रसंयुते ।
धातुचिन्ता भवेत्तद्वत् मूलजीवौ तथा भवेत् ॥१॥

धात्वृक्षस्थे मूलखेटे जीवमाहुर्विपश्चितः ।
जीवराशौ धातुखगे दृष्टे वा जीवमूलका ॥२॥
मूलराशौ जीवखगे धातुचिन्ता प्रकीर्त्तिता ।
त्रिवर्गखेटकैर्दृष्टे युक्ते बलवशाद्वदेत् ॥३॥
पश्यन्ति चन्द्रं चेदन्ये वदेत्तत्तद्ग्रहाकृतिम् ।
धातुमूलञ्च जीवञ्च वंशं वर्णं स्मृतिं वदेत् ॥४॥
उदयारूढयोश्छत्रे ग्रहयोगेक्षणे तथा ।
ज्ञात्वा नष्टञ्च मुष्टिञ्च चिन्तनां क्रमशो वदेत् ॥५॥
कण्टकादिचतुष्केषु स्वोच्चमित्रग्रहैर्युते ।
दृष्टे वा सर्वकार्याणां सिद्धिं ब्रूयाच्च चिन्तनम् ॥६॥
उदये धातुचिन्तास्यादारूढे मूलचिन्तनम् ।
छत्रे तु जीवचिन्ता स्यादिति कैश्चिदुदाहृतम् ॥७॥
केन्द्रं फणपरं प्रोक्तमापो क्लीवं क्रमात्त्रयम् ।
चिन्ता तु मुष्टिनष्टानि कथयेत् कार्यसिद्धये ॥८॥

इति धातुकाण्डः

अथारूढकाण्डः

उदयारूढगे चन्द्रे न नष्टा शाश्वती स्थितिः ।
आरूढाद्दशमे वृद्धिश्चतुर्थे पूर्ववद्वदेत् ॥१॥
नष्टद्रव्यस्य लाभः स्याद्रोगहानिश्च सप्तमे ।
उदयाद्द्वादशे षष्ठे अष्टमारूढगे सति ॥२॥
चिन्तितार्थो न भवति धनहानिर्विषं फलम् ।
तनुं कुटुम्बं सहजं मातरं तनयं रिपुम् ॥३॥
कलत्रनिधनञ्चैव गुरुकर्मफलं व्ययम् ।
उदयादिक्रमाद्भावस्तस्य तस्य फलं वदेत् ॥४॥
रवीन्दुशुक्रजीवश्च नृराशिषु यदि स्थिताः ।
मर्त्यचिन्ता ततः शौरिदृष्टे नष्टं भवेत्तथा ॥५॥
कुजस्य कलहः शौरेस्तस्करं गलितं भवेत्

रविदृष्टेऽथवा युक्ते चिन्तना देवभूपतेः ॥६॥
शुभचिन्ता गुरौ ज्ञेया विवाहो गुरुशुक्रयोः।

इत्यारूढकाण्डः

—:*:—

अथ छत्रकाण्डः

द्वितीये द्वादशे छत्रे सर्वकार्यं विनश्यति।
गुरौ पश्यति युक्ते वा तत्र कार्यं शुभं वदेत् ॥१॥
तृतीयैकादशे छत्रे सर्वकार्यं शुभं भवेत्।
तस्मिन्पापयुते दृष्टे विनाशो भवति ध्रुवम् ॥२॥
तस्मिन् सौम्ययुते दृष्टे सर्वकार्यं शुभं वदेत्।
मिश्रे मिश्रफलं ब्रूयात् शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके ॥३॥
पञ्चमे नवमे छत्रे सर्वसिद्धिर्भविष्यति।
तद्वच्छुभाशुभे दृष्टे मिश्रे मिश्रफलं वदेत् ॥४॥
द्वितीये चाष्टमे षष्ठे द्वादशे छत्रसंयुते।
नष्टद्रव्यागमो नास्ति न व्याधिशमनं भवेत् ॥५॥
न कार्यसिद्धिर्नद्वेषशांतिग्रहवशाद्वदेत्।

इति छत्रकाण्डः

—o:*:o—

अथ उदयारूढकाण्डः

बृहस्पत्युदये श्रेयो धनं विजयमागमः।
द्वेषशांतिः सर्वकार्यसिद्धिरेव न संशयः ॥१॥
सौम्योदये रणोद्योगी जित्वा तद्धनमाहरेत्।
पुनरेष्यति सिद्धिः स्यात् छत्रसंदर्शने तथा ॥२॥
व्यवहारस्य विजयं छत्रेप्येवमुदाहृतम्।
चन्द्रोदयेऽर्थलाभश्चेत् प्रयाणे गमनं भवेत् ॥३॥
चिंतितार्थस्य सिद्धिःस्याच्छत्रारूढस्थितेऽपि च।
शुक्रोदयेऽर्थलाभः स्यात् स्त्रीलाभो व्याधिमोचनम् ॥४॥

जयाद्यान्त्यरयः स्वोहं छत्रारूढस्थितेऽपि वा।
उदयारूढछत्रेषु शन्यर्कांगारका यदि ॥५॥
अर्थनाशं मनस्तापं मरणं व्याधिमादिशेत्।
एतेषु फणियुक्तेषु वदेच्चौरभयं परम् ॥६॥
मरणं चैव दैवज्ञो न सन्दिग्धो वदेत्सुधीः।
निधनारिधनस्थेषु पापेष्वशुभमादिशेत् ॥७॥
एषु स्थानेषु केन्द्रेषु शुभाः स्युश्चेच्छुभं वदेत्।
तन्वादिभावा नश्यन्ति पापदृष्टियुतो यदि ॥८॥
शुभदृष्टियुतोवापि वृद्धिं भावा व्रजन्ति च।
मेषोदये तुलारूढे नष्टं द्रव्यं न सिध्यति ॥९॥

इति उदयारूढकाण्डः

अथ नष्टकाण्डः

तुलोदये क्रियारूढे नष्टसिद्धिर्न संशयः।
विपरीते न नष्टाप्तिर्वृषारूढेऽलिभोदये ॥१॥
नष्टसिद्धिर्महाल्लाभो विपरीते विपर्ययः।
चापारूढे नष्टसिद्धिर्भविता मिथुनोदये ॥२॥
विपरीते न सिद्धि स्यात् कर्कारूढे मृगोदये।
सिद्धिश्च विपरीते तु न सिध्यति न संशय ॥३॥
सिंहोदये घटारूढे नष्टसिद्धिर्न संशयः।
विपरीते न सिद्धिः स्यात् झषारूढेऽगनोदये ॥४॥
नष्टसिद्धिर्विपर्यासे दृष्टादृष्टे निरूपणम्।
स्थिरोदये स्थिरारूढे स्थिरच्छत्रे च सत्यपि ॥५॥
न मृतिर्न च नष्टश्च न रोगशमनं तथा।
द्विदेहवोधयारूढे छत्रे नष्टं न सिध्यति ॥६॥
न व्याधिशमनं शत्रोः सिद्धिर्विद्या न च स्थिरा।
चरराश्युदयारूढछत्रेषु यदि सिध्यति ॥७॥
नष्टसिद्धिश्च भवति व्याधिशान्तिश्च जायते।
सर्वागमनकार्याणि भवंत्येव न संशयः ॥८॥

ग्रहस्थितिबलेनैव सर्वं ब्रूयात् शुभाशुभम्।
चरोभयस्थिराः सौम्याः सर्वकामार्थसाधकाः ॥९॥
आरूढक्रूलग्नेषु क्रूरेष्वस्तं गतेषु च।
परेणापहृतं ब्रूयात् तत्सिध्यति शुभेषु च ॥१०॥
पञ्चमो नवमस्तेन नष्टलाभः शुभोदये।
येषु पापेन नष्टाप्तिरुदयादिति :केषु च ॥११॥
भ्रातृस्थानयुते पापे पञ्चमे वाऽशुभस्थिते।
नष्टद्रव्याणि केनापि दीयन्ते स्वयमेव च ॥१२॥
प्रश्नकाले शक्रचापे धूमेन परिवेष्टिते।
दृष्टनष्टं न भवति तत्तदाशासु तिष्ठति ॥१३॥
पृष्ठोदये शशांकस्थे नष्टं द्रव्यं न गच्छति।
तद्राशिः शनिदृष्टश्चेन्नष्टं व्योम्नि कुजेऽग्निना ॥१४॥
बृहस्पत्युदये स्वर्णं नष्टं नास्ति विनिर्दिशेत्।
शुक्रे चतुर्थके रौप्यं नष्टं नास्ति वदेद्ध्रुवम् ॥१५॥
सप्तमस्थे शनौ कृष्णलोहं नष्टं न जायते।
बुधोदये त्रपुर्नष्टं नास्ति चन्द्रे चतुर्थके ॥१६॥
कांसं नष्टं न भवति अंगना चैव सप्तमे।
आरे भानौ दशमगे ताम्रं रीतिर्न नश्यति ॥१७॥
दशमे पापसंयुक्ते न नष्टं च चतुष्पदम्।
चतुष्पादुदये राहौ स्थिते नष्टाश्चतुष्पदाः ॥१८॥
बन्धनस्था भवेयुस्ते तद्वद्द्विपदराशयः।
बहुपादुदये राहौ बहुपान्नष्टमादिशेत् ॥१९॥
पत्रिराशौ तथा नष्टे एतेषां बन्धमादिशेत्।
कर्कवृश्चिकयोर्लग्ने नष्टं सद्मनि कीर्त्तयेत् ॥२०॥
मृगमीनोदये नष्टं कपोतान्तरयोर्वदेत्।
कलशे भूमिजे सौम्ये घटे रक्तघटे गुरौ ॥२१॥
शुक्रे च करके भग्नघटे भास्करनन्दने।
आरनालघटे भानौ चन्द्रे लवणभाण्डके ॥२२॥
नष्टद्रव्याश्रितस्थानं सद्मनीति विनिर्दिशेत्।
पुंराशौ पुंग्रहैर्दृष्टे पुरुषस्तस्करो भवेत् ॥२३॥

स्त्रीराशौ स्त्रीग्रहैर्दृष्टे तस्करी च वधू भवेत् ।
उदयादोजराशिस्थे पुंग्रहे पुरुषो भवेत् ॥२४॥
समराश्युदये चोरी समस्तैः स्त्रीग्रहैर्वधूः ।
उदयारूढयोश्चैव बलाबलवशाद्वदेत् ॥२५॥
कर्किनक्रपुरंध्रीषु नष्टद्रव्यं न सिध्यति ।
तुलावृषभकुंभेषु नष्टद्रव्यन्तु सिध्यति ॥२६॥
जीवं विना सर्वखगे सप्तमस्थे न सिध्यति ।
पश्यन्ति ये ग्रहाश्चन्द्रं चौरास्तद्वत्स्वरूपिणः ॥२७॥
द्रव्याणि च तथैव स्युरिति ज्ञात्वा वदेत्सुधीः ।
यस्यामारूढपो याति तस्यां दिशि गतं वदेत् ॥२८॥
तत्तद्ग्रहांशुसंख्याभिस्तत्तत्संख्यादिनाडिकाः ।
भावाधिपवशादेव अन्यदृष्टिवशाद्वदेत् ॥२९॥
चन्द्रस्थानादुदयभं यावत्तावद्दिनं भवेत् ।
चरस्थिरोभयवशादेकद्वित्रिगुणान् वदेत् ॥३०॥

इति नष्टकाण्डः

—— :*: ——

अथ लाभालाभकाण्डः ।

सुवस्तुलाभं रम्यञ्च राष्ट्रं ग्रामं स्त्रिया यतिः ।
उपायनं स्वकार्याणि लाभालाभान् वदेत्सुधीः ॥१॥
उदयादित्रिकान् खेटाः पश्यन्त्युच्चेश्वरा यदि ।
चिन्तितार्थागमश्चैव स्त्रीलाभो राज्यसिद्धयः ॥२॥
तान्नीचद्विपदः खेटाः पश्यन्ति यदि नाशयेत् ।
एवं विवाहकार्याणां शुभाशुभनिरूपणम् ॥३॥
उदयारूढछत्राणि पश्यन्ति सुहृदो यदि ।
शत्रुर्मित्रत्वमायाति रिपुः पश्यति चेद्रिपुम् ॥४॥
उदयं चन्द्रलग्नं चेद्रिपुः पश्यति वा युतः ।
आयुर्हानी रिपुस्थाने गतश्चे द्रव्यधनं भवेत् ॥५॥
गतो नायाति नष्टं चेद्बहिरेव गतिं वदेत् ।
बलवच्चन्द्रजीवाभ्यां केन्द्रेषु सहितेषु च ॥६॥

नष्टप्रश्ने न नष्टं स्यात् मृत्युप्रश्ने न नश्यति ।
पापदृष्टियुते केन्द्रे भूयात्तस्य विपर्ययः ॥७॥
शत्रोरागमनं नास्ति चतुर्थे पापसंयुते ।
इति केन्द्रफलं सौम्याः स्थिताश्चेत्सर्वसिद्धयः ॥८॥
उदयारूढछत्रेषु केन्द्रेषु भुजगो यदि ।
दूरस्थितो न चायाति तत्र बद्धो भविष्यति ॥९॥
विषादिपीडा-प्रश्ने तु रोगिणां मरणं भवेत् ।
गमने चिन्तिते प्रष्टुर्नास्तीति कथयेद्बुधः ॥१०॥
प्रारब्धकार्यहानिश्च धनस्याहतिरीरिता ।
चन्द्राद्व्योमस्थिते शुक्रे जीवाद्व्योमस्थिते रवौ ॥११॥
तल्लग्ने कार्यसिद्धिः स्यात् पृच्छतां नात्र संशयः ।
उदयात्सप्तमे व्योम्नि शुक्रश्चेत् स्त्रीसमागमः ॥१२॥
धनागमश्च सौख्यश्च चन्द्रेऽप्येवं प्रकीर्तितम् ।
मित्रः स्वात्युच्चमायान्ति यदा खेटास्तथेष्टदाः ॥१३॥
नीचारिमूढमापन्नाः ॰ ॰ सर्वकार्यविनाशिनः ।

इति लाभालाभकाण्डः

अथ रोगकाण्डः ।

पूर्वशास्त्रानुसारेण मृत्युव्याधिनिरूपणम् ।
उदयात् षष्ठभे व्याधिः अष्टमे मृत्युरुच्यते ॥१॥
षष्ठारूढे व्याधिचिन्ता निधने मृत्युचिन्तनम् ।
तत्तद्ग्रहयुते दृष्टे व्याधिं मृत्युं वदेत् क्रमात् ॥२॥
पापनीचारयः खेटाः पश्यन्ति यदि संयुताः ।
न व्याधिशमनं मृत्युमविचार्य वदेत् सुधीः ॥३॥
एतयोश्चन्द्रभुजगौ तिष्ठतो यदि चोदये ।
गरादिना भवेद् व्याधिः न शाम्यति न संशयः ॥४॥
पृष्ठोदयर्क्षे तच्छत्रे व्याधिमोक्षो न जायते ।
व्याधिस्थानानि चैतानिमूर्धा वक्त्रं भुजः करः ॥५॥

वक्षःस्थलं स्तनौ कुक्षिः कटि-मूलं च मेहनम् ।
उरू पादौ च मेषाद्या राशयः परिकीर्त्तिताः ॥६॥

कुजो मूर्ध्नि मुखे शुक्रः कन्धरे भुजयोर्बुधः ।
चन्द्रो वक्षसि कुक्षौ च भानुर्नाभेरधोगुरुः ॥७॥

उर्वोः शनिराहिः पादे ग्रहाणां स्थानमीरितम् ।
स्थानेष्वेतेषु नष्टञ्च भवेदेतेषु राशिषु ॥८॥
पापयुक्तेषु दृष्टेषु नीचारिष्टेषु रुग्भवेत् ।
पश्यन्ति चेद्ग्रहाश्चन्द्रं व्याधिस्थानावलोकनम् ॥९॥
पूर्वोक्तमासवर्षाणि दिनानि च वदेत्सुधीः ।
षष्ठाष्टमे पापयुते रोगशान्तिर्न जायते ॥१०॥
षष्ठाष्टमे शुभयुते रोगः शाम्यति सर्वदा ।
कश्चित्तत्र विशेषोऽस्ति रोगमृत्युस्थले शुभम् ॥११॥
यावद्भिर्दिवसैर्यान्ति तावद्भिर्व्याधिमोचनम् ।
रोगस्थानं भवेदस्ते पापखेटयुते तथा ॥१२॥
तत्षष्ठे चन्द्रसंयुक्ते रोगिणां मरणं भवेत् ।
रोगस्थानं कुजः पश्येच्छिरोवेधो ज्वरं भवेत् ॥१३॥
भृगुर्विसूची सौम्यश्चेत् कक्षग्रन्थिर्भविष्यति ।
तथा चेदुदरव्याधिः शनिर्वातश्च पङ्गुता ॥१४॥
राहुर्विषं शशी पश्येन्नेत्ररोगो भविष्यति ।
मूलव्याधिगुरुः पश्येच्चन्द्रवत् स्याद्भृगोः परे ॥१५॥
परिधाविन्द्रकोदण्डे षष्ठे लग्ने युते क्षिते ।
कुष्ठव्याधिरिति ब्रूयात् धूमे भूताहतं भवेत् ॥१६॥
सर्वापस्मारमादित्ये पिशाचपरिपीडनम् ।
श्वासः काशश्च शूलश्च शनौ शीतज्वरं कुजे ॥१७॥
कार्मुके दण्डपरिधौ दृष्टे प्रश्ने तु रोगिणाम् ।
न व्याधिशमनं किञ्चिल्लग्नं पश्यन्ति चेत् शुभाः ॥१८॥
रोगशान्तिर्भवेच्छीघ्रं मित्रस्वात्युच्चसंस्थिताः ।
शिरोललाटे भ्रू नेत्रे नासाश्रुत्यधराःस्मृताः ॥१९॥
चिबुकश्चाङ्गुलिश्चैव कृत्तिकाद्युडवो नव ।
कण्ठवक्षःस्तनं चैवोदरमध्यनितम्बकाः ॥२०॥

शीर्षमन्दोरवः प्रोक्ता उत्तराद्या नवोडवः ।
जानुजंघापादसन्धिपृष्ठान्तस्तलगुल्फकम् ॥२१॥
पादाग्रं नखरांगुल्यो वैश्वाद्याश्चोडवो नव ।
उदयर्क्षवशादेवं ज्ञात्वा तत्र गदं वदेत् ॥२२॥
अंगनक्षत्रकं ज्ञात्वा नष्टद्रव्यं तथा वदेत् ।
त्रिकोणलग्नदशमे शुभश्चेद्व्याधयो नहि ॥२३॥
तेषु नीचारियुक्तेषु देहपीडा भवेन्नृणाम् ।

इति रोगकाण्डः

अथ मरणकाण्डः ।

मरणस्य विधानानि ज्ञातव्यानि मनीषिभिः ।
वृषस्य वृषभच्छत्रं सिंहच्छत्रं हरेर्भवेत् ॥१॥
अलिनो वृश्चिकच्छत्रं कुम्भच्छत्रं घटस्य च ।
उच्चस्थानमितिज्ञात्वा रूढेः स्यादुदये यदि ॥२॥
मरणं न भवेत्तस्य रोगिणो नात्र संशयः ।
तुलायाः कार्मुकच्छत्रं नीचोमृत्युर्विपर्यये ॥३॥
मेषस्य मिथुनच्छत्रं नीचोमृत्युर्विपर्यये ।
नक्रस्य मीनच्छत्रं च नीचोमृत्युर्विपर्यये ॥४॥
कन्याच्छत्रं कुलीरस्य नीचोमृत्युर्विपर्यये ।
नीचश्चेद्व्याधिमोक्षो न मृत्युर्मरणमादिशेत् ॥५॥
ग्रहेषु बलवान् भानुर्यदि मृत्युस्तदाग्निना ।
मन्दः क्षुधा जलेनेन्दुः शीतेन कविरुच्यते ॥६॥
बुधस्तुषारवाताभ्यां शस्त्रेणारो बली यदि ।
राहुर्विषेण जीवस्तु कुक्षिरोगेण नश्यति ॥७॥
विधोः षष्ठाष्टमे पापः सप्तमे वा यदि स्थितः ।
रोगमृत्युस्तुलाभ्यां वा रोगिणां मरणं भवेत् ॥८॥
आरूढान्मरणस्थानं तस्मादष्टमगः शशी ।
पापाः पश्यन्ति चेन्मृत्युं रोगिणां कथयेत्सुधीः ॥९॥

द्वितीये भानुसंयुक्ते दशमे पापसंयुते ।
दशाहान्मरणं ब्रूयात् शुक्रजीवौ तृतीयगौ ॥१०॥
सप्ताहान्मरणं ब्रूयात् रोगिणामह्नि बुद्धिमान् ।
उदये चतुरस्रे वा पापास्त्वष्टदिनान्मृतिः ॥११॥
लग्नद्वितीयगाः पापाश्चतुर्दशदिनान्मृतिः ।
लग्नद्विनिधने पापा दशमे पापसंयुते ॥१२॥
त्रिदिनान्मरणं किन्तु दशमे पापसंयुते ।
तस्मात्सप्तमगे पापे दशाहान्मरणं भवेत् ॥१३॥
निधनारूढगे पापे दृष्टे वा मरणं भवेत् ।
तत्तद्ग्रहवशादेवं दिनमासादिनिर्णयः ॥१४॥

इति मरणकाण्डः

—*—

अथ स्वर्गकाण्डः ।

ग्रहोच्चैः स्वर्गमायाति रिपौ मृगकुले भवः ।
नीचे नरकमायाति मित्रे मित्रकुलोद्भवः ॥१॥
स्वक्षेत्रे स्वजने जन्म मृतानां तु वदेत् सुधीः ।

इति स्वर्गकाण्डः

अथ भोजनकाण्डः ।

कथयामि विशेषेण भुक्तद्रव्यस्य निर्णयम् ।
पाकभाण्डानि युक्तानि व्यंजनानि रसं तथा ॥१॥
सहभोक्तन् भोजनानि तद्दातॄंस्ते हितान् रिपून् ।
मेषराशौ भवेच्छागं वृषभे गव्यमुच्यते ॥२॥
धनुर्मिथुनसिंहेषु मत्स्यमांसादिभोजनम् ।
नक्रालिकर्किमीनेषु फलभक्ष्यफलादिकम् ॥३॥
तुलाकन्याघटेष्वेवं शुद्धान्नमिति कीर्त्तयेत् ।
भानोस्तिक्तकटुक्षारमिश्रं भोजनमुच्यते ॥४॥

उष्णान्नक्षारसंयुक्तं भूमिपुत्रस्य भोजनम्।
भर्जितान्युपदं सौरेः सौम्यस्याहुर्मनीषिणः ॥५॥
पायसान्नं घृतैर्युक्तं गुरोर्भोजनमुच्यते।
भृगोर्नानारसयुतं शुद्धशाल्यन्नमीरितम् ॥६॥
सतैलं कोद्रवान्नञ्च प्राचीनान्नं शनेर्वदेत्।
राहोस्तुभिः सहान्नं स्याद्रसवर्ग उदाहृतः ॥७॥
जीवस्य माषवटकं नूनं मित्रस्य भोजनम्।
चन्द्रस्य कन्दप्रसवौ मत्स्याद्यैर्भोजनं भवेत् ॥८॥
क्षौद्रापूपपयोयुग्भिर्भोजनं व्यंजनैर्भृगोः।
ओजराशौ शुभैर्दृष्टे तृष्णया भोजनं भवेत् ॥९॥
समराशौ शुभैर्दृष्टे उष्णं स्वादु च भोजनम्।
ओजराशौ दुष्टदृष्टे दुष्टभोजनमादिशेत् ॥१०॥
समराशौ शुभैर्दृष्टे उष्णं स्वादु च भोजनम्।
समराशौ मन्दतृष्णो भुङ्क्तेऽल्पं पापवीक्षिते ॥११॥
केचित्पश्यन्ति पापश्चेत् पुराणान्नं क्षुधार्त्तितः।
अर्कारौ मांसभोक्तारौ उशनाश्चन्द्रभोगिनौ ॥१२॥
नवनीतघृतक्षीरदधिभिर्भोजनं भवेत्।
जलराशिषु पापेषु ससौम्येषूदितेषु च ॥१३॥
सतैलं भोजनं ब्रूयादिति ज्ञात्वा विचक्षणः।
पूर्वोक्तधातुवर्गेण भोजनानि विनिर्दिशेत् ॥१४॥
मूलवर्गेण शाकादीनुपदंशान् वदेद्बुधः।
जीववर्गेण भुक्त्वा च मत्स्यमांसादिकानपि ॥१५॥
सर्वमालोड्य निश्चित्य वदेन्नृणां विचक्षणः।

इति भोजनकाण्डः।

———:o:———

अथ स्वप्नकाण्डः।

स्वप्ने यानि च पश्यन्ति तानि वक्ष्यामि सर्वदा।
शिरोदये देवगृहं प्रासादादीन् प्रपश्यति ॥१॥

पृष्ठोदये दिनाधीशे विधौ मानुष्यदर्शनम् ।
मेषोदये दिनाधीशे ज्ञातदेहस्य दर्शनम् ॥२॥

वृषभस्योदयेऽर्कांशे व्याकुलान्मृतदर्शनम् ।
मिथुनस्योदये विप्रान् तपस्विवदनानि च ॥३॥

कुलीरस्योदये चेत्रं शस्यं दृष्ट्वा पुनर्गृहम् ।
तृणान्यादाय हस्ताभ्यां गच्छन्तीति विनिर्दिशेत् ॥४॥

सिंहोदये किरातञ्च महिषीं गिरिपन्नगम् ।
कन्योदयेऽपि चारूढे मुग्धस्त्रीकन्यकावधूः ॥५॥

तुलोदये नृपान् स्वर्णं वणिजश्च स पश्यति ।
वृश्चिकस्योदये स्वप्ने पश्यन्त्यलिमृगानपि ॥६॥

वृषाश्वौ च तथा ब्रूयात् स्वप्ने दृष्ट्वा न शंकितः ।
उदये धनुषः पश्येत् पुष्पं पत्रं फलाफले ॥७॥

मृगोदये नदीनारीपुंसः स्वप्नेषु पश्यति ।
कुम्भोदये च मकरं मीने स्वर्णं जलाशयम् ॥८॥

चतुर्थे तिष्ठति भृगौ राजतं वस्तु पश्यति ।
कुजश्चेन्मांसरक्तांश्च सशुक्रफलमंगनाः ॥९॥

मृगाः शनिश्चेत् सौम्यश्चेत् पशून् स्वप्ने तु पश्यति ।
आदित्यश्चेन्मृतान् पुंसः पतनं शुष्कशाखिनाम् ॥१०॥

चन्द्रश्चेत्प्लवनं सिन्धौ राहुमध्यविषं भवेत् ।
अत्र कश्चिद्विशेषोऽस्ति छत्रारूढोदयेषु च ॥११॥

शुक्रस्थितश्चेत् सुश्वेतसौधसौम्यामरान्वदेत् ।
चतुर्थस्य वशात्स्वप्नं ब्रूयात् ग्रहनिरीक्षणैः ॥१२॥

तत्रानुक्तं यदखिलं ब्रूयात् पूर्वोक्तवस्तुना ।

इति स्वप्नकाण्डः ।

अथ निमित्तकाण्डः।

अथोभयर्त्ते पथिको दुर्निमित्तानि पश्यति।
स्थिरोदये निमित्तानां विरोधेन न गच्छति ॥१॥
चरोदये निमित्तेन समायातीति निर्दिशेत्।
चन्द्रोदये दिवाभीतशशपारावतादयः ॥२॥
शकुनं भवता दृष्टमिति ब्रूयाद्विचक्षणः।
राहूदये तथा काकभारद्वाजादयः खगाः ॥३॥
मन्दोदये कुलिंगः स्यात् ज्ञोदये पिंगलस्तथा।
सूर्य्योदये च गरुड़ः शुक्रः सव्यवशाद्वदेत् ॥४॥
स्थिरराशौ स्थिरान् पश्येत् चरे तिर्य्यगतांस्तथा।
उभयेऽध्वनि वृद्धिः स्यात् ग्रहस्थितिवशाद्वदेत् ॥५॥
राहोर्गौलिर्विभोश्चात्र ज्ञस्य चूचुन्दरी भवेत्।
दधिशुक्रस्य जीवस्य क्षीरसर्पिरुदाहरेत् ॥६॥
भानोश्च श्वेतगरुड़ः शिवा भौमस्य कीर्त्तिता।
शनैश्चरस्य वह्निश्च निमित्तं दृष्टमादिशेत् ॥७॥
शुक्रस्य पक्षिणौ ब्रूयात् गमने शरटान् वकान्।
जीवकाण्डप्रकारेण पक्षिणोऽन्यान्विचारयेत् ॥८॥

इति निमित्तकाण्डः

अथ विवाहकाण्डः।

प्रश्ने वैवाहिके लग्ने कुजसूर्य्यावुभौ यदि।
वैधव्यं शीघ्रमायाति सा बधूर्नेति संशयः ॥१॥
उदये मन्दगे नारी रिक्ता मृतसुता भवेत्।
चन्द्रोदये तु मरणं दम्पत्योः शीघ्रमेव च ॥२॥
शुक्रजीवबुधा लग्ने यदि तौ दीर्घजीविनौ।
द्वितीयस्थे निशानाथे बहुपुत्रवती भवेत् ॥३॥
स्थिता यद्यर्कमन्दारा मनः शोको दरिद्रता।
द्वितीये राहुसंयुक्ते सा भवेत् व्यभिचारिणी ॥४॥

शुभग्रहा द्वितीयस्था माङ्गल्यायुष्यवर्द्धना ।
तृतीये रविराहू चेत्सा वन्ध्या भवति ध्रुवम् ॥५॥
अन्ये तृतीयराशिस्था धनसौभाग्यवर्द्धना ।
चतुर्थेऽर्कनिशानाथौ तिष्ठतो यदि पापिनौ ॥६॥
शनिश्च स्तन्यहीना स्यादहिः सा पत्नवत्यसौ ।
बुधजीवारशुक्राश्चेत् अल्पजीवनवत्यसौ ॥७॥
पंचमे यदि सौरिः स्याद् व्याधिभिः पीडिता भवेत् ।
शुक्रजीवबुधाः स्युश्चेद्बहुपुत्नवती भवेत् ॥८॥
चन्द्रादित्यौ तु वन्ध्या स्यात् अहिश्चेन्मरणं भवेत् ।
आरश्चेत्पुत्रनाशः स्यात् प्रश्ने पाणिग्रहोचिते ॥९॥
षष्ठे शशी चेद्विधवा बुधः कलहकारिणी ।
षष्ठे तिष्ठति शुक्रश्चेद्दीर्घमाङ्गल्यधारिणी ॥१०॥
अन्ये तिष्ठन्ति चेन्नारी सुखिनी वृद्धिमिच्छति ।
सप्तमस्थे शनौ नारी तरसा विधवा भवेत् ॥११॥
परेणापहृता याति कुजे तिष्ठति सप्तमे ।
बुधजीवौ सन्मतिः स्याद्राहुश्चेद्विधवा भवेत् ॥१२॥
व्याधिग्रस्ता भवेन्नारी सप्तमस्थो रविर्यदि ।
सप्तमस्थे निशाधीशे ज्वरपीड़ावती भवेत् ॥१३॥
शुक्रश्चेत्पुत्रसिद्धिः स्यात्सा वधूर्मरणं व्रजेत् ।
अष्टमस्था. शुक्रगुरुभुजगा नाशयन्ति च ॥१४॥
शनिज्ञौ वृद्धिदौ भौमचन्द्रौ नाशयतः स्त्रियम् ।
आदित्यारौ पुनर्भूः स्यात्प्रश्ने वैवाहिके वधूः ॥१५॥
नवमे यदि सोम स्यात् व्याधिहीना भवेद्वधूः ।
जीवचन्द्रौ यदि स्यातां बहुपुत्नवती वधूः ॥१६॥
अन्ये तिष्ठन्ति नवमे यदि वन्ध्या न संशयः ।
दशमे स्थानके चन्द्रो वन्ध्या भवति भामिनी ॥१७॥
भार्गवो यदि वेश्या स्यात् विधवार्किकुजावुभौ ।
रिक्ता गुरुश्चेज्ज्ञादित्यौ यदि तस्याः शुभं वदेत् ॥१८॥
लाभस्थानगताः सर्वे पुत्रसौभाग्यवर्द्धकाः ।
लग्नद्वादशगश्चन्द्रो यदि स्यान्नाशमादिशेत् ॥१९॥

शनिभौमौ यदि स्यातां सुरापानवती भवेत् ।
बुधः पुत्रवती जीवो धनधान्यवती वधूः ॥२०॥
सर्पादित्यौ स्थितौ वन्ध्या शुक्रे सुखवती भवेत् ।

इति विवाहकाण्डः ।

——:o:——

अथ कामकाण्डः ।

स्त्रीपुंसोपतिभेदाश्च स्नेहोऽस्नेहः पतिव्रता ।
शुभाशुभौ क्रमात्प्रोक्तौ शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके ॥१॥
पृच्छतामुदयारूढकेन्द्रेषु भुजगो यदि ।
तेषां दुष्टस्त्रियः प्रोक्ता देवानामप्यसंशय. ॥२॥
लग्नादेकादशस्थाने तृतीये दशमे शशी ।
जीवदृष्टियुतस्तिष्ठेत् यदि भार्या पतिव्रता ॥३॥
चन्द्रं पश्यन्ति पुंखेटास्तेन युक्ता भवन्ति चेत् ।
तद्भार्यां दुर्जनां ब्रूयादिति शास्त्रविदो विदुः ॥४॥
सप्तमस्थो द्विषत्खेटैर्दृष्टोनीचारिगः शशी ।
बन्धुविद्वेषिणी लोके भ्रष्टा सा तु शुभाशुभैः ॥५॥
भानुजीवौ निशाधीशं पश्यन्तौ वा युतौ यदि ।
पतिव्रता भवेन्नारी रूपिणीति वदेद्बुधः ॥६॥
शुक्रेण युक्तो दृष्टो वा भौमश्चेत्परभामिनी ।
बृहस्पतिर्बुधाराभ्यां युक्तश्चेत्कन्यकारतिः ॥७॥
शुक्रवर्गयुते भौमे भौमवर्गयुते भृगौ ।
पृच्छको विधवा भर्त्ता तस्या दोषो भवेद्ध्रुवम् ॥८॥
भानुवर्गयुते शुक्रे राजस्त्रीणां रतिर्भवेत् ।
जीववर्गयुते चन्द्रे स्नेहेन रतिमान् भवेत् ॥९॥
चन्द्रस्त्रिवर्गयुक्तश्चेत् स्त्री स्वातन्त्र्यवती भवेत् ।
पुंराशौ पुरुषैर्दृष्टे युक्ते वा पुरुषाकृतिः ॥१०॥
शनिश्चन्द्रेण युक्तश्चेदतीव व्यभिचारिणी ।
पापवर्गयुते दृष्टे शुक्रश्चेद्व्यभिचारिणी ॥११॥

अहिवर्गयुतश्चन्द्रो नीचस्त्रीभोगवान्भवेत् ।
मित्रवर्गयुतश्चन्द्रो मित्रवर्गवधूरतिः ॥१२॥
स्वक्षेत्रे यदि शीतांशुः स्वभार्यायां रतिर्भवेत् ।
उच्चवर्गयुतश्चन्द्रः स्वच्छवंशस्त्रियां रतिः ॥१३॥
उदासीनग्रहयुतो दृष्टोवा यदि चन्द्रमाः ।
उदासीनवधूभोगमितिप्राहुर्मनीषिणः ॥१४॥
लग्ने च दशमस्थेऽत्र पञ्चमे शनियुक् शशी ।
चोररूपेण कथयेत् रात्रौ स्वप्ने वधूरतिः ॥१५॥
ओजोदयस्तदधिपे ओजस्थे त्वेकमैथुनम् ।
समोदये तदधिपे समस्थे द्विस्त्रियो रतिः ॥१६॥
लग्नेश्वरबलं ज्ञात्वा तेषां किरणसंख्यया ।
अथवा कथयेत् द्विद्विसंदृष्टग्रहसंख्यया ॥१७॥
चन्द्रे भौमयुते दृष्टे कलहेन पृथक् शयः ।
भृगौ सौरियुते दृष्टे स्वस्त्रीकलह उच्यते ॥१८॥
चतुर्थे च तृतीये च पञ्चमे सप्तमेऽपि वा ।
चन्द्रे शुक्रयुते दृष्टे स्वस्त्रियो कलहो भवेत् ॥१९॥
तदीयवसनच्छेदं रचितं परिकीर्तयेत् ।
सप्तमे पापसंयुक्ते दशमे पापसंयुते ॥२०॥
तृतीये बुधसंयुक्ते स्त्रीविवादस्तले शयः ।
लग्ने चन्द्रयुते भौमे द्वितीयस्थे तथा निशि ॥२१॥
जागरश्चोरभीत्या च शशिनक्षत्रसन्धिषु ।
पृष्ठश्चेद्विधवाभोगमकरोदिति कीर्तयेत् ॥२२॥
तत्सन्धौ शुक्रसौम्यौ चेत् तत्तज्ज्ञातिपतिं वदेत् ।
यत्र कुत्रापि शशिनं पापाः पश्यन्ति चेत्तथा ॥२३॥
पुंसि न प्रीयति वधूः शुभश्चेत्पुरुषप्रिया ।
सात्विकाश्चन्द्रजीवार्का राजसौ भृगुसोमजौ ॥२४॥
तामसौ शनिभूपुत्रौ एवं स्त्रीपुंगणाः स्मृताः ।

इति कामकाण्डः ।

अथ पुत्रोत्पत्तिकाण्डः।

पुत्रोत्पत्तिनिमित्तेषु प्रश्ने स्त्रीभिः कृते सति।
छत्रारूढोदये जीवो राहुश्चेद्गर्भमादिशेत् ॥१॥
लग्नाद्वा चन्द्रलग्नाद्वा त्रिकोणे सप्तमेऽपि वा।
बृहस्पतिः स्थितो वापि यदि पश्यति गर्भिणी ॥२॥
शुभवर्गेण युक्तश्चेत् सुखप्रसवमादिशेत्।
अरिनीचग्रहैर्युक्ते सुतारिष्टं भविष्यति ॥३॥
प्रश्नकाले तु परिधौ दृष्टे गर्भवती भवेत्।
तदन्तस्थग्रहवशात् पुंस्त्रीभेदं वदेद्बुधः ॥४॥
यत्र तत्र स्थितश्चन्द्रः शुभयुक्ते तु गर्भिणी।
लग्नात्त्रिनवभूतेषु शुक्रादित्येन्दवः क्रमात् ॥५॥
तिष्ठन्ति चेन्न गर्भः स्यादेकत्रैते स्थितान् च।
स्त्रीपुंविवेके गर्भिण्यः पृष्टे वा तत्कालिके ॥६॥
परिवेषादिकैः दृष्टे तस्या गर्भो विनश्यति।
लग्नादोजस्थिते चन्द्रे पुत्रं सूते समे सुताम् ॥७॥
वशान्नक्षत्रराशीनां यथा योगं सुतं सुताम्।
लग्नतृतीयनवमे सप्तमैकादशेऽपिवा ॥ ८ ॥
भानुः स्थितश्चेत् पुत्रः स्यात्तथैव च शनैश्चरः।
ओजस्थानगताः सर्वे ग्रहाश्चेत्पुत्रसंभवः ॥९॥
समस्थानगताः सर्वे यदि पुत्री न संशयः।
आरूढात्सप्तमं राशिं यावच्छीतांशुरेष्यति ॥१०॥
तावन्नक्षत्रसंख्याकैः सा सूते दिवसे सुतम् ॥

इति पुत्रोत्पत्तिकाण्डः।

अथ सुतारिष्टकाण्डः।

सुतारिष्टमथो वक्ष्ये सद्यः प्रत्ययकारणम्।
लग्नषष्ठे स्थिते चन्द्रे तदस्ते पापसंयुते ॥१॥
मातुः सुतस्य मरणं किन्तु पञ्चमषष्ठयोः।

पापास्तिष्ठन्ति चेन्मातुर्मरणं भवति ध्रुवम् ॥२॥
पञ्चमे यदि पापाः स्युर्जातः पुत्रो विपद्यते ।
द्वादशे चन्द्रसंयुक्ते पुत्रवामाद्विनाशनम् ॥३॥
व्ययस्थे भास्करे नश्येत् पुत्रदक्षिणालोचनम् ।
पापाः पश्यन्ति भानुं चेत् पितुर्मरणमादिशेत् ॥४॥
चन्द्रेण युक्ते दृष्टे वा मातुर्मरणमादिशेत् ।
चन्द्रादित्यौ गुरुः पश्येत् पित्रोः स्थितिमितीरयेत् ॥५॥
यदि लग्नगतो राहुर्जीवदृष्टिविवर्जितः ।
जातस्य मरणं शीघ्रं भवेदत्र न संशयः ॥६॥
द्वादशस्थौ अर्कचन्द्रौ नेत्रयुग्मं विनश्यति ।
षष्ठे वा पञ्चमे पापाः पश्यन्तीन्दुदिवाकरौ ॥७॥
पित्रोर्मरणमेवास्ति तयोर्मन्दः स्थितो यदि ।
भ्रातृनाशं तथा भौमे मातुलस्य मृतिं वदेत् ॥८॥
उदयादित्रिकस्थेषु कण्टकेषु शुभा यदि ।
मित्रस्वात्युच्चवर्गेषु सर्वारिष्टं विनश्यति ॥९॥
लग्नञ्च चन्द्रलग्नञ्च जीवो यदि न पश्यति ।
पापाः पश्यन्ति चेत्पुत्रो व्यभिचारेण जायते ॥१०॥
इति ज्ञात्वा वदेद्धीमान् शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके ।
इति सुतारिष्टकाण्डः ।

अथ क्षुरिकाकाण्ड ।

क्षुरिकालक्षणं सम्यक् प्रवक्ष्यामि यथा तथा ।
राहुणा सहिते चन्द्रे शत्रुभंगो भविष्यति ॥१॥
नीचारिस्थास्तु पश्यन्ति यदि खड्गस्य भंजनम् ।
शुभग्रहयुते चन्द्रे दृष्टे शास्त्रं शुभं वदेत् ॥२॥
पापग्रहसमेः, तेषु छत्रारूढोदयेषु च ।
तेषु दृष्टः स्थितः किन्तु तदस्त्रेण हतो भवेत् ॥३॥
अथवा कलहः खड्गः परेणापहृतो भवेत् ।
तेषु स्थानेषु सौम्येषु खड्गस्तु शुभदो भवेत् ॥४॥

प्रदर्शितस्य खड्गस्य लग्ने वा पापसंयुते।
खड्गस्यादावृणं ब्रूयात् त्रिकोणे पापसंयुते ॥५॥
शस्त्रभङ्गस्थितो व्योम्नि चतुर्थे पापसंयुते।
खड्गस्य भंगो मध्ये स्यादिति ज्ञात्वा वदेत्सुधीः ॥६॥
एकादशे तृतीये च पापे शस्त्राग्रभंजनम्।
मित्रस्वाम्युच्चनीचादिवर्गानधिगताग्रहाः ॥७॥
तत्तद्वर्गस्थलायातं शस्त्रमित्यभिधीयते।
सम्मुखे यदि खड्गः स्यात्तदीयं खड्गमुच्यते ॥८॥
तिर्यग्मुखश्चेत्तच्छस्त्रमन्यशस्त्रं वदेत्सुधीः।
अधोमुखश्चेत्संग्रामेच्युतमाहृतमुच्यते ॥ ९ ॥
तत्तच्चेष्टानुरूपेण स्वान्याहरणविस्मृतिः।
ग्रहपाकोपभेदेन शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके ॥१०॥

इति छुरिकाकाण्डः

——:*:——

अथ शल्यकाण्डः।

शल्यप्रश्ने तु तत्काले पादभावसुनेत्रयुक्।
अर्कैर्वाता नृपैर्भक्ता शेषाणां फलमुच्यते ॥१॥
कपालास्थीष्टकालोष्टा काष्ठदेवविभूतयः।
सर्वाङ्गारकधान्यानि स्वर्णपाषाणदर्दुराः ॥२॥
गोऽस्थिश्वास्थिपिशाचादिक्रमाच्छल्यानि षोडश।
येषु शल्येषु मण्डूकस्वर्णगोस्थिसुधान्यकाः ॥३॥
दृष्टाश्चेदुत्तमं चान्ये सर्वे स्युरशुभाः स्थिताः।
अष्टाविंशतिकोष्ठेषु वह्निदिष्ट्यादिकं न्यसेत् ॥४॥
यत्र भे तिष्ठति शशी तत्र शल्यमुदाहृतम्।
उदयर्क्षादिकं न्यस्येदष्टाविंशतिकोष्ठके ॥५॥
गणयेच्चन्द्रनक्षत्रं तत्र शल्यं प्रकीर्त्तितम्।
शंकास्थलस्य विस्तारौ यामावन्योन्यताडितौ ॥६॥
विंशत्यापहृतं शिष्टमरत्निरिति कीर्त्तितम्।

रत्निर्गुणित्वा नवभिर्नखातं तालमुच्यते ॥७॥
तत्प्रादेशं प्रगुणयांङ्कैर्व्रतं विंशतिभिर्यदि।
शेषमङ्गुलमेवोक्तं रत्निप्रादेशमङ्गुलम् ॥८॥
एवं क्रमेणरत्नाद्यमगाधं कथयेद्बुधः।
केन्द्रेषु पापयुक्तेषु पृष्टं शल्यं न दृश्यते ॥९॥
शुभग्रहयुतेष्वेषु शल्यं तत्र प्रजायते।
पापसौम्ययुते केन्द्रे शल्यमस्तीति निर्दिशेत् ॥१०॥
रविः पश्यति चेद्देवं कुजश्चेद्ब्रह्मराक्षसान्।
केन्द्रे चन्द्रारसहिते कुजनक्षत्रकोष्ठके ॥११॥
श्वशल्यं विद्यते तत्र केन्द्रे जीवेन्दुसंयुते।
जीवस्थोडुगते कोष्ठे स्वर्णगोपुरुषास्थिनी ॥१२॥
केन्द्रे बुधेन्दुसंयुक्ते बुधनक्षत्रकोष्ठके।
श्वशल्यं विद्यते तत्र केन्द्रे शुक्रेन्दुसंयुते ॥१३॥
शुक्रस्थितर्क्षके कोष्ठे रौप्यं श्वेतशिलापि वा।
बुधारूढकेन्द्रेषु स्वर्भानुर्यदि तिष्ठति ॥१४॥
राहुतारायुते कोष्ठे वल्मीकं समुदीरयेत्।
शुभाः केन्द्रगताः पापैः पश्यति वलिभिर्यदि ॥१५॥
तदा नीचारियुक्ताश्चेत्तत्र शल्यं न विद्यते।
शुक्रेन्दुजीवसौम्याश्च केन्द्रस्थानगता यदि ॥१६॥
तत्रैव दृश्यते शल्यं कण्टकस्थाः शुभं वदेत्।
स्वक्षेत्रोच्चगताः सौम्याः लग्नकेन्द्रगता यदि ॥१७॥
तत्क्षेत्रे विद्यते शल्यं तेषु पापा यदि स्थिताः।
देवपक्षिपिशाचाद्यास्तत्र तिष्ठन्त्यसंशयम् ॥१८॥
ग्रहांशुसंख्यया तेषां खातमानं वदेत् सुधीः।
पञ्चषट्वसुभूतानि सपादैकं तथैव च ॥१९॥
सार्धरूपाक्षोरवयः सूर्यादीनां कराः स्मृताः।
स्वशल्यगाधमनेनैव करेण परिमाणयेत् ॥२०॥

इति शल्यकाण्डः।

अथ कूपकाण्डः ।

अथ वक्ष्ये विशेषेण कूपखातविनिर्णयम् ।
आयामे चाष्टरेखाः स्युस्तीर्यग्रेखास्तु पञ्च च ॥१॥
एवं कृते भवेत्कोष्ठा अष्टाविंशतिसंख्यकाः ।
प्रभाते प्राङ्मुखो भूत्वा कोष्ठेष्वेतेषु बुद्धिमान् ॥२॥
चक्रमालोकयेद्विद्वान् रात्रार्द्धादुत्तराननः ।
मध्याह्ने मुखमारभ्य मैत्रभाद्यं निशामुखे ॥३॥
ईशकोष्ठद्वयं त्यक्त्वा तृतीयादित्रिषु क्रमात् ।
कृतिकादित्रयं न्यस्यं तदधो रौद्रभं न्यसेत् ॥४॥
तदुत्तरं त्रयेष्वेव पुनर्वस्वादिकं त्रयम् ।
तत्पश्चिमादियाम्येषु मघाचित्रावसानकम् ॥५॥
तत्पूर्वकोष्ठयोः स्वातीविशाखे न्यस्य तत्परम् ।
प्रदक्षिणक्रमादग्निनक्षत्रान्ताश्च तारकाः ॥६॥
मध्याह्ने दक्षिणाशास्यः पश्चिमास्यो निशामुखे ।
अर्द्धरात्रे धनिष्ठाद्यं पूर्ववत् गणयेत् क्रमात् ॥७॥
आग्नेय्यां दिशि नैऋत्यां वायव्यां कोष्ठकद्वयम् ।
त्यक्त्वा प्रत्येकमेवं हि तृतीयाद्यं विलेखयेत् ॥८॥
दिनार्धं सप्तभिर्हत्वा तल्लब्धं नाड़िकादिकम् ।
ज्ञात्वा तत्तत्प्रमाणेन कृतिकादीनि विन्यसेत् ॥९॥
यन्नक्षत्रं तदा सिद्धं प्रश्नकाले विशेषतः ।
कृतिकास्थानमारभ्य पूर्ववद्गणयेत्सुधीः ॥१०॥
यत्कोष्ठे चन्द्रनक्षत्रं तत्रोदयनमालिखेत् ।
तदादीनि क्रमेणैव पूर्ववद्गणयेत्सुधीः ॥११॥
यत्रेन्दुर्दृश्यते तत्र समृद्धमुदकं भवेत् ।
जीवनक्षत्रकोष्ठेषु जलमस्तीत्युदाहरेत् ॥१२॥
तुलोक्षनक्रकुम्भालिमीनकर्क्यालिराशयः ।
जलरूपास्तदुदये जलमस्तीति निर्दिशेत् ॥१३॥
तत्रस्थौ शुक्रचन्द्रौ चेदस्ति तत्र बहूदकम् ।
बुधजीवोदये तत्र किञ्चिज्जलमितीरयेत् ॥१४॥
एतान् राशीन् प्रपश्यन्ति यदि शन्यर्कभूमिजाः ।

जलं न विद्यते तत्र फणिदृष्टे बहूदकम् ॥१५॥
अधस्तादुदयारूढे तच्छत्रे चोपरि स्थिते।
जलग्रहयुते दृष्टे अधस्तात्स्यादधोजलम् ॥१६॥
उच्चे दृष्टे ग्रहे राशौ उच्चमेवोदकं भवेत्।
ऊर्ध्वाधस्स्थलयोः पापाः तिष्ठन्ति यदि नोदकम् ॥१७॥
अधोजलं चतुःस्थाने नाधस्ताद्यागमं वदेत्।
दशमे नवमे वर्षे केचिदाहुर्मनीषिणः ॥१८॥
जलाजलग्रहवशात् जलनिर्णयमादिशेत्।
केन्द्रेषु तिष्ठतश्चन्द्रो जीवो यदि शुभोदकम् ॥१९॥
चन्द्रशुक्रयुते केन्द्रे पर्वतेऽपि जलं भवेत्।
चन्द्रसौम्ययुते केन्द्रे जीर्णं स्याल्लवणोदकम् ॥२०॥
आरूढात्केन्द्रके चन्द्रे परिध्यादिभिरीक्षिते।
अधोजलं ततोऽगाधं पूर्वोक्तग्रहरश्मिभिः ॥२१॥
शुक्रेण सौम्ययुक्तेन कषायजलमादिशेत्।
कन्यामिथुनगः सौम्यो जलं स्यादन्तरालकम् ॥२२॥
भास्करे क्षारसलिलं परिवेषं धनुर्यदि।
राहुणा संयुते मन्दे जलं स्यादन्तरालकम् ॥२३॥
बृहस्पतौ राहुयुते पाषाणो जायतेतराम्।
शुक्रे चन्द्रयुते राहौ अगाधजलमेधते ॥२४॥
अर्कस्योन्नतभूमिः स्यात् पाषाणा कण्टकस्थली।
नालिकेरादिपुंनागपूगयुक्ता क्षमा गुरोः ॥२५॥
शुक्रस्य कदली वल्ली बुधस्य पनसं वदेत्।
वल्लिका केतकी राहोरिति ज्ञात्वा वदेद्बुधः ॥२६॥
शनिराहूदये काष्ठोरगवल्मीकदर्शनम्।
स्वामिदृष्टियुते वापि स्वक्षेत्रमिति कीर्त्तयेत् ॥२७॥
अन्यैः युक्तेऽथवा दृष्टे परकीयस्थलं वदेत्।

इति कूपकाण्डः।

इस काण्ड का श्लोकक्रम "भवन" की प्रति के अनुकूल है।

अथ सेनाकाण्डः।

सेनस्यागमनं वक्ष्ये शत्रोरागमनं तथा।
चरोदये चरारूढे पापाः प्रश्नगा यदि ॥१॥
सेनागमनमस्तीति कथयेच्छास्त्रवित्तमः।
चतुष्पादुदये जाते युग्मे राश्युदयेऽपि वा ॥२॥
लग्नस्याधिपतौ वक्रे सेना प्रतिनिवर्तते।
आरूढादुदयाः कुम्भकुलीरालिझषा यदि ॥३॥
चरोदये चरारूढे भौमार्किगुरवो यदि।
चतुर्थकेन्द्रे बलिनो यदि सेना निवर्तते ॥४॥
तिष्ठन्ति यदि पश्यन्ति सेना याति महत्तरा।
आरूढे स्वामिमित्रोच्चग्रहयुक्तेऽथ वीक्षिते ॥५॥
स्थायिनो विजयं ब्रूयात् यायिनश्च पराजयम्।
एवं छत्रे विशेषोऽस्ति विपरीते जयो भवेत् ॥६॥
आरूढे बलसंयुक्ते स्थायी विजयमाप्नुयात्।
यायी विजयमाप्नोति छत्रे बलसमन्विते ॥७॥
आरूढे नीचरिपुभिर्ग्रहैर्युक्तेऽथ वीक्षिते।
स्थायी परगृहीतस्य छत्रेऽप्येवं विपर्यये ॥८॥
शुभोदये तु पूर्वाह्णे यायिनो विजयोभवेत्।
शुभोदये तु सायाह्ने स्थायी विजयमाप्नुयात् ॥९॥
छत्रारूढोदये वापि पुंराशौ पापसंयुते।
तत्काले पृच्छतां सद्यः कलहो जायते महान् ॥१०॥
पृष्ठोदये तथारूढे पापैर्युक्तेऽथ वीक्षिते।
दशमे पापसंयुक्ते चतुष्पादुदयेऽपि वा ॥११॥
कलहो जायते शीघ्रं सन्धिः स्याच्छुभवीक्षिते।
दशमाद्राशिषट्केषु शुभराशिषु चेत् स्थिताः ॥१२॥
स्थायनो विजयं ब्रूयात् तद्वूर्ध्वे चेन्द्रियोर्जयम्।
पापग्रहयुते तद्वन्मिश्रे सन्धिः प्रजायते ॥१३॥
उभयत्र स्थिताः पापाः बलवन्तः समो जयः।
तुर्यादिराशिभिःषड्भिरागतस्य फलं वदेत् ॥१४॥
(तदन्य राशिभिः षड्भिः स्थायिनः फलमादिशेत्)

एवं ग्रहस्थितिवशात् पूर्ववत् कथयेद्बुधः ।
ग्रहोदये विशेषोऽस्ति शन्यर्काङ्गारकोदये ॥१५॥
आगतस्य जयं ब्रूयात् स्थायिनो भंगमादिशेत् ।
बुधशुक्रोदये सन्धिः जयी स्थायी गुरूदये ॥१६॥
पंचषट्लाभरिस्फेषु तृतीयेऽर्किः स्थितो यदि ।
आगतः स्त्रीधनादीनि हृत्वा वस्तूनि गच्छति ॥१७॥
द्वितीये दशमे सौरिः यदि सेनासमागम ।
यदि शुक्रस्थितः षष्ठे योग्यसन्धिर्भविष्यति ॥१८॥
चतुर्थे पञ्चमे शुक्रो यदि तिष्ठति तत्क्षणात् ।
स्त्रीधनादीनि वस्तूनि यायी दत्त्वा प्रयास्यति ॥१९॥
सप्तमे शुक्रसंयुक्ते स्थायी भवति दुर्लभः ।
नवाष्टसप्तसहजान् विनान्यत्र कुजो यदि ॥२०॥
स्थायी विजयमाप्नोति परसेनासमागमे ।
चन्द्रे षष्ठे स्थितो वापि परसेनासमागमः ॥२१॥
चतुर्थे पञ्चमे चन्द्रे यदि स्थायी जयी भवेत् ।
तृतीये पञ्चमे भानुः यदि सेनासमागमः ॥२२॥
मित्रस्थानस्थितः सन्धिर्नोचेत् स्थायी जयी भवेत् ।
चतुर्थे वित्तदः स्थायी रिस्फे तु स्थायिनो मृतिः ॥२३॥
उदयात् सहजे सौम्ये द्वितीये यदि भास्करः ।
स्थायिनो विजयं ब्रूयात् व्यत्यये यायिनो जयम् ॥२४॥
ससौम्ये भास्करे युक्ते समं युद्धं वदेद्बुधः ।
लग्नात्पञ्चमगे सौम्ये यायी भवति चार्थदः ॥२५॥
द्वित्रिस्थे सोमजे यायी विजयी भवति ध्रुवम् ।
दशमैकादशे रिस्फे स्थायी विजयमेष्यति ॥२६॥
अर्कलाभस्थिते यायी हतशत्रुः सबान्धवः ।
शत्रुनीचस्थिते सूर्ये स्थायिनो भङ्गमादिशेत ॥२७॥
उदयात्पञ्चमे भ्रातृव्ययेषु धिषणो यदि ।
यायी भंगं समायाति द्वितीये सन्धिरुच्यते ॥२८॥
दशमैकादशे जीवो यदि यात्यर्थदो भवेत् ।
चन्द्रादित्यौ समस्थाने सन्धिः स्यात्तिष्ठतो यदि ॥२९॥

विपरीतेषु युद्धं स्यात् भानौ द्वादशके विधौ।
तत्र युद्धं न भवति शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके ॥३०॥
चरराशिस्थिते चन्द्रे चरराश्युदयेऽपि वा।
आगतारेर्हि सन्धानं विपरीते विपर्ययः ॥३१॥
युग्मराशिगते चन्द्रे युग्मराश्युदयेऽपि वा।
अर्धमार्गं समागत्य सेना प्रतिनिवर्तते ॥३२॥
सिंहाद्या राशयः षट् च स्थायिनो भास्करात्मकाः।
कर्कोत्क्रमाः षट् च यायिनश्चन्द्ररूपिणः ॥३३॥
स्थायी यायी क्रमेणैवं ब्रूयाद्ग्रहवशात् फलम्।

इति सेनाकाण्डः।

—:*:—

अथ यात्राकाण्डः।

यात्राकाण्डं प्रवक्ष्यामि सर्वेषां हितकांक्षया।
गमनागमनञ्चैव लाभालाभौ शुभाशुभौ ॥१॥
विचार्य कथयेद्विद्वान् पृच्छतां शास्त्रवित्तमः।
मित्रक्षेत्राणि पश्यन्ति यदि मित्रग्रहास्तदा ॥२॥
मित्रस्यागमनं ब्रूयात् नीचानीचग्रहा यदि।
नीचाय गमनं ब्रूयात् उच्चानुच्चग्रहाणि च ॥३॥
स्वाधिकागमनं ब्रूयात् पुंराशिं पुंग्रहा यदि।
पुरुषागमनं ब्रूयात् स्त्रीराशि स्त्रीग्रहा यदि ॥४॥
स्त्रीणामागमनं ब्रूयादन्येष्वेवं विचारयेत्।
चरराश्युदयारूढे तत्तद्ग्रहविलोकने ॥५॥
तत्तदाशासु गच्छन्ति पृच्छतां शास्त्रनिर्णयः।
स्थिरराश्युदयारूढे शन्यर्काङ्गारकाः स्थिताः ॥६॥
अथवा दशमे वा चेद् गमनागमने न च।
शुक्रसौम्येन्दुजीवाश्च तिष्ठन्ति स्थिरराशिषु ॥७॥
विद्यते स्वेष्टसिद्ध्यर्थं गमनागमने तथा।
स्थितिप्रश्ने स्थितिं ब्रूयान्मस्तकोदयराशिषु ॥८॥

पृष्ठोदये तु गमनं क्रमेण शुभदं वदेत् ॥९॥
द्वितीये च तृतीये च तिष्ठन्ति यदि पुंग्रहाः ।
त्रिदिनात्पत्रिकायाति दूतो वा प्रेषितस्य च ॥१०॥
लग्नार्थे सहजव्योमलाभेष्विन्दुज्ञभार्गवा ।
तिष्ठन्ति यदि तत्काले चावृत्तिः प्रोषितस्य च ॥११॥
शुभदृष्टे शुभयुते जीवे वा केन्द्रमागते ।
बुधजीवौ त्रिकोणे वा प्रोषितागमनं वदेत् ॥१२॥
चतुर्थे द्वादशे वापि तिष्ठन्ति चेच्छुभग्रहाः ।
पत्रिका प्रोषिताद्वार्ता समायाति न संशयः ॥१३॥
षष्ठे वा पञ्चमे वापि यदि पापग्रहाः स्थिताः ।
प्रोषितो व्याधिपीडार्थं समायाति न संशयः ॥१४॥
चापोक्षकुम्भसिंहेषु यदि तिष्ठति चन्द्रमाः ।
चिन्तितस्तत्सदायाति चतुर्थे चेत्तदागमः ॥१५॥
स्वोच्चस्वक्षेत्रेषु तिष्ठन्ति शुक्रजीवेन्दुसोमजाः ।
प्रयाणागमनं ब्रूयात् तत्तदाशासु सर्वदा ॥१६॥
ग्रहाः स्वक्षेत्रमायान्ति यावत्तावत्फलं वदेत् ।
ग्रहगृहं प्रविष्टे वा पृष्ठतोऽपि ग्रहं गतः ॥१७॥
चतुर्थान्तान्तारगते मार्गमध्ये फलं वदेत् ।
मध्यान्तरगतेर्वाच्यं गजदेशे शुभावहम् ॥१८॥
शुभग्रहवशात्सौख्यं पीडां पापग्रहैर्वदेत् ।
सप्तमाष्टमयोः पापास्तिष्ठन्ति यदि च ग्रहाः ॥१९॥
प्रोषितो हृतसर्वस्वस्तत्रैव मरणं व्रजेत्
षष्ठे पापयुते मार्गगामी बद्धो भविष्यति ॥२०॥
जलराशिस्थिते पापे चिरेणायाति चिन्तितः ।
इति ज्ञात्वावदेद्धीमान् शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके ॥२१॥

इति यात्राकाण्डः ।

अथ वृष्टिकाण्डः ।

जलराशिषु लग्नेषु जलग्रहनिरीक्षणे ।
कथयेद्वृष्टिरस्तीति विपरीते न वर्षति ॥१॥
जलराशिषु शुक्रेन्दू तिष्ठतो वृष्टिरुत्तमा ।
जलराशिषु तिष्ठन्ति शुक्रजीवसुधाकराः ॥२॥
आरूढोदयराशी चेत् पश्यन्त्यधिकवृष्टयः ।
एते स्वक्षेत्रमुच्चं वा पश्यन्ति यदि केन्द्रभम् ॥३॥
त्रिचतुर्दिवसादन्तर्महावृष्टिर्भविष्यति ।
लग्नाच्चतुर्थे शुक्रस्यात्तद्दिने वृष्टिरुत्तमा ॥४॥
क्षत्रे पृष्ठोदये जाते पृष्ठोदयग्रहेक्षिते ।
तत्काले परिवेषादिदृष्टे वृष्टिर्महत्तरा ॥५॥
केन्द्रेषु मन्दभौमज्ञराहवो यदि संस्थिताः ।
वृष्टिर्नास्तीति कथयेदथवा चण्डमारुतः ॥६॥
पापसौम्यविमिश्रैश्च अल्पवृष्टिः प्रजायते ।
चापस्थौ मन्दराहू चेत् वृष्टिर्नास्तीति कीर्तयेत् ॥७॥
शुक्रकार्मुकसन्धिश्चेद्धारावृष्टिर्भविष्यति ।

इति वृष्टिकाण्डः ।

अथ अर्घ्यकाण्डः ।

उच्चेन दृष्टे युक्ते वात्यर्घ्य वृद्धिर्भविष्यति ।
नीचेन युक्ते दृष्टे वा स्यादर्घ्यक्षय ईरितः ॥१॥
मित्रस्वामिवशात् सौम्यामित्रं ज्ञात्वा वदेत्सुधीः ।
शुभग्रहयुते वृद्धिरशुभैरर्घ्यनाशनम् ॥२॥
पापग्रहयुते दृष्टे त्वर्घ्यवृद्धिक्षयो भवेत् ॥

इति अर्घ्यकाण्डः ।

—:०:—

अथ नौकाण्डः ।

जलराशिषु लग्नेषु शुक्रजीवेन्दवो यदि ।
पोतस्यागमनं ब्रूयादशुभश्चेन्न सिद्ध्यति ॥१॥
आरूढछत्रलग्नेषु वीक्षितेष्वशुभग्रहैः ।
पोतभंगो भवेन्नीचशत्रुभिर्वा तथा भवेत् ॥२॥
पृष्ठोदयग्रहैर्लग्ने संदृष्टे नौर्व्रजेत्स्थलम् ।
तद्ग्रहे तु यथा दृष्टे तथा नौदर्शनं वदेत् ॥३॥
चरराश्युदये छत्रे दूरमायाति नौस्तथा ।
चतुर्थे पञ्चमे चन्द्रो यदि नौः शीघ्रमेष्यति ॥४॥
द्वितीये वा तृतीये वा शुक्रश्चेन्नौसमागमः ।
अनेनैव प्रकारेण सर्वं वीक्ष्य वदेद्बुधः ॥५॥

इति नौकाण्डः ।

इति ज्ञानप्रदीपिकानाम ज्यौतिषशास्त्रम् सम्पूर्णम् ।

ज्ञान-प्रदीपिका

(ज्योतिषशास्त्रम्)

श्रीमद्वीरजिनाधीशं सर्वज्ञं त्रिजगद्गुरुम् ।
प्रातीहार्याष्टकोपेतं प्रकृष्टं प्रणमाम्यहम् ॥१॥

त्रैलोक्यनायक, सर्वज्ञ, अशोक वृक्षादि आठ प्रातिहार्यों से युक्त, प्रकृष्ट श्रीमहावीर-स्वामी को मैं प्रणाम करता हूं।

स्थित्युत्पत्तिव्ययात्मीयां भारतीमार्हतीं सतीम् ।
अतिपूतामद्वितीयामहर्निशमभिष्टुवे ॥२॥

स्थिति, उत्पत्ति और प्रलयस्वरूपिणी, पूज्या सती, अत्यन्त पवित्र और अद्वितीय श्रीजिनवाणी देवी को मैं (ग्रन्थकार) रातदिन स्तुति करता हूं।

ज्ञानप्रदीपकं नाम शास्त्रं लोकोपकारकम् ।
प्रश्नादर्शं प्रवक्ष्यामि पूर्वशास्त्रानुसारतः ॥३॥

पहले के कहे हुए शास्त्रोंके अनुसार लोक के उपकारक ज्ञानप्रदीपिका नामक प्रश्नतंत्र के आदर्श शास्त्र को कहूंगा।

भूतं भव्यं वर्तमानं शुभाशुभनिरीक्षणम् ।
पंचप्रकारमार्गं च चतुष्केन्द्रबलाबलम् ॥४॥
आरूढछत्रवर्गं चाभ्युदयादिबलाबलम् ।
क्षेत्रं दृष्टिं नरं नारीं युग्मरूपं च वर्णकम् ॥५॥
मृगादिनररूपाणि किरणान्योजनानि च ।
आयूरसोदयाद्यञ्च परीक्ष्य कथयेद् बुधः ॥६॥

भूत, भविष्य, वर्तमान, शुभाशुभ दृष्टि, पाँच मार्ग, चार केन्द्र, बलाबल, आरूढ़, छत्र, वर्ग, उदय बल, अस्तबल, क्षेत्र, दृष्टि, नर, नारी, नपुंसक, वर्ण, मृग तथा नर आदि रूप किरण, योजन, आयु, रस, उदय आदि की परीक्षा करके बुद्धिमान् को फल कहना चाहिये ।

चरस्थिरोभयान् राशीन् तत्प्रदेशस्थलानि च ।
निशादिवससंध्याश्च कालदेशस्वभावतः ॥७॥

चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशियाँ, उनके प्रदेश, दिन, रात, सन्ध्या का कालादेश, राशियों का स्वभाव;—

धातुमूलं च जीवं च नष्टं मुष्टिं च चिन्तनम् ।
लाभालाभं गदं मृत्युं भुक्तं स्वप्नं च शाकुनम् ॥८॥

धातु, मूल, जीव, नष्ट, मुष्टि, लाभ, हानि, रोग, मृत्यु, भोजन, शयन और शकुन सम्बन्धी प्रश्न —

जातकर्मायुधं शल्यं कोपं सेनागमं तथा ।
सरिदागमनं वृष्टिमध्यं नौसिद्धिमादितः ॥९॥

जन्म, कर्म, अस्त्र, शल्य (हड्डी), कोप, सेना का आगमन, नदियों की बाढ़, वर्षा, अवर्षण, नौकासिद्धि आदि,—

क्रमेण कथयिष्यामि शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके ।

इन बातों को इस ज्ञानप्रदीपक शास्त्र में क्रमशः कहूंगा ।

इत्युपोद्घातकाण्डः



अथ वक्ष्ये विशेषेण ग्रहाणां मित्रनिर्णयम् ॥१०॥

अब ग्रहोंकी मैत्री का वर्णन करेंगे ।

भौमस्य मित्रे शुक्रज्ञौ भृगोर्ज्ञारार्किमंत्रिणः ।
आदित्यस्य गुरुर्मित्रं शनेर्विद्गुरुभार्गवाः ॥१॥
भास्करेण विना सर्वे बुधस्य सुहृदस्तथा ।
चन्द्रस्य मित्रे जीवज्ञौ मित्रवर्गमुदाहृतम् ॥२॥

मंगल के मित्र शुक्र और बुध, शुक्रके बुध, मंगल, शनि और बृहस्पति; सूर्य के बृहस्पति; शनि के बुध, बृहस्पति और शुक्र, बुध के मित्र सूर्य को छोड़ कर सभी तथा चन्द्रमा के मित्र बृहस्पति और बुध हैं।

सिंहस्याधिपतिः सूर्यः कर्कटस्य निशाकरः।
मेषवृश्चिकयोर्भौमः कन्यामिथुनयोर्बुधः ॥३॥
धनुर्मीनयोर्मंत्री तुलावृषभयोर्भृगुः।
शनिर्मकरकुंभयोश्च राशीनामधिपा इमे ॥४॥

सिंह राशि का स्वामी सूर्य, कर्क का चन्द्रमा, मेष बृष का मंगल, कन्या और मिथुन का बुध, धनु और मीन का बृहस्पति, तुला और बृष का शुक्र, मकर और कुंभ का स्वामी शनि हैं।

धनुर्मिथुनपाठीनकन्योक्षाणां शनिः सुहृत्।
रविश्चापान्त्ययोरारः तुलायुग्मोक्षयोषिताम् ॥५॥

धनु, मिथुन, मीन, कन्या, बृष राशियों का मित्र शनि हैं। धनु मीन का मित्र रवि है। तुला, मिथुन, बृष और कन्या का मित्र मंगल हैं।

कोदण्डमीनमिथुनकन्यकानां शशी सुहृत्।
बुधस्य चापनक्रालिकर्क्यजोक्षतुलाघटाः ॥६॥

धनु, मीन, मिथुन और कन्या का मित्र चन्द्रमा है। धनु, मकर, बृश्चिक, कर्क मेष, बृष, तुला और कुंभ का मित्र बुध है।

क्रियामिथुनकोदण्डकुंभालिमकरा भृगोः।
गुरोः कन्या तुला कुंभमिथुनोक्षमृगेश्वराः ॥७॥
राशिमैत्रं ग्रहाणां च मैत्रमेवमुदाहृतम्।

मेष, मिथुन, धनु, कुंभ बृश्चिक, मकर का मित्र शुक्र तथा कन्या, तुला, कुंभ, मिथुन, बृष, और मकर का मित्र गुरु है। इस प्रकार राशि और ग्रहों की मैत्री बताई गयी हैं।

सूर्येन्द्वोः परिधेर्जीवा धूमज्ञशनिभोगिनाम् ॥८॥
शक्रचापकुजैणानां शुक्रस्योच्चास्त्वजादयः।

सूर्य का मेष, चन्द्रमा का वृष, परिधि का मिथुन, वृहस्पति का कर्क, धूमका सिंह, बुध का कन्या, शनि का तुला, राहु का वृश्चिक, इन्द्र धनु का धन, मंगल का मकर, केतुका कुम्भ और शुक्र का मीन यह उच्च राशियां क्रमसे होती हैं।

अत्युच्चं दर्शनं वह्निर्मनुयुक् युक् च तिथीन्द्रियैः ॥९॥
सप्तविंशतिकं विंशद्भागाः सप्तग्रहाः क्रमात्।

सूर्य मेष में दश अंश पर, चन्द्रमा वृष में ३ अंश पर, मंगल मकर में २८ अंश पर, बुध कन्या में १५ अंश पर, वृहस्पति कर्क में ५ अंश पर, शुक्र मीन में २७ अंश पर, और शनि तुला में २० अंश पर उच्च के होते हैं।

बुधस्य वैरी दिनकृत् चन्द्रादित्यौ भृगोररी ॥१०॥
बृहस्पते रिपुर्भौमः शुक्रसोमात्मजौ विना।
शनेश्च रिपवः सर्वे तेषां तत्तद्ग्रहाणि च ॥११॥

बुध का वैरी सूर्य, शुक्र के शत्रु सूर्य और चन्द्र, वृहस्पति के मंगल, शनि के शत्रु बुध, शुक्र को छोड़कर सभी ग्रह हैं।

रवेर्वणिगलिस्त्विन्दोः कुलीरोऽगारकस्य च।
बुधस्य मीनोऽजः सौरेः कन्या शुक्रस्य कथ्यते ॥१२॥
सुराचार्यस्य मकरस्त्वेतेषां नीचराशयः।

रवि की नीच राशि तुला, चन्द्रमा की वृश्चिक, मंगल की कर्क, बुध की मीन, वृहस्पति की मकर, शुक्र, की कन्या और शनि की मेष नीच राशि हैं।

राहोर्वृषयुगशक्रधनुष्केण मृगेश्वराः ॥१३॥
परिवेशस्य कोदण्डः कुंभो धूमस्य नीचभूः।
मित्रस्तुला नक्रकन्यायुग्मचापझषास्त्वहेः ॥१४॥
कुंभक्षेत्रमहेः शत्रुः कुलीरो नीचभूः क्रियाः।

राहु का वृष, इन्द्र धनु का सिंह, परिवेशका धनु धूम्र का कुम्भ ये नीच राशियाँ होती हैं। राहु के लिये तुला मकर कन्या मिथुन धनु और मीन ये मित्र राशियां होती हैं और कुंभ राशि शत्रु राशि कही जाती है तथा कर्क मेष ये नीच राशियां होती हैं।

उदयादिचतुष्कं तु जलकेन्द्रमुदाहृतम् ॥१५॥
तच्चतुर्थं चास्तमयं तत्तुर्यं वियदुच्यते ।
तत्तुर्यमुदयं चैव चतुष्केन्द्रमुदाहृतम् ॥१६॥

लग्न से चौथे स्थान को जलकेन्द्र कहते हैं। चतुर्थ स्थान से जो स्थान चौथे हैं उसे अस्तमय कहते हैं। सप्तम स्थान से चतुर्थ स्थान को 'वियत्' यानी दशम कहते हैं। उससे भी चौथे को उदय या लग्न कहा जाता है। ये चारों स्थान केन्द्र कहे जाते हैं।

चिन्तनायां तु दशमे हिबुके स्वप्नचिन्तनम् ।
छत्रे मुष्टिं चयं नष्टमास्येश्चारूढतोऽपि वा ॥१७॥

चिन्ता के कार्य में दशम स्थान से और स्वप्नचिन्तन में चतुर्थ स्थान से तथा छत्र मुष्टि वृद्धि नष्टप्राप्ति इत्यादि बातों का ज्ञान लग्न से होता है।

चापोक्षकर्किनक्रास्ते पृष्ठोदयराशयः ।
तिर्यगुदिनबलाः शेषा राशयो मस्तकोदयाः ॥१८॥

धनु, वृष, कर्क, मकर—ये राशियाँ पृष्ठोदय हैं। और दिवाबली अर्थात् सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुंभ ये शीर्षोदय हैं। शेष राशियाँ भी शीर्षोदय हैं (बृहज्जातक के अनुसार मीन और मिथुन उभयोदय हैं।)

अर्काङ्गारकमन्दास्तु सन्ति पृष्ठोदया ग्रहाः ।
राहुजीवभृगुज्ञाश्च ग्रहाः स्युर्मस्तकोदयाः ॥१९॥
उद्यतस्तिर्यगेवेन्दुः केतुस्तत्र प्रकीर्तितः ।

सूर्य, मंगल और शनि पृष्ठोदय ग्रह, राहु, वृहस्पति, शुक्र और बुध मस्तकोदय तथा केतु और चंन्द्र तिर्यगुदय ग्रह हैं।

उदये बलिनौ जीवबुधौ तु पुरुषौ स्मृतौ ॥२०॥
अन्ते चतुष्पदौ भानुभूमिजौ बलिनौ ततः ।
चतुर्थे शुक्रशशिनौ जलराशौ बलोत्तरौ ॥२१॥
अर्क्यहौ बलिनौ चास्ते कीटकाश्च भवन्ति हि ।

बुध और बृहस्पति पुरुष ग्रह हैं और लग्न में बलवान् होते हैं। सूर्य और मंगल चतुष्पद ग्रह हैं और अन्त में बलवान् होते हैं। शुक्र और चन्द्र जलचर हैं और चतुर्थ तथा जल राशि में (कर्क मीन) बलवान् होते हैं। शनि और राहु कीट ग्रह हैं और अस्त यानी सप्तम में बलवान् होते हैं।

युग्मकन्याधनुःकुंभतुला मानुषराशयः ॥२२॥
अन्त्योदयौ मीनमृगौ अन्ये तत्तत्स्वभावतः ।

मिथुन, कन्या, धनु, कुम्भ और तुला ये मनुष्य राशि हैं। मकर और मीन अन्त्योदय राशि हैं। शेष अपने अपने स्वभाव के अनुसार हैं।

चतुष्पादौ मेषवृषौ सिंहचापौ भवंति हि ॥२३॥
कुलीशाली बहुपादौ प्रक्षीणौ मृगमीनभौ ।
द्विपादाः कुंभमिथुनतुलाकन्या भवंति हि ॥२४॥

मेष, वृष, सिंह और धनु ये चतुष्पद, कर्क और वृश्चिक ये बहुपाद, मकर और मीन ये क्षीण-पाद तथा कुंभ, मिथुन, तुला और कन्या ये द्विपाद राशि हैं।

द्विपादा जीववित्शुक्राः शन्यर्काराश्चतुष्पदाः ।
शशिसर्पौ बहुपादौ शनिसौम्यौ च पक्षिणौ ॥२५॥
शनिसर्पौ जानुगतो पद्भ्यां यान्तीतरे ग्रहाः ।

बृहस्पति बुध शुक्र इनकी द्विपद संज्ञा है तथा शनि सूर्य मंगल इन ग्रहों की चतुष्पद संज्ञा कही गई है, चन्द्रमा राहु ये बहुपद तथा शनि बुध ये पक्षिसंज्ञक कहे जाते हैं, शनि और राहु की जानु गति होती है और इन से भिन्न ग्रह पैर से चलते हैं।

उदीर्यंतेऽजवीथ्यां तु चत्वारो वृषभादयः ॥२६॥
युग्मवीथ्यामुदीर्यन्ते चत्वारो वृश्चिकादयः ।
उक्षवीथ्यामुदीर्यन्ते मीनमेषतुलास्त्रियः ॥२७॥

वृष, मिथुन, कर्क, सिंह ये मेष-वीथी में; वृश्चिक, धन मकर और कुंभ मिथुन-वीथी में; और मीन, मेष तुला और कन्या, वृष वीथी में कहे गये हैं।

राशिचक्रं समालिख्य प्रागादि वृषभादिकम् ।
प्रदक्षिणक्रमेणैव द्वादशारूढसंज्ञितम् ॥२८॥
वृषश्चैव वृश्चिकस्य मिथुनस्य शरासनम् ।
मकरश्च कुलीरस्य सिंहस्य घट उच्यते ॥२९॥
मीनस्तु कन्यकायाश्च तुलाया मेष उच्यते ।

राशिचक्र लिख कर उसमें पूर्वादि क्रम से वृषादि राशियों को लिखे। वृष के दाहिने मिथुन और मिथुन के दाहिने कर्क इत्यादि। इस पर से क्रम से आरूढ़ इस प्रकार समझे। वृष का वृश्चिक, मिथुन का धनु, कर्क का मकर, सिंह का कुंभ, कन्या का मीन और तुला का मेष।

प्रतिसूत्रवशादेति परस्परनिरीक्षिताः ॥३०॥
गगनं भास्करः प्रोक्तो भूमिश्चन्द्र उदाहृतः ।

ग्रह एक सूत्रस्थ एक दूसरे को देखते हैं। सूर्य को आकाश और भूमि को चन्द्रमा समझना चाहिये।

पुमान् भानुर्वधूश्चंद्रः खचक्रप्रणवादिभिः ॥३१॥
भूचक्रदेहश्चन्द्रः स्यादिति शास्त्रविनिश्चयः ।

सूर्य पुरुष ग्रह, चन्द्रमा स्त्री ग्रह, सूर्य खचक्र और चन्द्रमा भूमिचक्र देह कहा जाता है, यह निर्णय शास्त्र का निर्णय है।

रवेः शुक्रः कुजस्यार्कः गुरोरिन्दुरहेर्विदुः ॥३२॥
उदयादिक्रमेणैव तत्तत्कालं विनिर्दिशेत् ।

सूर्य के लिये शुक्र, मङ्गल के लिये सूर्य, बृहस्पति के लिये चन्द्रमा और राहु के लिये बुध लग्नादि क्रम से तात्कालिक आरूढ़ होते हैं, ऐसा आदेश करना।

इत्यारूढछत्राः



प्रष्टुरारूढभं ज्ञात्वा तद्विद्यामवलोक्य च ।
आरूढाद्यावति विधिस्तावती रुदयादिका ॥१॥

पूंछने वाले की आरूढ़ राशि का ज्ञान कर के फिर उसकी विद्या का ज्ञान करना चाहिये, आरूढ़ पर से उदय आदि का यथोक्त फल कहना चाहिये।

तद्राशिच्छत्रमित्युक्तं शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके।
आरूढां भानुगां वीथीं परिगण्योदयादिना ॥२॥

इसी को इस शास्त्र में राशि छत्र कहते हैं। लग्न (उदय) से सूर्य को जाने वाली वीथी की गणना करके—

तावता राशिना छत्रमिति केचित् प्रचक्षते।

जितनी राशि आये उसी को छत्र कहते हैं—ऐसा किसी किसी का मत है।

मेषस्य वृषभं छत्रं मेषच्छत्रं वृषस्य च ॥३॥
युग्मकर्कटसिंहानां मेषच्छत्रमुदाहृतम्।
कन्यायाश्च परं छत्रं तुलाया वृषभस्तथा ॥४॥
वृषभस्य युगच्छत्रं धनुषो मिथुनं तथा।
नक्रस्य मिथुनच्छत्रम् मेषः कुंभस्य कीर्तितम् ॥५॥
मीनस्य वृषभच्छत्रं छत्रमेवमुदाहृतम्।

मेष का छत्र वृष, वृष का मेष, मिथुन, कर्क और सिंह का मेष, कन्या और तुला का मेष, वृश्चिक और धनु का मिथुन, मकर का भी मिथुन, कुंभ का मेष और मीन का वृष छत्र राशि है।

उदयात् सप्तमे पूर्णं अर्धं पश्येत्रिकोणभे ॥६॥
चतुरस्त्रे त्रिपादं च दशमे पादएव च ॥

अपने से सप्तम स्थानीय ग्रह को ग्रह पूर्ण दृष्टि से देखता हैं, चतुरस्त्र का अर्थ केन्द्र हैं। पर, यहां केवल चतुर्थ मात्र मे तात्पर्य है। तीन चरण से त्रिकोण (५, ९,) को आधा यानी दो चरण से और दशम को एक ही चरण से देखता है।

एकादशे तृतीये च पदार्धं वीक्षणं भवेत् ॥७॥

ग्यारहवें और तीसरे स्थान को ग्रह आधे चरण से देखता हैं।

रवीन्दुसितसौम्यास्तु बलिनः पूर्णवीक्षणे ।
अर्धेक्षणे सुराचार्य्यस्त्रिपादपादार्धयोः कुजः ॥८॥
पादेक्षणे बली सौरिः वीक्षणे बलमीरितम् ।

सूर्य, चंद्र, शुक्र और बुध पूर्ण दृष्टि में बली होते हैं, बृहस्पति आधी में, मंगल त्रिपाद और अर्द्ध में तथा शनि पाद दृष्टि मे बली होते हैं—ऐसा दृष्टिबल कहा गया है।

तिर्यक् पश्यन्ति तिर्यञ्चो मनुष्याः समदृष्टयः ॥९॥
ऊर्द्ध्वेक्षणे पत्ररथाः अधोनेत्रं सरीसृपः ।

तिर्यग् योनि के ग्रह तिरछे देखते हैं, मनुष्यसंज्ञक ग्रह समदृष्टि अर्थात् सामने देखने वाले होते हैं। पत्ररथ ऊपर की ओर देखते हैं और सरीसृप संज्ञक ग्रह नीचे देखते हैं। ग्रहों की इस प्रकार की संज्ञायें पहले ही बता दी गयी हैं।

अन्योऽन्यालोकितौ जीवचन्द्रौ ऊर्द्ध्वेक्षणो रविः ॥१०॥
पश्यत्यरः कटाक्षेण पश्यतोऽथ कवीन्दुजौ ।
एकदृष्ट्यार्कमन्दौ च ग्रहाणामवलोकनम् ॥११॥

बृहस्पति और चंद्र एक दूसरे को देखते हैं। सूर्य ऊपर को देखता है। मंगल, शुक्र और बुध कटाक्ष से देखते हैं, सूर्य और शनि एक दृष्टि से देखते हैं—इस प्रकार ग्रहों का अवलोकन है।

मेषः प्राच्यां धनुःसिंहावग्नावुक्षश्च दक्षिणे ।
मृगकन्ये च नैर्ऋत्यां मिथुनः पश्चिमे तथा ॥१२॥
वायुभागे तुलाकुम्भौ उदीच्यां कर्क उच्यते ।
ईशभागेऽलिमीनौ च नष्टद्रव्यादिसूचकाः ॥१३॥

नष्टद्रव्यादि के सूचन के लिये राशियों की दिशायें इस प्रकार हैं। मेष पूर्व, धनु और सिंह अग्नि कोण, वृष दक्षिण, मकर और कन्या नैर्ऋत्य कोण से, मिथुन पश्चिम, तुला, कुंभ वायव्य कोण, कर्क उत्तर तथा वृश्चिक और मीन ईशान में।

अर्कशुक्रारराह्वर्किचन्द्रज्ञगुरवः क्रमात् ।
पूर्वादीनां दिशामीशाः क्रमान्नष्टादिसूचकाः ॥१४॥

सूर्य, शुक्र, मंगल, राहु, शनि, चंद्रमा, बुध और बृहस्पति ये ग्रह क्रमशः पूर्वादि-दिशाओं के स्वामी हैं।

मेषयुग्मधनुःकुम्भतुलासिंहाश्च पूरुषाः।
राशयोऽन्ये स्त्रियः प्रोक्ता ग्रहाणां भेद उच्यते ॥१५॥

मेष, मिथुन, धनु, कुंभ, तुला और सिंह ये पुरुषराशियाँ हैं बाकी स्त्रीराशि।

पुमान्सोऽर्कारगुरवः शुक्रेन्दुभुजगाः स्त्रियः।
मन्दज्ञकेतवः क्लीबा ग्रहभेदाः प्रकीर्तिताः ॥१६॥

ग्रहों में सूर्य, मंगल, बृहस्पति, ये पुरुषग्रह, शुक्र, चंद्र और राहु स्त्रीग्रह तथा शनि बुध और केतु ये क्लीव ग्रह हैं।

तुलाकोदण्डमिथुना घटयुग्मं नराः स्मृताः।
एकाकिनौ मेषसिंहौ वृषकर्कालिकन्यकाः ॥१७॥
एकाकिनः स्त्रियो प्रोक्ताः स्त्रीयुग्मौ मकरान्तिमौ।
एकाकिनोऽर्केन्दुकुजाः शुक्रज्ञार्काहिमन्त्रिणः ॥१८॥
एते युग्मग्रहाः प्रोक्ताः शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके।

तुला, धनु, मिथुन, कुंभ, मिथुन (?) ये पुरुषग्रह हैं, मेष सिंह ये एकाकी पुरुष हैं। वृष कर्क वृश्चिक कन्या ये एकाकी स्त्रीराशि हैं। मकर और मीन ये स्त्रीयुग्म कहे जाते हैं।

सूर्य चन्द्रमा मंगल ये एकाकी ग्रह हैं और शुक्र बुध शनि राहु बृहस्पति ये ग्रहयुग्म ग्रह के नाम से इस ज्ञान प्रदीपक में कहे गये हैं।

विप्राः कर्क्यालिमीनाश्च धनुःसिंहक्रिया (?) नृपाः ॥१९॥
तुलायुग्मघटा वैश्याः शूद्रा नक्रोक्षकन्यकाः।

कर्क, वृश्चिक, और मीन ये ब्राह्मण, धनुः सिंह और मेष ये क्षत्रिय, तुला मिथुन और कुंभ ये वैश्य तथा वृष मकर और कन्या ये शूद्रराशियाँ हैं।

नृपौ अर्ककुजौ विप्रौ बृहस्पतिनिशाकरौ ॥२०॥
बुधा वैश्यो भृगुः शूद्रो नीचावर्कभुजङ्गमौ।

ग्रहों में भी सूर्य मंगल क्षात्रय, बृहस्पति और चंद्र ब्राह्मण, बुध वैश्य, शुक्र शूद्र और शनि तथा राहु नीच हैं।

रक्ताः मेषधनुःसिंहाः कुलीरोक्षतुलास्सिताः ॥२१॥
कुम्भालिमीनाः श्यामाः स्युः कृष्णयुग्मांगनामृगाः ।

मेष, धनु और सिंह ये लाल, कर्क, वृष और तुला ये सफेद, कुंभ वृश्चिक और मीन ये श्याम तथा मिथुन कन्या और मकर ये कृष्ण वर्ण के हैं

शुक्रः सितः कुजो रक्तः पिङ्गलाङ्गो बृहस्पतिः ॥२२॥
बुधः श्यामः शशी श्वेतः रक्तः सूर्योऽसितः शनिः ।
राहुस्तु कृष्णवर्णः स्यात् वर्णभेदा उदाहृताः ॥२३॥

शुक्र का वर्ण श्वेत, मंगल का लाल, गुरु का पिंगल, बुध का श्याम, चंद्रका श्वेत, सूर्य का लाल, शनि का कृष्ण, राहु का वर्ण काला है।

चतुरस्रं च वृत्तं च कृशमध्यंत्रिकोणतः ।
दीर्घवृत्तं तथाष्टास्रं चतुरस्रायतं तथा ॥२४॥
दीर्घायेते क्रमादेते सूर्याद्याः क्रमशो मताः ।

सूर्य आदि नव ग्रहों का स्वरूप क्रमशः इस प्रकार है—चौकोना, वृत्ताकार, बीच में पतला, त्रिभुज, दीर्घवृत्त (अंडाकार) अष्टभुज, चौकोना आयत और लंबा।

पञ्चैकविंशयो द्दष्टी नवदिक् षोडशाब्धयः ॥२५॥
भास्करादिग्रहाणां च किरणाः परिकीर्तिताः ।

५, २१, २, ९. १०, १६ और ४ ये क्रमशः सूर्यादि ग्रहों की किरणें हैं।

वसु रुद्राश्च रुद्राश्च वह्निषट्कं चतुर्दशम् ॥२६॥
विश्वाशा शतवेदाश्च चतुस्त्रिंशदजादिना ।
कुलीराजतुलाकुम्भकिरणा वसुसंख्यया ॥२७॥
मिथुनोक्षमृगाणां च किरणा ऋतुसंख्यया ।
सिंहस्य किरणाः सप्त कन्याकार्मुकयोस्तथा ।२८।
चत्वारो वृश्चिकस्योक्ताः सप्तविंशत् झषस्य च ।

८, ११, ११, ३, ६, १४, १३, १० १००, ४, ४ और ३० ये संख्यायें क्रमशः मेषादि राशियों की किरणों की द्योतक हैं। किसी के मत में कर्क, मेष तुला और कुंभ इनकी

किरणों की संख्या ८ हैं। मिथुन वृष और मकर की ६, सिंह कन्या और मकर की ७ वृश्चिक की ४ और मीन की किरणसंख्या २७ हैं।

सप्ताष्टशरवह्न्यद्रिरुद्रयुग्माब्धिषड्वसु ॥२९॥
सप्तविंशतिसंख्याश्च मेषादीनां परे विदुः।

कुछ आचार्य ऐसा भी मानते हैं कि मेषादि राशियों की संख्या क्रमशः, ७ ८ ५ ३ ७ ११ २ ४ ४ ६ ८ और २७ ये हैं।

कुजेन्दुशनयो ह्रस्वा दीर्घा जीवबुधोरगाः ॥३०॥
रविशुक्रौ समौ प्रोक्तौ शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके।

मंगल चन्द्रमा और शनि ये ह्रस्व, बृहस्पति बुध राहु ये लंबे कदके तथा सूर्य शुक्र ये समान कदके इस ज्ञानप्रदीपक में कहे गये हैं।

आदित्यशनिसौम्यानां योजनं चाष्टसंख्यया ॥३१॥
शुक्रस्य षोडशोक्तानि गुरोश्च नवयोजनम्।

सूर्य, शनि और बुध इनके योजन की संख्या ८ होती है। शुक्र की योजन संख्या १६ और गुरु की नव है।

भूमिजः षोडशवयाः शुक्रः सप्तवयास्तथा ॥३२॥
विंशद्वयाश्चन्द्रसुतः गुरुस्त्रिंशद्वयाः स्मृतः।
शशांकः सप्ततिवयाः पञ्चाशद्‌ भास्करस्य वै ॥३३॥
शनैश्चरस्य राहोश्च शतसंख्यं वयो भवेत्।

मंगल की अवस्था १६ वर्ष की, शुक्र की सात की, बुध की बीस की, गुरु की तीस की, चन्द्रमा की सत्तर की, सूर्य की पचास की, शनि और राहु की अवस्था सौ वर्ष की है।

तिक्तौ शनैश्चरो राहुः मधुरस्तु बृहस्पतिः ॥३४॥
अम्लं भृगुर्विधुः क्षारं कुजस्य क्रूरजा रसाः।
तवरः (?) सोमपुत्रस्य भास्करस्य कटुर्भवेत् ॥३५॥

शनि और राहु तिक्त, बृहस्पति मधुर, शुक्र अम्ल, मंगल खारा बुध कसैला और रवि कटु-ग्रह हैं।

वृषसिंहालिकुंभाश्च तिष्ठन्ति स्थिरराशयः ।
कर्किनक्रतुलामेषाश्चरन्ति चरराशयः ॥३६॥
युग्मकन्याधनुर्मीनराशयो द्विस्वभावतः ।

वृष, सिंह, वृश्चिक और कुंभ ये स्थिर राशियाँ हैं। कर्क, मकर, तुला और मेष ये चर राशियां हैं। मिथुन कन्या धनु और मीन ये द्विस्वभाव हैं।

धनुर्मेषवनं प्रोक्तं कन्यका मिथुनं पुरे ॥३७॥
हरिर्गिरौ तुलामीनमकराः सलिलेषु च ।

धनु और मेष इनका स्थान वन है, कन्या और मिथुन का ग्राम, सिंह का पर्वत और तुला मीन और मकर का स्थान जल में है।

नद्यां कुलीरः कुल्यायां वृषः कुंभः पयोघटे ॥३८॥
वृश्चिकः कूपसलिले राशीनां स्थितिरीरिता ।

कर्क का स्थान नदी में, वृष का कुल्या (क्षुद्रजलाशय) में कुंभ का जल के घड़े में, वृश्चिक का स्थान कुएं के पानी में है—यही राशियों की स्थिति है।

वनकेदारकोद्यानकुल्याद्रिवनभूमयः ॥३९॥
आपगादिसरिद्वापि तटाकाः सरितस्तथा ।

वन, क्यारी, बगीचा, कुल्या (क्षुद्रजलाशय) पर्वत, वन, भूमि जलाशय या नदी, तड़ाग (तालाव) तथा नदियाँ—

जलकुंभश्च कूपश्च नष्टद्रव्यादिसूचकौ ॥४०॥
घटककन्या युग्मतुला ग्रामेऽजालिधनुर्हरिः ।

जल कुंभ, कूप, ये ऊपर के वताये अनुसार स्थान नष्ट वस्तु के सूचक हैं। कुंभ कन्या, मिथुन और तुला राशियाँ गाँव में—

वने चापि कुलिरोक्षनक्रमीनाः जलस्थिताः ॥४१॥
विपिने शनिभौमार्कि भृगुचन्द्रौ जले स्थितौ ।

मेष, वृश्चिक, धनु और सिंह वन मे तथा, कर्क वृष, मकर और मीन ये जल में रहते हैं। इसो प्रकार शनि, भौम और सूर्य बन में, शुक और चंद्रमा जल में—

बुधजीवौ च नगरे नष्टद्रव्यादिसूचकौ ॥४२॥
भौमे भूमिर्जलं काव्ये शशिनो बुधभागिनः।

बुध और वृहस्पति नगर में नष्ट द्रव्य के सूचक होते हैं। इसी तरह मंगल के बलवान होने पर भूमि, शुक्र के बली होने पर जल चंद्रमा और बुध के बलवान होने पर—

निष्कुटश्चैव रंध्रश्च गुरुभास्करयोर्नभः ॥४३॥
मंदस्य युद्धभूमिश्च बलोत्तरखगे स्थिते (?)।

गृहोद्यान, वृहस्पति से छिद्र, सूर्य से आसमान, शनि के बलवान होने पर युद्ध की भूमि—ये नष्ट द्रव्य के सूचक होते हैं।

सूर्यार्कारबले भूमौ गुरुशुक्रबले खगे ॥४४॥
चंद्रसौम्यबले मध्ये केश्चिदेवमुदाहृतम्।

सूर्य, मंगल और शनि के बलवान् होने पर भूमि में गुरु और शुक्र के बली होने पर आकाश में चन्द्रमा और बुध के बली होने पर बीच—ये किन्हीं किन्हीं का मत है।

निशादिवससन्ध्याश्च भानुयुग्राशिमादितः ॥४५॥
चरराशिवशादेवमिति केचित्प्रचक्षते।

कुछ लोग चर, स्थिर और द्विस्वभाव राशियों के वश से रात, दिन और सन्ध्या का क्रमशः निर्देश करते हैं।

ग्रहेषु बलवान्यस्तु तद्वशाद्बलमीरयेत् ॥४६॥
शनेर्वर्षं तदर्धं स्याद्भानोर्मासद्वयं विदुः।

ग्रहों का बल विचार करते समय जो बलवान हो उसी के अनुसार उसका बल कहना चाहिये। शनि का डेढ़ वर्ष काल हैं, सूर्य का दो मास—

शुक्रस्य पक्षो जीवस्य मासो भौमस्य वासरः ॥४७॥
इंदोर्मुहूर्तमित्युक्तं ग्रहाणां बलतो वदेत्।

शुक्र का एक पक्ष, वृहस्पति का एक मास, मंगल का एक दिन; चंद्रमा का एक मुहूर्त काल है। प्रश्न विचारते समय ग्रहों का बलाबल विचार कर तदनुसार फल कहना चाहिये।

एतेषां घटिका प्रोक्ता उच्चस्थानजुषां क्रमात् ।
स्वगृहेषु दिनं प्रोक्तं मित्रभे मासमादिशेत् ।

यदि ग्रह अपने उच्च के हों तो घटिका, स्वगृही हों तो दिन, मित्र गृह हों तो मास का आदेश करना—

शत्रुस्थानेषु नीचेषु वत्सरानाहुरुत्तमाः ॥४९॥

शत्रु गृही होने पर या नीच राशि में होने पर एक वर्ष होते हैं ऐसा उत्तमों का कहना है

सूर्यारजीवविच्छुक्रशनिचन्द्रभुजंगमाः ।
प्रागादिदिक्षु क्रमशश्चरेयुर्यामसंख्यया ॥५०॥
प्रागादीशानपर्यन्तं वारेशाद्यं तगा ग्रहाः ।

सूर्य, मंगल, बृहस्पति, बुध, शुक्र, शनि, चंद्र राहु ये आठ ग्रह क्रमशः पूर्वादि दिशाओं के स्वामी होते हैं ।

प्रभाते प्रहरे चान्ये द्वितीयेऽग्न्यादिकोणतः ॥५१॥
एवं याम्यतृतीये च क्रमेण परिकल्पयेत् ।

कुछ लोगों की राय में दिन के आठ पहरों में प्रथम प्रहर में पूर्व की ओर उसी दिन का वारेश रहता है, द्वितीय में अग्नि कोण में उससे दूसरा, तृतीय में दक्षिण में तीसरा इस प्रकार से दिगीश रहते हैं ।

भूतं भव्यं वर्तमानं वारेशाद्या भवंति च ॥५२॥
तद्दिने चंद्रयुक्तर्क्षं यावद्भिरुदयादिकम् ।
तावद्भिर्वासरैः सिद्धं केचिदंशाधिपाद्व विदुः ॥५३॥

उक्त प्रकार से भूत भविष्य और वर्तमान फल द्योतक वारेश होते हैं । प्रश्न के दिन चांद्र नक्षत्र जितने अंशादि से उदित हुआ है उतने ही दिन में कार्य सिद्ध होता है । पर दूसरों के मत से नवमांश के स्वामी के अंशादि पर से इसे निकालते हैं ।

सार्धद्विनाडिपर्यंतमंकलग्नं प्रचक्षते ।
प्रश्ने निश्चित्य घटिकाः सार्धद्विघटिकाः क्रमात् ॥५४॥
तद्यथाकाललग्नं तु तदा पूर्वा दिशा न्यसेत् ।
तद्वशात्प्रष्टुरारूढं ज्ञात्वा चारूढकेश्चरात् ॥५५॥
आरुढाधिपतिर्यत्र प्रभाते नष्टनिर्गमः ।

मेषकर्कितुलानक्राः धातुराशय ईरिताः ॥५६॥
कुंभसिंहालिवृषभाः श्रूयंते मूलराशयः ।
धनुर्मीननृयुक्कन्या राशयो जीवसंज्ञकाः ॥५७॥

मेष, कर्क, तुला और मकर ये धातुराशियाँ हैं। कुंभ, सिंह, वृश्चिक और वृष ये मूलराशियाँ हैं। धनु, मीन, मिथुन और कन्या ये जीवराशियाँ हैं।

कुजेंदुसौरिभुजगा धातवः परिकीर्तिताः ।
मूलं भृगुर्दिनाधीशौ जीवौ धिषणसौम्यजौ ॥५८॥

इसी प्रकार मंगल, चन्द्रमा, शनि और राहु ये धातु ग्रह, शुक्र और सूर्य मूल ग्रह बुध और बृहस्पति ये जीव ग्रह हैं।

स्वक्षेत्रभानुरुच्चंद्रो धातुरन्यश्च पूर्ववत् ।
स्वक्षेत्रभानुजो वल्ली स्वक्षेत्रधातुरिन्दुजः ॥५९॥ (?)

विशेषता यह है कि, सूर्य अपने गृह का, और चन्द्रमा उच्च का धातु होते हैं। शनि स्वक्षेत्र में मूल और बुध स्वक्षेत्र में धातु होता है, शेष ग्रह पूर्ववत् ही रहते हैं।

ताम्रो भौमस्त्रपुर्ज्ञश्च कांचनं धिषणो भवेत् ।
रौप्यं शुक्रः शशी कांस्यः अयसं मंदभोगिनौ ॥६०॥

मंगल, तामा, बुध त्रपु (पीतल ?), गुरु सोना, शुक्र चांदी, चन्द्रमा कांसा, शनि और राहु लोहे होते हैं।

भौमार्कमंदशुक्रास्तु स्वस्वलोहस्वभावकाः ।
चन्द्रज्ञगुरवः स्वस्वलोहाः स्वक्षेत्रमित्रपाः ॥६१॥
मिश्रे मिश्रफलं ज्ञात्वा ग्रहाणां च फलं क्रमात् ।

मंगल सूर्य शनि शुक्र ये अपने २ भाव में लोहकार के होते हैं, चन्द्रमा बुध बृहस्पति अपने क्षेत्र तथा मित्र क्षेत्र में होने से लोहकारक कहे गए हैं। मिश्र में मिश्रित फल का आदेश क्रम से करना चाहिये।

शिला भानोर्बुधस्याहुः मृत्पात्रं चोषरं विदुः ॥६२॥
सितस्य मुक्तास्फटिके प्रवालं भूसुतस्य च ।
अयसं भानुपुत्रस्य मंत्रिणः स्यान्मनःशिला ॥६३॥
नीलं शनेश्च वैडूर्य्यं भृगोर्मरकतं विदुः ।
सूर्यकान्तो दिनेशस्य चंद्रकान्तो निशापतेः ॥६४॥
तत्तद्ग्रहवशान्नित्यं तत्तद्राशिवशादपि ।

सूर्य को शिला, बुध का मृत्पात्र और उषर, शुक्र का मोती और स्फटिक मणि, मंगल का मूंगा, शनि का लोहा, गुरु का मनःशिला, (धातु विशेष) शनि का नीलम और वैडूर्य, शुक्र का मरकत. सूर्य का सूर्यकान्त, चंद्र का चंद्रकांत, ये रत्न प्रश्न विचारते समय तत्तद्राशि और ग्रह पर से बताने चाहिये ।

बलाबलविभागेन मिश्रे मिश्रफलं भवेत् ॥६५॥
नृराशौ नृखगैर्दृष्टे युक्ते वा मर्त्यभूषणम् ।
तत्तद्राशिवशादन्यत् तत्तद्रूपं विनिर्दिशेत् ॥६६॥

बली, निर्बल का विचार करके दृढ़ और अदृढ़ फल बताना चाहिये । यदि मिश्रबल हो तो फल भी मिश्र होता है । यदि नरराशि मनुष्यग्रह-द्वारा दृष्ट किंवा युक्त हो तो धातुसंबंधी प्रश्न में मानवभूषण बताना चाहिये । शेष राशि और ग्रह के स्वरूपवश × × × × ।

इति धातुचिंता

मूलचिन्ताविधौ मूलान्युच्यन्ते पूर्वशास्त्रतः ।

अब पूर्वशास्त्रानुसार मूलचिन्ता का वर्णन करते हैं ।

क्षुद्रसस्यानि भौमस्य सस्यानि बुधजीवयोः ॥६७॥
कक्षाणि ज्ञस्य भानोश्च वृक्षश्चन्द्रस्य वल्लरी ।
गुरोरिक्षुर्भृगोश्चिंचा भूरुहाः परिकीर्तिताः ॥६८॥
शनेर्दारूरगस्यापि तीक्ष्णकण्टकभूरुहाः ।

मङ्गल के छोटे सस्य, बुध और बृहस्पति के बड़े सस्य, × × × × सूर्य का वृक्ष, चन्द्रमा की लतायें, बृहस्पति की ईख, शुक्र की इमली, शनि का दारु, राहु के तीखे कांटेदार वृक्ष ये वृक्ष कहे गये हैं ।

अजालिक्षुद्रसस्यानि वृषकर्किंतुलालता ॥६९॥
कन्यकामिथुने वृक्षे कण्टद्रुमघटे मृगे।
इक्षुर्मीनधनुःसिंहाः सस्यानि परिकीर्तिताः ॥७०॥

मेष वृश्चिक इनके क्षुद्र सस्य, वृष कर्क और तुला इनकी लतायें, कन्या और मिथुन इनके वृक्ष, कुंभ और मकर इनके काँटेदार वृक्ष, मीन, धनु और सिंह इनके सस्य ईख हैं।

अकंटद्रुमः सौम्यस्य क्रूराः कण्टकभूरुहाः।
युग्मकण्टकमादित्ये भूमिजे ह्रस्वकण्टकाः ॥७१॥
वक्राश्च कण्टकाः प्रोक्ताः शनैश्चरभुजंगमौ।
पापग्रहाणां क्षेत्राणि तथाकण्टकिनो द्रुमाः ॥७२॥

बुध के बिना काँटे के वृक्ष, क्रूर ग्रहों के भी काँटेदार वृक्ष सूर्य का दो काँटों वाला, मंगल का छोटे कांटों वाला, शनि राहु का टेढ़े कांटों वाला वृक्ष कहा गया है × × × ×।

सूक्ष्मकक्षाणि सौम्यस्य भृगोर्निष्कंटकद्रुमाः।
कदली चौषधीशस्य गिरिवृक्षा विवस्वतः ॥७३॥
बृहत्पत्रयुता वृक्षा नारिकेलादयो गुरोः।
तालाः शनेश्च राहोश्च सारसारौ तरू वदेत् ॥७४॥
सारहीनशनीन्द्वर्कंवन्तरस्सारौ कपित्थकौ।
बहुसाराः स्वराशिस्थशनिज्ञकुजपन्नगाः ॥७५॥

बुध का सूक्ष्म वृक्ष, शुक्र का निष्कंटक वृक्ष चंद्र का कदली वृक्ष, सूर्य का पर्वत वृक्ष, बृहस्पति का नारियल आदि बड़े पत्तों वाले वृक्ष, शनि का ताल वृक्ष और राहु का सारवान् वृक्ष कहा गया है × × × × अपने राशिस्थ शनि, बुध मंगल और राहु के बहुसार वृक्ष कहे गये हैं।

अन्तस्सारो ह्यरिस्थाने बहिस्सारस्तु मित्रगे।
त्वक्कन्दपुष्पछद्नाः फलपक्वफलानि च ॥७६॥
मूलं लता च सूर्याद्याः स्वस्वक्षेत्रेषु ते तथा।

शत्रुस्थानस्थ ग्रह अन्तःसार वृक्ष और मित्रस्थानस्थ बहिः सार वृक्ष को कहते हैं। अपनी अपनी राशि में स्थित सूर्य आदि ग्रह क्रमशः त्वक्, मूल, पुष्प, छाल, फल, पके फल, मूल, और लता इनके बोधक होते हैं।

मुद्गं ज्ञस्याढकः श्वेतः भृगोश्च चणकं कुजे ॥७७॥
तिलं शशांके निष्पावं रवेर्जीवोऽरुणाढकः।
माषं शनेर्भुजंगस्य कुथान्यं धान्यमुच्यते ॥७८॥

बुध का मूंग, शुक्र का सफेद अरहर, मंगल का चना, चंद्रमा का तिल, सूर्य का मटर, बृहस्पति का लाल अरहर, शनि का उड़द और राहु का कुलथी धान्य है।

प्रियंगुर्भूमिपुत्रस्य बुधस्य निहगस्तथा।
स्वस्वरूपानुरूपेण तेषां धान्यानि निर्दिशेत् ॥८९॥

मंगल का प्रियंगु, (टांगुन) बुध का निहग धान्य होता है। ग्रहों का धान्य उनके रूप के अनुसार ही बताना चाहिये।

उन्नते भानुकुजयोर्वल्मीके बुधभोगिनोः
सलिले चन्द्रसितयोः गुरोः शैलतटे तथा ॥८०।
शनेः कृष्णशिलास्थाने मूलान्येतासु भूमिषु।

सूर्य मंगल का उन्नत स्थान मे, बुध और राहु का बिल में, चन्द्र शुक्र का पानी में, बृहस्पति का पर्वततल में और शनि का कृष्ण शिलातल मे स्थान है। इन्हीं भूमियों में मूल की चिन्ता करना।

वर्णं रसं फलं रत्नमायुधं चाक्तमूलिका ॥८१॥ (?)
पत्रं फलं पक्वफलं त्वङ्मूलं पूर्वभाषितम्।

वर्ण, रस, फल, रत्न, अस्त्र, मूल, पत्र त्वक् आदि का विचार पूर्व कथित रीति से करना चाहिये।

इति मूलकाण्डः



चन्द्रो माता पिताऽऽदित्यः सर्वेषां जगतामपि ।
गुरुशुक्रारसंदज्ञाः पंच भूतस्वरूपिणः ॥१॥

सारे जगत् को माता चन्द्रमा और पिता सूर्य हैं। बृहस्पति शुक्र मंगल शनि और बुध ये पांचो पंच महाभूत हैं।

श्रोत्रत्वक्चक्षूरसनाघ्राणाः पञ्चेद्रियाण्यमी ।
शब्दश्स्पर्शौ रूपरसौ गंधश्च विषया अमी ॥२॥

श्रोत्र (कान) त्वक् (चर्म) आंख, जीभ, घ्राण (नाक) ये पाच इन्द्रिय हैं। और शब्द स्पर्श, रूप, रस और गन्ध ये क्रमशः इनके विषय हैं।

ज्ञानं गुर्वादिपंचानां ग्रहाणां कथयेत्क्रमात् ।
गुरोः पञ्च भृगोश्चाब्धिः त्रयं ज्ञस्य कुजस्य द्वे ॥३॥
एकं ज्ञानं शनेरुक्तं शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके ।

गुरु, शुक्र, मंगल, बुध और शनि इनका ज्ञान क्रमशः ५, ४, २, १, और ३ हैं। ऐसा ज्ञान प्रदीपक शास्त्र का कहना है।

भौमवर्गा इमे प्रोक्ताः शंखशुक्तिवराटकाः ॥४॥
मत्कुणाः शिथिलायूकमक्षिकाश्च पिपीलिकाः ।

शंख, शुक्ति, कौड़ी, खटमल, जू, मक्खियां, चीटियां—ये भौमवर्ग अर्थात् मंगल के जीव हैं।

बुधवर्गा इमे प्रोक्ताः षट्पदा ये भृगोस्तथा ॥५॥
देवा मनुष्याः पशवो विहगाः गुरोः । (?)
तथैकज्ञानिनो वृक्षाः शनिवृक्षाः प्रकीर्तिताः ॥६॥
एकद्वित्रिचतुःपंचगगनादिगणाः स्मृताः ।

भौंरे बुधवर्ग में, देव मनुष्य शुक्र वर्ग में, पशु और पक्षी गुरु वर्ग में, और वृक्ष शनिवर्ग में कहे गये हैं × × × × × ।

देहो जीवस्सितो जिह्वा बुधो नासेक्षणं कुजः ॥७॥
श्रोत्रं शनैश्चरश्चैव ग्रहावयवमीरितम् ।

बृहस्पति देह, शुक्र जीभ, बुध नाक, मंगल आँख, और शनि कान ये ग्रहों के शारीरिक अवयव हैं ।

द्विपाच्चतुष्पाद् बहुपाद्विहगो जानुगः क्रमात् ॥८॥
शंखशंबूकसंधश्च बाहुहीनान् विनिर्दिशेत् ।

दो पैर वाला, चार पैर वाला, बहुत पैर वाला, पक्षी, जंघा से चलने वाला, शंख, घोंघा संध और बाहुहीन ये सूर्यादि ग्रह के भेद हैं ।

यूकमत्कुणमुख्याश्च बहुपादा उदाहृताः ॥९॥
गोधाः कमठमुख्याश्च बहुपादा उदाहृताः ।

यूक (जूं) मत्कुण (खटमल) वगैरह ये बहुपाद कहे जाते हैं, सर्पिणो, कच्छप आदि भी इसी तरह से बहुपाद कहे जाते हैं ।

मृगमीनौ तु खचरौ तत्रस्थौ मंदभूमिजौ ॥१०॥
वनकुक्कुटकाकौ च चिंतिताविति कीर्तियेत् ।
तद्राशिस्थे भृगौ हंसः शुकः सौम्यो विधौ शिखी ॥११॥
वीक्षिते च तदा ब्रूयात् ग्रहे राहौ विचक्षणः ।

प्रश्न लग्न यदि मकर या मीन हों और उस पर शनि या मंगल हों तो क्रमशः वनकुक्कुट और काक कहना । अपने राशि पर शुक्र हो तो हंस, बुध हो तो शुक, चंद्रमा हो तो मोर कहना चाहिये × × × × × × × × × × ।

तद्राशिस्थे रवौ तेन दृष्टे ब्रूयात् खगेश्वरं ॥१२॥
बृहस्पतौ सितबका भारद्वाजस्तु भोगिनि ।
कुक्कुटो ज्ञस्य भौमस्य दिवांधः परिकीर्तितः ॥१३॥
अन्यराशिस्थखेटेषु तत्तद्राशिस्थलं भवेत् ।

अपने राशि पर सूर्य हो तो गरुड़, बृहस्पति हो तो श्वेत बक तथा राहु हो तो भरदूल पक्षी कहना । बुध अपनी राशि पर हो तो मुर्गा, मंगल हो तो उल्लू और अन्य राशिस्थ ग्रहों के लिये उन राशियों का स्थल कहना चाहिये ।

सौम्ये खेटेऽडजाः सौम्याः क्रूरगाः इतरे खगाः ॥१४॥
उच्चराश्युदये सूर्ये दृष्टे भूपास्तदाश्रिताः।
उच्चस्थाने स्थिते राजा मंत्री स्वक्षेत्रगे स्थिते ॥१५॥
राजाश्रिता मित्रभस्ता (?) वीक्षिते समये भटः।
अन्यराशिषु युक्तेषु दृष्टे वा संकरान्वदेत् ॥१६॥

सौम्य ग्रह में सौम्यपक्षी और क्रूर ग्रह में क्रूर जानना चाहिये। सूर्य अपनी उच्च राशि में उदित हो, और शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो सम्राट्—उच्च में राजा, स्वक्षेत्रग होने से मंत्री, मित्रगृह में मित्र दृष्ट होने से राजाश्रित योद्धा कहना चाहिये। अन्य राशि से युक्त और दृष्ट होने से संकर बताना चाहिये।

कंस-कारकुलालश्च कंसविक्रयिणस्तथा।
शंखच्छेदी धातुपूर्णान्वेक्षिणश्चूर्णकारिणः ॥१७॥

कांसे का काम करने वाला, कुम्हार, कांसा का बेंचने वाला; शंखछेदी, धातु चूने या देखने वाला, चूण करने वाला—

नृराशौ जीवदृष्टे च भानुवद् ब्राह्मणोदयः।
कुजयुक्तेऽथवा दृष्टे वणिजः परिकीर्तितः ॥१८॥
बुधयुक्तेऽथवादृष्टे तद्वद्ब्रूयात् तपस्विनः।
तद्वच्छुक्रेषु वृषलाः शंकरा शशिभोगिनौ ॥१९॥
किञ्चिदत्र विशेषोक्तिर्मीनभारककिंकराः।

यदि मनुष्य राशि में सूर्य हो और बृहस्पति से दृष्ट हो तो ब्राह्मण बताना। कुज (मंगल) से युक्त किंवा दृष्ट हो तो वनिया बताना, बुध से युत या दृष्ट हों तो तपस्वी शुक्र से युक्त या दृष्ट हो तो शूद्र और वर्णसंकर। मीन राशि चंद्र और राहु से युक्त या दृष्ट हो तो भारवाहक और किंकर बताना।

चन्द्रस्य भिषजो ज्ञस्य वैश्यश्चौरगणाः स्मृताः ॥२०॥

नर राशि में सूर्य यदि चंद्र से दृष्ट या युक्त हो तो वैद्य और बुध से वैश्य और चोर बताना चाहिये।

राहोर्गरजचांडालस्तस्करा: परिकीर्तिता: ।

राहु से युक्त या दृष्ट होने पर विष देने वाला चाण्डाल बताना × × × × ।

शनेस्तरुच्छिद: प्रोक्त: राहोर्धीवरनापितौ ॥२१॥
शंखच्छेदो नट: कारुर्नर्तक: शशिनस्तथा ।

इसके अतिरिक्त शनि से वृक्ष काटने वाला, राहु से धीवर या नाई, चंद्र से शंखछेदी, कारीगर, नर्तक आदि कहना चाहिये। यह ग्रहों का वली होना बताया गया हैं।

चूर्णकृन्मौक्तिकग्राही शुक्रस्य परिकीर्तित: ॥२२॥
तत्तद्राशिवशातीततत्तद्राशिस्थितं ग्रहम् ।
तत्तद्राशिस्थखेटानां बलात्तु नष्टनिर्गमौ ॥२३॥

इसी प्रकार शुक्र के बली होने से चूना बनाने वाला, मोती का ग्रहण करने वाला बताना चाहिये। लग्न की राशि जितनी बीत चुकी हो जितनी बाकी हो, उस पर ग्रह जैसा हो उसके अनुसार नष्ट निर्गम का अतीत आदि कहना।

इति मनुष्यकाण्ड:

मेषराशिस्थिते भौमे मेषमाहुर्मनीषिण: ।
तस्मिन्नर्के स्थिते व्याघ्रं गोलांगूलं बुधे स्थिते ॥२४॥
शुक्रेण बृषभश्चन्द्रगुरवश्च तत: परं ।
महिषीसूर्यतनये फणौ गवय उच्यते ॥२५॥

मेष राशि में मंगल हो तो मेष, सूर्य हो तो व्याघ्र, बुध हो तो गोलांगूल, शुक्र हो तो वृष (बैल), × × × × शनि हो तो भैंस, राहु हो तो गवय (घोड़परास) बताना चाहिये

बृषभस्थे भृगौ धेनु: कुजेन्यं कुरुदाहृता: । (?)
बुधे कपिगुरावश्च (?) शशांके धेनुरुच्यते ॥२६॥
आदित्ये शरभ: प्रोक्तो महिषा शनिसर्पयो: ।

वृष में शुक्र हो तो गाय, मंगल हो तो कृष्णमृग, बुध हो तो बन्दर और ऊद विलार, चन्द्र हो तो गाय, सूर्य हो तो बारह सिंगा, शनि हो तो भैंस, और राहु हो तोभी भैंस बताना चाहिये।

कर्किस्थे च करो भौमे महिषी नक्रगे कुजे ॥२७॥
वृषभस्थे हरिर्युग्मकन्ययोः श्वा च फेरवः।
हरिस्थे भूमिजो व्याघ्रो रवींद्वोस्तत्र केसरी ॥२८॥
शुक्रो जीवा कटः सौम्ये त्वन्ये स्वाकृतयो मृगाः।

मंगल यदि कर्क में हो तो कर, मकर में हो तो भैंस, वृष में हो तो सिंह, मिथुन मे हो तो कुत्ता, कन्या में हो तो शृगाल, सिंह में हो तो व्याघ्र, उसी में रवि चन्द्र हों तो सिंह कहना चाहिये × × × × × ×।

तुलागते भृगोर्वत्सश्चंद्रे गौः परिकीर्तिता ॥२९॥
धनुस्थितेषु जीवेषु कुजेषु तुरगो भवेत्।
शनौ वक्रे स्थिते तत्र मत्तो गज उदाहृतः ॥३०॥

शुक्र तुला में हो तो बछडा और चन्द्रमा तुला में हो तो गाय, धनु में बृहस्पति या कुज हों तो घोडा और शनि यदि वक्री होकर उसी में हो तो मत्त हस्ती बताना चाहिये।

सर्पस्थे तत्र महिषो वानरो बुधजीवयोः।
शुक्रामृतांशुसौम्येषु स्थितेषु पशुरुच्यते ॥३१॥
जीवसूर्येक्षिते गर्भं वंध्यास्त्री च शनीक्षिते।
अंगारकेक्षिते शुक्रस्तत्र ज्ञात्वा वदेत्सुधीः ॥३२॥
वक्ष्येऽहं चिंतनां सूक्ष्मजनैस्तु परिचिंतिताम्।

उसी (धनु) राशि में यदि राहु हो तो भैंस, बुध और बृहस्पति हों तो वानर, शुक्र चन्द्र और बुध साथ ही हों तो पशु बताना चाहिये। उक्त राशि को यदि बृहस्पति और सूर्य देखते हों तो गर्भ तथा शनि देखता हो तो बन्ध्या बताना × × × × × ×।

धिषणे कुंभराशिस्थे त्रिकोणस्थे वा स पश्यति ॥३३॥
मृगराजे स्थिते सौम्ये धनुषि वीक्षिते शुभे।
स्मृतः कपिर्मेषगते शनौ ब्रूयान्मतङ्गजम् ॥३४॥

कुम्भ राशि का बृहस्पति हो या त्रिकोण में बैठ कर देखता हो, अथवा चन्द्रमा कुम्भ राशि में बैठा हो और धनु राशिस्थ शुभ ग्रह देखता हो तो वानर और मेष में शनि बैठा हो तो हाथी होता है।

कुजे मेषगते व्यंगं बुधे नर्तकगायकौ ।
गुरुशुक्रदिनेशेषु वणिजो वस्त्रजीवितः ॥३५॥
चन्द्रे तथागते मन्दे सिंहस्थे रिपुचिंतनम् ।
वृषस्थे महिषी तौले बक्केण वृश्चिके गतम् (?) ॥३६॥

मेष में कुज हो तो अंगहीन, बुध हो तो नर्तक और गायक, गुरु हो तो वणिक्, शुक्र हो तो वस्त्रजीवी, × × × × चन्द्र हो तौभी वही, शनि यदि सिंह में हो तो शत्रु, वृष में हो तो भैंस, × × × × × × × ×

मेषगे सूर्यतनये मृत्युः क्लेशादयस्तथा ।
मित्रादिपञ्चवर्गश्च ज्ञात्वा ब्रूयात्पुरोक्तितः ॥३७॥

शनि मेष में हो तो, मृत्यु तथा कष्ट होता है। ग्रहों का फल मित्रादि पंचवर्ग का बल बना के कहना चाहिये ।

इति चिन्तनकाण्डः

धातुराशौ धातुखगे दृष्टे तच्छत्रसंयुते ।
धातुचिंता भवेत्तद्वत् मूलजीवौ तथा भवेत् ॥१॥
धात्वृक्षस्थे मूलखगे जीवमाहुर्विपश्चितः ।
जीवराशौ धातुखगे दृष्टे वा यदि मूलिका ॥२॥
मूलराशौ जीवखगे धातुचिंता प्रकीर्तिता ।

× × × × × × × × ×

धातु राशि में यदि मूल ग्रह हो तो जीव, जीव राशि में धातु ग्रह हो या उससे दृष्ट हो तो मूल और मूल राशि में जीव ग्रह हो तो धातु की चिन्ता कहनी चाहिये

धातु राशि यदि धातु खग से दृष्ट हो और धातु छत्र से युक्त हो तो धातु चिन्ता कहनी चाहिये, इसी प्रकार जीव और मूल चिन्ता भी जाननी चाहिये ।

त्रिवर्गखेटकैर्दृष्टे युक्ते बलवशाद्वदेत् ।
पश्यन्ति चन्द्रं चेदन्ये वदेत्तत्तद्ग्रहाकृतिम् ॥३॥

धातुमूलञ्च जीवञ्च वंशं वर्णं स्मृतिं वदेत् ।
कंटकादिचतुष्केषु स्याच्छत्रुमित्रग्रहैर्युते ॥४॥
दृष्टे वा सर्वकार्याणां सिद्धिं ब्रूयाच्च चिंतनम् ।

× × × × × × × × × × × × × × × × ×

धातु, मूल और जीव राशियों पर से वंश, वर्ण और स्मृति बताना चाहिये। विचार करते समय कण्टकादिलग्न चतुष्टय आदि तथा शत्रु मित्र राशि और ग्रह का पूर्ण विचार कर सिद्धि बतानी चाहिये ।

उदये धातुचिंता स्यादारूढे मूलचिंतनम् ॥५॥
छत्रे तु जीवचिंता स्यादिति कैश्चिदुदाहृतम् ।
केन्द्रं फणपरं प्रोक्तमापोक्लीबं क्रमात्त्रयम् ॥६॥
चिन्ता तु मुष्टिनष्टानि कथयेत्कार्यसिद्धये ॥७॥

लग्न से धातु-चिन्ता, आरूढ़ से मूलचिन्ता और छत्र से जीवचिन्ता की जाती है ऐसा कुछ लोग मानते हैं। केन्द्र, (१, ४, ७, १०) पणफर (२, ५, ८, ११) आपोक्लीव (३, ६, ९, १२,) ये क्रम से हैं, इन पर से नष्टमुष्टि आदि का विचार किया जाता हैं।

इति धातुकाण्डः

तत आरूढगे चन्द्रे न नष्टं रुक् च शाम्यति ।
आरूढाद्दशमे वृद्धिश्चतुर्थे पूर्ववद्वदेत् ॥१॥
नष्टद्रव्यस्य लाभश्च सर्वहानिश्च सप्तमे ।
उदयाद् द्वादशे षष्ठे अष्टमारूढगे सति ॥२॥
चिंतितार्थो न भवति धनहानिर्हि षद्बलम् ।
तनुं कुटुम्बं सहजं मातरं जनकं रिपुम् ॥३॥
कलत्रं निधनं चैव गुरु कर्म फलं व्ययम् ।
दृष्टे विधिक्रमाद्भावं तस्य तस्य फलं वदेत् ॥४॥

चन्द्रमा यदि आरूढ़ राशि में होतो उत्तर इस प्रकार देना—वस्तु नष्ट नहीं हुई, रोग शान्त है,—आरूढ़ से दशम में हो तो बढ़ गया हैं, चतुर्थ में हो तो नष्ट वस्तु मिल गई, या स्थिति

पूर्ववत् है, सप्तम में हो तो सब नष्ट हो गया। यदि आरूढ लग्न से द्वादश, षष्ठ और अष्टम में हो तो—जिसकी चिन्ता है वह नहीं होगा, धनहानि, शत्रुबल, अपना, कलत्र का माता का, पिता का, निधन अनिष्ट, व्यय आदि फल कहना। ग्रहों की शुभाशुभ दृष्टि आदि का विचार भी करना।

रवीन्दूशुक्रजीवज्ञा नृराशिषु यदि स्थिताः।
मर्त्यचिन्ता ततः शौरिदृष्टेनार्थं कुजे (?) तथा ॥५॥
कुजस्य कलहः शौरेस्तस्करं गरलं भवेत्।
रविदृष्टेऽथवा युक्ते चिंतनादेव भूपतेः ॥६॥

यदि, रवि, चन्द्र, शुक्र, बृहस्पति और बुध मनुष्य राशि पर हों तो मर्त्य की चिंता, शनि यदि देखता हो तो अर्थ चिन्ता कहना। मनुष्यराशि पर मंगल हो तो कलह, शनि हो तो चोर या जहर की चिन्ता, रवि से दृष्ट अथवा युक्त हों तो राजा की चिन्ता कहनी चाहिये।

इत्यारूढकाण्डः

द्वितीये द्वादशे छत्रे सर्वकार्यं विनश्यति।
गुरौ पश्यति युक्ते वा तत्र कार्यं शुभं वदेत् ॥१॥
तस्मिन्पापयुते दृष्टे विनाशो भवति ध्रुवम्।
तस्मिन्सौम्ययुते दृष्टे सर्वं कार्यं शुभं वदेत् ॥२॥
मिश्रे मिश्रफलं ब्रूयात् शास्त्रे ज्ञानप्रदीपिके।

यदि छत्र द्वितीय किंवा द्वादश हो तो सारा कार्य नष्ट होता है। किन्तु यदि बृहस्पति से युक्त किंवा दृष्ट हो तो सिद्धि होती है। पापग्रह से दृष्ट किंवा युक्त होने से विनाश तथा सौम्य ग्रह से दृष्ट अथवा युक्त होने पर शुभ कार्य होता है। पापग्रह से नाश शुभ-ग्रह से सिद्धि होती है। दोनों हों तो मिश्रफल होता है।

पञ्चमे नवमे छत्रे सर्वसिद्धिर्भविष्यति।
तस्मिन् शुभाशुभे दृष्टे मिश्रे मिश्रफलं वदेत् ॥३॥

पञ्चम और नवम छत्र में सब कार्यों की सिद्धि होती है। शुभ से दृष्ट या युक्त होने पर शुभ, पाप ग्रह से अशुभ और मिश्र से मिश्र फल होता है।

चतुर्थे चाष्टमे षष्ठे द्वादशे छत्रसंयुते।
नष्टद्रव्यागमो नास्ति न व्याधिशमनं भवेत् ॥४॥

न कार्यसिद्धिः सर्वेषां शनिग्रहवशाद् वदेत्।
वृहस्पत्युदये स्वर्णाधनं विजयमागमः ॥५॥
द्वेषशांतिः सर्वकार्यसिद्धिरेव न संशयः।

यदि छत्र ४, ८, ६, या १२ वां हो तो नष्ट वस्तु नहीं मिली, रोग शान्त नहीं हुआ, कार्य सिद्धि नहीं हुई इत्यादि फल शनि से युक्त होने पर बताना। वृहस्पति के उदय होने पर स्वर्ण, धन, विजय, द्वेषशान्ति एवं सब कार्यों की सिद्धि निःसन्देह होती है।

सौम्योदये रणोद्योगी जित्वा तद्धनमाहरेत् ॥६॥
पुनरेष्यति सिद्धिः स्यात् छत्रसंदर्शने तथा।
व्यवहारस्य विजयं छत्रेऽप्येवमुदाहृतम् ॥७॥

छत्र यदि शुभ युक्त या दृष्ट हो तो युद्ध में विजय, कार्य की सिद्धि आदि शुभ फल कहना चाहिये। × × × × × × × × × × ×

चन्द्रोदयेऽर्थलाभश्चेत् प्रयाणे गमने तथा।
चिंतितार्थस्य लाभश्च चन्द्रारूढे स्थितेऽपि च ॥८॥
शुक्रोदये बुधोऽपि स्यात् स्त्रीलाभो व्याधिमोचनम्।
जयो यात्यरयः स्नेहं चन्द्रेऽप्येवमुदाहृतम् ॥९॥

चंद्रमा लग्न में हो तो यात्रा आदि में सोची हुई वस्तु मिल जाती हैं। यह बात तब भी संभव है जब चन्द्रमा आरूढ़ में हो। शुक्र या बुध लग्न में हों तो स्त्रीलाभ, जय, और व्याधि नाश एवं शत्रु का स्नेहपात्र होना बताना चाहिये। लग्नस्थ चन्द्रमा होने पर भी यही फल कहना चाहिये।

उदयारूढछत्रेषु शन्यर्कांगारका यदि।
अर्थनाशं मनस्तापं मरणं व्याधिमादिशेत् ॥१०॥

उदय, आरूढ़ और छत्र में यदि शनि सूर्य और मंगल हों तो अर्थ (धन) का नाश मानसिक व्यथा, मरण और व्याधि बताना चाहिये।

एतेषु फणियुक्तेषु बुधश्चौरभयं ततः।
मरणं चैव दैवज्ञो न संदिग्धो वदेत् सुधीः ॥११॥

इन्हीं स्थानों (लग्न, आरूढ़ और छत्र में) में यदि राहु के साथ बुध बैठा हो तो निश्शंक होकर विद्वान् ज्योतिषी को चोर का भय और मरण बताना चाहिये।

निधनारिधनस्थेषु पापेष्वशुभमादिशेत् ।
तन्वादिभावः पापैस्तु युक्तो दृष्टो विनश्यति ॥१२॥

अष्टम, षष्ठ, द्वितीय में पाप ग्रह हों तो फल अशुभ होता है। पापग्रहाक्रान्त तन्वादि भाव अशुभ फल दायक हैं।

शुभदृष्टो युतो वापि तत्तद्भावादि भूषणम् ।
मेषोदये तुलारूढे नष्टं द्रव्यं न सिध्यति ॥१३॥

शुभ से दृष्ट किंवा युक्त होने पर भाव शुभ फलद होते हैं। मेष लग्न हो और तुला आरूढ़ हो तो नष्ट द्रव्य की सिद्धि नहीं होती।

तुलोदये क्रियारूढे नष्टसिद्धिर्न संशयः ।
विपरीते न नष्टाप्तिर्वृषारूढेऽलिभोदये ॥१४॥

किन्तु यदि तुला लग्न और मेष आरूढ़ हो तो अवश्य सिद्धि होती है। वृष आरूढ़ और वृश्चिक लग्न हो तो महा लाभ होताहैं ।

नष्टसिद्धिर्महालाभो विपरीते विपर्ययः ।
चापारूढे नष्टसिद्धिर्भविता मिथुनोदये ॥१५॥
विपरीते न सिद्धिः स्यात् कर्कारूढे मृगोदये ।
सिद्धिश्च विपरीते तु न सिध्यति न संशयः ॥१६॥

किन्तु यदि वृष लग्न और वृश्चिक आरूढ़ हो तो सिद्धि नहीं होती। मिथुन लग्न में हों धनु आरूढ़ हो तो नष्ट सिद्धि होती है। उल्टा होने से फल उल्टा होता हैं। कर्क आरूढ़ हो मकर का उदय हो तो सिद्धि होती है। उल्टा होने से सिद्धि नहीं होती।

सिंहोदये घटारूढे नष्टसिद्धिर्न संशयः ।
विपरीते न सिद्धिः स्यात् झषारूढेऽगनोदये ॥१७॥
नष्टसिद्धिर्विपर्ये (?) स्यात् दृष्टादृष्टेर्निरूपणम् ।

लग्न सिंह हो आरूढ़ कुंभ हो तो सिद्धि और उल्टा होने से असिद्धि होती हैं। मीन आरूढ़ हो और कन्या लग्न हो तो नष्ट सिद्धि नहीं होती है।

स्थिरोदये स्थिरच्छत्रे स्थिरलग्नो भवेद्यदि ।
न मृतिर्न च नष्टं च न रोगशमनं तथा ॥१८॥

स्थिर लग्न हो और स्थिर छत्र हो और स्थिर उदय हो तो फल 'नहीं' कहना चाहिये। अर्थात् 'मृत्यु नहीं हुई' 'नष्ट नहीं हुआ' रोगशान्ति नहीं हुई ;'इत्यादि इत्यादि कहना समुचित है।

द्विदेहबोधया (?) रूढे छत्रे नष्टं न सिध्यति ।
न व्याधिशमनं शत्रुः सिद्धिविद्या न च स्थिरा ॥१९॥

द्विस्वभाव लग्न, द्विस्वभाव छत्र और द्विस्वभाव आरूढ़ हो तो 'नष्ट सिद्धि नहीं हुई' व्याधि शमन नहीं हुआ' आदि निषेधात्मक उत्तर देना।

चरराश्युदयारूढ़छत्रेषु स्यादिति स्थिता ।
नष्टसिद्धिर्न भवति व्याधिशांतिर्न विद्यते ॥२०॥
सर्वागमनकार्याणि भवन्त्येव न संशयः ।
ग्रहस्थितिबलेनैव एवं ब्रूयात् शुभाशुभम् ॥२१॥

चर राशि ही लग्न, छत्र और आरूढ़ हो तो भी नहीं, अर्थात् नष्ट सिद्धि न हुई, रोग-शान्ति नहीं हुई, आदि बताना। आगमन सम्बन्धी प्रश्नों के उत्तर में 'हाँ' कहना चाहिये। इस प्रकार शुभाशुभ फल ग्रहों पर से कहना चाहिये।

चरोभयस्थिताः सौम्याः सर्वकामार्थसाधकाः ।
आरूढ़छत्रलग्नेषु क्रूरेष्वस्तं गतेषु च ॥२२॥
परेणापहृतं ब्रूयात् तत् सिध्यति शुभेषु च ॥२३॥

चर और द्विस्वभाव राशियों पर यदि शुभ ग्रह हों तो कार्य सिद्ध होता है। आरूढ़ छत्र और लग्न में यदि अस्त होकर क्रूर ग्रह पड़े हों तो 'दूसरे ने चुराया है' ऐसा फल कहना। पर, यदि शुभग्रह हों तो 'मिल जायगा, ऐसा कहना।

पंचमो नवमस्तेन नष्टलाभः शुभोदये ।
येषु पापेन नष्टासी रूढ्यादित्रिकेषु च ॥२४॥

पंचम, नवम और सप्तम (?) शुभ से युक्त हों तो नष्ट वस्तु मिलेगी, अशुभ ग्रह से युक्त हों तो न मिलेगी। यही हाल लग्न, चतुर्थ और दशम का भी जानना।

भ्रातृस्थानयुते पापे पंचमे वाऽशुभस्थिते ।
नष्टद्रव्याणि केनापि दीयन्ते स्वयमेव च ॥२५॥

तृतीय स्थान में पाप ग्रह हों या पंचम में हो पाप ग्रह हों तो कोई स्वयं नष्ट द्रव्य दे जायगा ।

प्रश्नकाले शक्रचापे धूमेन परिवेष्टिते ।
ग्रहे द्रष्टुर्न भवति तत्तदाशासु तिष्ठति ॥२६॥

× × × × × × × × × × ×

पृष्ठोदये शशांकस्थे नष्टं द्रव्यं न गच्छति ।
तद्राशिः शनिदृष्टश्चेन्नष्टं व्योम्नि कुजे न तत् २७॥

पृष्ठोदय राशि लग्न में हो, उसमें चंद्रमा बैठा हो तो नष्ट द्रव्य कहीं गया नहीं है ऐसा कहना । किन्तु वह पृष्ठोदय राशि यदि शनि से दृष्ट हो × × × × ×

बृहस्पत्युदये स्वर्णं नष्टं नास्ति विनिर्दिशेत् ।
शुक्रे चतुर्थके रौप्यं नष्टं नास्ति वदेद्ध्रुवम् ॥२८॥
सप्तमस्थे शनौ कृष्णलोहं नष्टं न जायते ।
बुधोदये त्रपुर्नष्टं नास्ति चन्द्रे चतुर्थके ॥२९॥

लग्न में गुरु हो तो सोना नष्ट नहीं हुआ । चतुर्थ में शुक्र हो तो चान्दी नष्ट नहीं हुई । सप्तम में शनि हों तो लोहा नष्ट नहीं हुआ । लग्न में बुध हों तांबा नष्ट नही हुआ । चंद्रमा चतुर्थ में हों तो कांसा नष्ट नहीं हुआ ऐसा बताना चाहिये ।

कांसं नष्टं न भवति वंगं राहौ च सप्तमे ।
आरकूटं पंचमस्थे भानौ नष्टं न जायते ॥३०॥

राहु सप्तम में हो तो रांगा और कांसा नहीं नष्ट हुए । पंचम में सूर्य हो तो पित्तल नष्ट नहीं हुआ ।

दशमे पापसंयुक्ते न नष्टं च चतुष्पदं ।
बन्धनादि भवेयुः स्यात्तत्तद्द्विपदराशयः ॥३१॥

पापग्रह दशम मे हों तो पशु नष्ट नहीं हुआ। यदि यह राशि नरराशि हो तो किसो ने वांध लिया है ऐसा बताना चाहिये।

बहुपादुदये राशौ बहुपान्नष्टमादिशेत्।
पक्षिराशौ तथा नष्टे एतेषां बंधमादिशेत् ॥३२॥

बहुपात् राशि यदि लग्न हो तो बहुपाद जीव नष्ट हुआ है ऐसा बताना। यदि ये पक्षि राशि में नष्ट हुए हैं तो किसी के बन्धन में पड़ गये हैं ऐसा बताना चाहिये।

कर्कवृश्चिकयोर्लग्ने नष्टं सद्मनि कीर्तयेत्।
मृगमीनोदये नष्टं कपोतान्तरयोर्वदेत् ॥३३॥

कर्क और वृश्चिक यदि लग्न हों तो घर मे ही नष्ट वस्तु है ऐसा बताना। मकर या मीन होतो कबूतरों के वासस्थल के पास कहीं पड़ा है।

कलशो भूमिजे सौम्ये घटे रक्तघटे गुरुः।
शुक्रश्च करके भग्ने घटे भास्करनन्दनः ॥३४॥
आरनालघटे भानुश्चन्द्रो लवणभाण्डके।
नष्टद्रव्याश्रितस्थानं सद्मनीति विनिर्दिशेत् ॥३५॥

मंगलकारक होने से घड़े मे और बुध का भी घड़े ही में तथा बृहस्पति का लाल घड़े में, शुक्र, होतो टूटे फूटे करक मे, शनिश्चर हो तो घड़े में कमलघट मे सूर्य का, चन्द्रमा का नमक के घड़े में अपने घर में नष्ट द्रव्य का स्थान निश्चय करना।

पुंग्रहे संयुते दृष्टे पुरुषस्तस्करो भवेत्।
स्त्रीराशौ स्त्रीग्रहैर्दृष्टे तस्करी च वधूर्भवेत् ॥३६॥

लग्न पुंराशि का हो, पुरुष ग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो चोर पुरुष है। पर, यदि स्त्री राशि लग्न हो और स्त्री ग्रह से युत और दृष्ट हो तो स्त्री चोर है।

उदयादोजराशिस्थे पुंग्रहे पुरुषो भवेत्।
समराश्युदये चोरी समस्तैः स्त्रीग्रहैर्वधूः ॥३६॥

लग्न से विषम राशि में यदि पुरुष ग्रह हो तो चोर पुरुष होता है। सम राशि लग्न में हो और उस से समस्थान पर स्त्री ग्रह हो तो स्त्री चोर होगी।

उदयारूढयोश्चैव बलाबलवशाद् वदेत्।
कर्किनक्रपुरंध्रीषु नष्टद्रव्यं न सिध्यति ॥३७॥

लग्न और आरूढ़ पर से जो फल कहा गया है उसे कहते समय बलाबल का विचार करके कहना। कर्क मकर और कन्या में भूला माल नहीं मिलता।

पश्यन्ति खे खगैश्चन्द्रः चौरास्तद्रूपस्वरूपिणः।
द्रव्याणि च तथैव स्युरिति ज्ञात्वा वदेत् सुधीः ॥३८॥

आकाश में जो ग्रह चन्द्र को पूर्ण दृष्टि से देखता हो उसी के स्वरूप का चोर बताना, द्रव्य भी वैसा ही होगा।

यस्य आरूढभं याता तस्यां दिशि गतं वदेत्।
तत्तद्ग्रहांशुसंख्याभिस्तत्तद्दिनाधिकं वदेत् (?) ॥३९॥

जिसके आरूढ़ में वस्तु नष्ट हुई है उसी की दिशा में गई है और उस ग्रह की किरणों के बराबर दिन भी बताना चाहिये।

स्वभावकवशादेवं किंचिद्दृष्टिवशाद् वदेत्।
चन्द्रः स्वर्क्षादुदयभं यावत्तावत् फलं भवेत् ॥४०॥
चरस्थिरोभयः पश्चादेकद्वित्रिगुणान् वदेत्।

स्वभाव और दृष्टि का ध्यान रख कर फल कहना चाहिये। चन्द्रमा के अपनी राशि से जितनी दूर लग्न हो उतना ही फल होता है। चरस्थिर और द्विस्वभाव राशियों से क्रमशः एक दो और तीन गुना काल आदि बताना।

इति नष्टकाण्डः

सुवस्तुलाभं राज्यं च राष्ट्रं ग्रामं स्त्रियस्तथा।
उपायनांशुकोधानलाभालाभान् वदेत् सुधीः ॥१॥

इस प्रकरण में कथित नियमों के अनुसार वस्तुलाभ, राज्य, राष्ट्र, ग्राम, स्त्री, वस्त्र, लाभ, और हानि को बुद्धिमान बतायें।

उदयादित्रिकान् खेटाः पश्यन्त्युच्चर्क्षगा यदि।
शत्रुर्मित्रत्वमायाति रिपुः पश्यति चेद्रिपुम् ॥२॥

यदि उच्च ग्रह लग्न द्वितीय और तृतीय को देखते हों तो शत्रु भी मित्र हो जाता है।

उदयं छत्रलग्नं च रिपुः पश्यति वा युतम्।
आयुर्हानिः रिपुस्थानं गतश्चेद् बन्धनं भवेत् ॥३॥

यदि शत्रुग्रह अपने शत्रु को देखता हो अथवा, लग्नेश का शत्रु लग्न या छत्र से युत या दृष्ट हो तो आयु की हानि होगी। रिपुस्थान गत होने से बन्धन भी होता है।

गतो नायाति नष्टं चेद्बहिरेव गतिं वदेत्।
गलवच्चन्द्रजीवाभ्यां खेन्देषु सहितेषु च ॥४॥

अथवा (उसी परिस्थिति में) गया हुआ धन नहीं लौटता अथवा बाहर, की ही गति करनी चाहिये। पाप ग्रह से युक्त चन्द्रमा और बृहस्पति का यह फल बताना है।

नष्टप्रश्ने न नष्टं स्यात् मृत्युप्रश्ने न नश्यति।
पापदृष्टियुते खेन्द्रे भानुयुक्ते विपर्ययः ॥५॥

खोये हुए प्रश्न में खोया हुआ नहीं कहना एवं मृत्यु के प्रश्न में भी मरता नहीं। यदि पाप-ग्रह का दृष्टियोग हो तो यह फल होता है. किन्तु सूर्य के दृष्टियोग में इसका उल्टा होता है।

शत्रोरागमनं नास्ति चतुर्थे पापसंयुते।
दशमैकादशे सौम्यः स्थितश्चेत्सर्वकार्यकृत् ॥६॥

यदि लग्न से चौथे स्थान में पाप ग्रह बैठे हों तो शत्रु का आगमन नहीं होता एवं दशम और एकादश में शुभ ग्रह स्थित होतो सब कामों को सिद्ध करता है।

विषपीडा तु प्रश्ने तु रोगिणां मरणं भवेत्।
गमनं विद्यते प्रष्टुर्नास्तीति कथयेद् बुधः ॥७॥
प्रारब्धकार्यहानिश्च धनस्यायातिरीहिता।

पूर्वोक्त स्थिति में विषपीड़ा हो तो रोगी का मरण हो जाता है और प्रश्नकर्ता की यात्रा नहीं होती तथा प्रारम्भ किये हुए कार्य की हानि तथा धन की हानि होती है ऐसा कहा गया है।

चन्द्राद्व्योमस्थिते शुक्रे जीवाद्व्योमस्थिते रवौ॥८॥
तल्लग्ने कार्यसिद्धिः स्यात् पृच्छतां नात्र संशयः ।

चन्द्र राशि से दशम में शुक्र हो और बृहस्पति की राशि से दशम में सूर्य हो तो ऊपर के बताये हुए लग्न में पूछने वाले की निःसन्देह सिद्धि होती है ।

उदयात्सप्तमे व्योम्नि शुक्रश्चेत् स्त्रीसमागमः ॥९॥
धनागमं च सौम्ये च चन्द्रेऽप्येवं प्रकीर्तितम् ।

लग्न से सप्तम में शुक्र हो तो स्त्रीसमागम, बुध हो तो धनागम और चन्द्रमा भी हों तो धनागम बताना चाहिये । अन्य शुभग्रहों पर से भी यही फल कहा जायगा ।

मित्रः स्वाम्युच्चमायाति नता खेटाश्च यष्टिकाः ॥१०॥
शन्यारयोगवेलायां सर्वकार्यविनाशनम् ॥

मित्र स्वामी उच्च का ज्योति ग्रह हो तो खींचता है; शनि-मंगल-योग बेला में हो तो सम्पूर्ण कार्यों का नाश करता है ।

पूर्वशास्त्रानुसारेण मृत्युव्याधिनिरूपणम् ॥११॥

पूर्व कथित शास्त्र के अनुसार मृत्यु और व्याधि का निरूपण करता हूं ।

उदयात् षष्ठमे (?) व्याधिः अष्टमे मृत्युसंयुतम् ।
तत्रारूढे व्याधिचिन्ता निधने (?) मृत्युचिन्तनम् ॥१२॥

लग्न से षष्ठ स्थान से व्याधि और अष्टम स्थान से मृत्यु का विचार करना चाहिये । इसी प्रकार आरूढ़ से भी क्रमशः षष्ठ और अष्टम हो तो व्याधि और मृत्यु का विचार करना चाहिये ।

तत्तद्ग्रहयुते दृष्टे व्याधिं मृत्युं वदेत् क्रमात् ।
पापनीचारयः खेटाः पश्यन्ति यदि संयुताः ॥१३॥
न व्याधिशमनं मृत्युं विचार्यैवं वदेत् क्रमात् ।

व्याधि और मृत्यु को इस प्रकार बताना चाहिये—यदि षष्ठ स्थान और अष्टम स्थान पाप ग्रह, नीच ग्रह या शत्रु ग्रह से दृष्ट या युत हों तो व्याधि और मृत्यु बताना चाहिये । इनका शमन नहीं हुआ यह विचार करके बताना चाहिये ।

एतयोश्चंद्रभुजगौ तिष्ठतो यदि चोदये ॥१४॥
गरादिना भवेद्व्याधिः न शाम्यति न संशयः।
पृष्ठोदये क्षेत्रछत्रे व्याधिमोक्षो न जायते ॥१५॥

यदि इन्हीं षष्ठ या अष्टम स्थान में चन्द्रमा और राहु या लग्न में एक हो और अन्य इन स्थानों में तो विष देने से व्याधि हुई है और वह शान्त न होगी। पृष्ठोदय लग्न हो और लग्नेश की राशि ही छत्र हो तो व्याधि का शमन नहीं हुआ है।

व्याधिस्थानानि चैतानि मूर्धा वक्त्रं भुजः करः।
वक्षःस्थलं स्तनौ कुक्षिः कक्षं मूलं च मेहनं ॥१६॥
उरू पादौ च मेषाद्या राशयः परिकीर्तिताः।

मेषादि राशियों के लग्न होने से क्रमशः इस प्रकार व्याधि स्थान जानना चाहिये—सिर, मुंह, बाहु, हाथ (हथेली), छाती, स्तन, कोख, कांख, मूल, उपस्थ, जंघा और चरण।

कुजो मूर्ध्नि मुखे शुक्रो गण्डयोर्भुजयोर्बुधः ॥१७॥
चन्द्रो वक्षसि कुक्षौ च हनौ नाभौ रविर्गुरुः।
उर्वोः शनिरहिः पादौ ग्रहाणां स्थानमीरितम् ॥१८॥

ग्रहों का स्थान इस प्रकार है—मंगल मूर्द्धा में, शुक्र मुंह में, गण्डस्थल और भुज मे बुध, चन्द्र वक्षःस्थल में और कोख में, हनु (ठोड़ी) और नाभि में क्रमशः सूर्य और बृहस्पति, जंघों में शनि, चरणों में राहु।

स्थानेष्वेतेषु नष्टं च भवेदेतेषु राशिषु।
पापयुक्तेषु दृष्टेषु नीचसक्तेषु सम्भवः ॥१९॥

इन स्थानों में अथवा इन राशियों में पाप ग्रहों का दृष्टियोग हो और उस समय में नष्ट हुआ हो तो तथा नीचासक्त में हो तो रोग का सम्भव जानना चाहिये।

पश्यंति चेद् ग्रहाश्चंद्रं व्याधिस्थानावलोकनम्।
पूर्वोक्तमासवर्षाणि दिनानि च वदेत्सुधीः ॥२०॥

यदि व्याधि स्थान को देखने वाले चंद्रमा पर ग्रहों की दृष्टि हो तो पहले बताये हुए दिन, मास और वर्ष का निर्देश करना चाहिये।

षष्ठाष्टमे पापयुते रोगशान्तिर्न जायते।
षष्ठाष्टमे शुभयुते रोगः शाम्यति सर्वदा ॥२१॥

षष्ठ और अष्टम स्थान यदि पापाक्रान्त हों तो रोगशान्ति नहीं होती पर, यदि शुभ युक्त हों तो होती है।

किंचित्तत्र विशेषोक्तो रोगमृत्युस्थलं शुभम्।
यावद्भिर्दिवसैर्यान्ति तावद्भी रोगमोचनम् ॥२२॥

विशेषता यह है कि, षष्ठ या अष्टम स्थान मे जितने दिनो में शुभ ग्रह पहुंचेगा उतने ही दिनों में रोग छूटेगा।

रोगस्थानं भवेदस्ते पापखेटयुते तथा।
तत्षष्ठचंद्रसंयुक्ते रोगिणां मरणं भवेत् ॥२३।

यदि रोगस्थान अस्त लग्न पाप ग्रह से युक्त हो और उससे भी छठां स्थान चंद्रमा से युक्त हो तो रोगी की मृत्यु निश्चित होगी।

रोगस्थानं कुजः पश्येत् शिरस्तोऽधो ज्वरं भवेत्।
भृगुर्विसूची सौम्यश्चेत् कक्षग्रंथिर्भविष्यति ॥२४॥

मंगल यदि षष्ठ स्थान को देखे तो शिर के नीचे ज्वर, शुक्र देखे तो हैजा और बुध देखे तो कक्ष ग्रंथि (प्लेग ?) होगा।

राहुर्विषू शशी पश्येन्नेत्ररोगो भविष्यति।
मूलव्याधिर्भृगुः पश्येच्च द्रवत् स्याद् भृगोः फलं ॥२५॥

राहु से हैजा, चंद्रमा के देखने से नेत्ररोग और चंद्र को भृगु देखता हो तो शुक्र का भी फल चंद्रसा ही होगा।

परिधौ चंद्रको दण्डदृष्टिः प्रश्ने कृते सति।
कुष्ठव्याधिं मृतिं ब्रूयात् धूमे भूताहतं भवेत् ॥२६॥
सर्वापस्मारमादित्ये पिशाचपरिपीड़नं।
श्वासः कासश्च शूलश्च शनौ शीतज्वरं कुजे ॥२७॥

परिधि चन्द्रमा धनुष की दृष्टि में प्रश्न हों तो कुष्ठ रोग किंवा मृत्यु बताना। केतु से भूतबाधा और सूर्य से सब प्रकार की मिरगी या पिशाचबाधा, शनि से श्वास कास और शूल तथा मंगल से शीत ज्वर बताना।

इन्द्रकोदण्डपरिधौ दृष्टे प्रश्ने तु रोगिणां।
न व्याधिशमनं किंचिदायं पश्यंति चेत् शुभा॥२८॥

इन्द्र धनुष परिधि दृष्टि में यदि रोगीका प्रश्न हो तो रोग की कुछ भी शांति नहीं हो तो यदि स्थान को कभी राहु नहीं देखता हो यह स्थिति होनी है। (?)

रोगशान्तिर्भवेच्छीघ्रं मित्रस्वात्युच्चसंस्थिताः।

यदि शुभ ग्रह उच्च मित्र और स्वगृही हों तो रोगशांति शीघ्र बताना चाहिये।

शिरोललाटे भ्रू नेत्रे नासाश्रुत्यधराः स्मृताः॥२९॥
चिबुकश्चांगुलिश्चैव कृत्तिकाद्युडवो नव।

सिर, ललाट, भौं, आंख, नाक, कान, होंठ, चिबुक और अंगुलि ये कृतिकादि नव नक्षत्रों के स्थान हैं।

कंठवक्षः स्तनं चैव गुदमध्यनितंबकाः॥३०॥
शिश्नमेढ्रोरवः प्रोक्ता उत्तराद्या नवोडवः।

कंठ, छाती, स्तन, गुदा, कटि, नितंब, उपस्थ, मेढ्र और उरू ये उत्तरादि नव नक्षत्रों के स्थान हैं।

जानुजंघापादसंधिपृष्ठान्तस्तलगुल्फकं॥३१॥
पादाग्रं नाभिकांगुल्यो विश्वर्क्षाद्या नवोडवः।

जानु, जंघा पादसंधि, पीठ, अन्तस्तल, गुल्फ, पैर के आगे का भाग, नाभि, अंगुलि ये उत्तराषाढ़ादि नव नक्षत्रों के स्थान हैं।

उदयर्क्षवशादेवं ज्ञात्वा तत्र गदं वदेत्॥३२॥
अंगनक्षत्रकं ज्ञात्वा नष्टद्रव्यं तथा वदेत्।

लग्न में जो नक्षत्र हो उसी के अनुसार इन अंगों में रोग बताना चाहिये । इसी प्रकार शरीर नक्षत्र नक्षत्र के पर से नष्ट द्रव्य भी बताना चाहिये ।

त्रिकोणलग्नदशमे शुभश्चेद् व्याधयो नहि ॥२३॥
तेषु नीचारियुक्तेषु व्यधि-पीड़ा भवेन्नृणां ।

पंचम नवम, लग्न और दशम में यदि शुभ ग्रह हों तो व्याधि नहीं होती और पाप या शत्रु ग्रह हों तो होती है ।

इति रोगकाण्डः

अथ मरणकाण्डः

मरणस्य विधानानि ज्ञातव्यानि मनीषिभिः ।
वृषस्य वृषभच्छत्रं सिंहच्छत्रं हरेर्भवेत् ॥१॥
अलिनो वृश्चिकच्छत्रं कुंभच्छत्रं घटस्य च ।

मरण का विधान भी विद्वानों को जानना चाहिये । वृष का छत्र वृष, सिंह का सिंह, वृश्चिक का वृश्चिक, और कुंभ का छत्र कुंभ है ।

उच्चस्थानमिति ज्ञात्वा उच्चः स्यादुदये यदि ॥२॥
मरणं न भवेत्तस्य रोगिणो नात्र संशयः ।

यदि प्रश्न काल में लग्न (लग्नेश ?) उच्च का हो तो रोगी की मृत्यु नहीं हुई ।

तुलायाः कार्मुकच्छत्रं नीचमृत्युविपर्यये ॥३॥
मेषस्य मिथुनच्छत्रं नीचमृत्युविपर्यये ।
नक्रस्य मिथुनच्छत्रं नीचमृत्युविपर्यये ॥४॥
कन्याछत्रं कुलीरस्य नीचमृत्युविपर्यये ।

तुला का धन, मेष का मिथुन, मकर का मिथुन और कन्या का कर्क छत्र होता है किन्तु नीच मृत्युविपर्य में ही उसका शनि काम करता है ।

नीचे चेद् व्याधिमोक्षो न मृत्युर्मरणमादिशेत् ॥५॥
ग्रहेषु बलवान् भानुर्यदि मृत्युस्तदाग्निना।
मंदः क्षुधा जलेनेन्दुः शीतेन कविरुच्यते ॥६॥
बुधस्तुषारवाताभ्यां शस्त्रेणोरो बली यदि।
राहुर्विषेण जीवस्तु कुक्षिरोगेण नश्यति ॥७।

यदि लग्नेश नीच में हो तो मृत्यु बताना। यदि ग्रहों में बली सूर्य हो तो आग से, शनि हो तो भूख से, चंद्र हो तो जल से, शुक्र हो तो शीत से, बुध हो तो तुषार और वातसे केतु हो तो हथियार से राहु होतो विषसे और बृहस्पति हो तो कुक्षिरोग से मृत्यु होती है।

विधोः षष्ठाष्टमे पापः सप्तमे वा यदि स्थितः।
रोगमृत्युस्तलाभ्यां (?) वा रोगिणां मरणं भवेत् ॥८॥

यदि चंद्र के छठें या आठवें स्थान में पाप ग्रह हों तो रोगी की मृत्यु होगी।

आरूढान्मरणस्थानं तस्मादष्टमगः शशी।
पापाः पश्यंति चेन्मृत्युं रोगिणां कथयेत्सुधीः ॥९॥

आरूढ़ से अष्टम स्थान को उससे अष्टम स्थान स्थित चद्रमा और पाप ग्रह देखते हों, तो रोगी मरेगा।

द्वितीये भानुसंयुक्ते दशमे पापसंयुते।
दशाहान्मरणं ब्रूयात् शुक्रजीवौ तृतीयगौ ॥१०॥
सप्ताहान्मरणं ब्रूयात् रोगिणामहि बुद्धिमान्।

द्वितीय में सूर्य हों, दशम में पाप हो तो दश दिन के भीतर ही रोगी मरेगा। और यदि शुक्र और बृहस्पति हों तो सात दिन के भीतर दिन में ही रोगी मरेगा।

उदये चतुरस्त्रे वा पापास्त्वष्टदिनान्मृतिः ॥११॥
लग्नद्वितीयगाः पापाश्चतुर्दशादिनान्मृतिः।
त्रिदिनान् मरणं किन्तु दशमे पापसंयुते ॥१२॥
तस्मात्सप्तगे पापे दशाहान्मरणं भवेत्।

उदय या चतुरस्र में यदि पाप ग्रह हों तो आठ दिन में, लग्न और द्वितीय में हो तो १४ दिन में, दशम में पाप ग्रह स्थित हों तो ३ दिन मे और चतुर्थ में हों तो दश दिन में मृत्यु होगी।

निधनारूढगे पापदृष्टे वा मरणं भवेत्।
तत्तद्ग्रहवशादेव दिनमासादिनिर्णयम् ॥१३॥

मृत्यु और आरूढ़ स्थान यदि पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो मरण बताना। दिन महीने आदि का निर्णय ग्रहों पर से कर लेना।

इति मरणकाण्डः

ग्रहोच्चैः स्वर्गमायाति रिपौ मृगकुले भवः।
नीचे नरकमायाति मित्रे मित्रकुलोद्भवः ॥१॥
स्वक्षेत्रे स्वजने जन्म मित्रं ज्ञात्वा वदेत् सुधीः।

मृत्यु के समय मृत प्राणी को ग्रहों के उच्च के रहने पर स्वर्ग होता है शत्रु स्थान में रहने पर पशुयोनि में जन्म, मित्र गृह में रहने पर मित्र कुल में जन्म और स्वक्षेत्र में रहने पर स्वजनों में जन्म बताना चाहिये।

इति स्वर्गकाण्डः

कथयामि विशेषेण मूकद्रव्यस्य लक्षणम्।
पाकभाण्डानि भुक्तानि व्यंजनानि रसं तथा ॥१॥

अब मैं विशेष करके मूक द्रव्यों का निर्णय करता हूं। इस प्रकरण में पाक-भाण्ड भुक्त, व्यंजन और इसका वर्णन होगा।

सहभोक्ता भोजनानि तत्तथानुभवो रिपून्। (?)
मेषराशौ भवेच्छाकं वृषभे गव्यमुच्यते ॥२॥
धनुर्मिथुनसिंहेषु मत्स्यमांसादिभोजनम्।
नक्रालिकर्किमीनेषु फलभक्ष्यफलादिकम् ॥३॥
तुलायां कन्यकायाश्च शुद्धान्नमिति कीर्तयेत्।

× × × × × ×

मेष लग्न यदि बली हो तो शाक भोजन बताना चाहिये। वृष हो तो दही दूध घी आदि, धनु मिथुन और सिंह हों तो मछली मांस, मकर, वृश्चिक, कर्क और मीन हो तो फलाहार और तुला कन्या हों तो शुद्ध अन्न बताना चाहिये।

भानोस्तिक्तकटुक्षारमिश्रं भोजनमुच्यते ॥४॥
उष्णान्नक्षारसंयुक्तं भूमिपुत्रस्य भोजनम्।

सूर्य का भोजन तीता कडुवा खारा, और मंगल का गर्म अन्न और खारा है।

भर्जितान्युपदं सौरे सौम्यस्याहुर्मनीषिणः ॥५॥
पायसान्नं घृतैर्युक्तं गुरोर्भोजनमुच्यते।

शनि और बुध का भोजन भुना हुआ पदार्थ, तथा बृहस्पति का घृतयुक्त पायस जानना।

सतैलं कोद्रवान्नं च भवेन्मन्दस्य भोजनम् ॥६॥
समाषं राहुकेत्वोश्च रसवर्गमुदाहृतम्।

तेल में बना हुआ और कोदो भी शनि का भोजन है। उड़द के साथ यह राहु और केतु का भी भोजन है।

जीवस्य माषवटकं सुष्ठु मीनैस्तु भोजनम् ॥७॥
चन्द्रकदर्यप्रसवमत्स्याद्यैर्भोजनं वदेत्।

बृहस्पति और चन्द्रमा का भोजन मांस और मछली से होता है।

क्षौद्रापूपपयोयुग्भिर्भोजनं व्यंजनैर्भृगोः ॥८॥

शुक्र का भोजन मधु दूध और अपूप आदि व्यंजनों से होता है।

ओजराशौ शुभैर्दृष्टे स्वेच्छया भोजनं भवेत् ।
समराशौ पापदृष्टे भुंक्तेऽल्पं पापवीक्षिते ॥९॥

यदि विषम राशि को शुभ ग्रह देखते हों तो अधिकता से और सम राशि को पाप-ग्रह देखते हों और युक्त हों तो कमी के साथ भोजन बताना चाहिये।

किंचित्पश्यति पापश्चेत् पुराणान् मधुभोजिनः । (?)
अर्कारौ मांसभोक्तारौ उशनश्चन्द्रभोगिनां ॥१०॥
नवनीतघृतक्षीरदधिभिर्भोजनं भवेत् ।

पाप ग्रह की साधारण दृष्टि हो तो मधुर भोजन बताना। सूर्य और मंगल मांस-भक्षी, शुक्र, चन्द्र और राहु मक्खन घी दूध और दही के साथ खाने वाले हैं।

जलराशिषु पापेषु सौम्येषु च दिनेषु च ॥११॥
सतैलं भोजनं ब्रूयादिति ज्ञात्वा विचक्षणः ।

पाप ग्रह जलराशि में हों और सौम्य ग्रह दिनवाला हों तो सतैल भोजन बताना चाहिये।

पूर्वोक्तधातुवर्गेण भोजनानि विनिर्दिशेत् ॥१२॥
मूलवर्गेण शाकादीनुपदेशाद् वदेद् बुधः ।
जीववर्गेण भुक्त्वा च मत्स्यमांसादिकानपि ॥१३॥
सर्वमालोक्य मनसा वदेन्नृणां विचक्षणः ।

पूर्व कथित धातुवर्ग से भोजन, मूल वर्ग से शाक सब्जी आदि, और जीववर्ग से मांस मछली आदि का भोजन बुद्धिमान् पुरुष सब देख सुन के बतावें।

इति भोजनकाण्डः



स्वप्ने यानि च पश्यन्ति तानि वक्ष्यामि सर्वदा ।
मेषोदये देवग्रहं प्रसादान् संवदंति च ॥१॥
वृषोदये दिनाधीशं ज्ञातिदेशस्य दर्शनम् ।
वृश्चिकस्योदये क्रूरं व्याकुलं मृतदर्शनम् ॥२॥

स्वप्न में मनुष्य जो देखता है उसे भी बताता हूं—मेष लग्न में देवग्रह देखता है और प्रसन्नता की बातें सुनता है और कहता है। वृष में सूर्य को, जाति को देश को और वृश्चिक में क्रूर, व्याकुल और मृतक को देखता है।

मिथुनस्योदये विप्रान् तपस्विवदनानि च ।
कुलीरस्योदये क्षेत्रं .... पुनः ॥३॥
तृणान्यादाय हस्ताभ्यां गच्छन्तीरिति निर्दिशेत् ।
सिंहोदये किरातं च महिषीभिर्निपातितम् ॥४॥

मिथुन लग्न में विप्र और तपस्वियों के मुंह कर्क में खेत.... तथा हाथों में तृण लेकर जते हुओं को देखा जाता है। सिंह में किरात को और भैंस से अपने को निपातित या उसी किरात को निपातित देखा जाता है।

कन्योदयेऽपि चारूढं (?) मुण्डस्त्रीभिर्द्विपादयः ।
तुलोदये नृपान् स्वर्णं वणिजश्च स पश्यति ॥५॥
वृश्चिकस्योदये स्वप्ने पश्यन्त्यलिमृगादयः ।
वृषभश्च तथा ब्रूयात् स्वप्नदृष्टो न संशयः ॥६॥
उदये धनुषः पश्येत् पुष्पं पक्वफलं तथा ।
मृगोदये दिनेन्दुं च रिपुं स्वप्नेषु पश्यति ॥७॥
कुंभोदये च मकरं मीनस्वप्ने जलाशयः ।

कन्या मे स्वप्न देखे तो मुण्डित स्त्री हाथी आदि, तुला में राजा, स्वर्ण, बनिया आदि वृश्चिक में भौंरा मृग, बैल आदि, धनु में फूल, पक्व फल आदि, मकर में दिन का चाँद शत्रु, कुंभ में घड़ियाल (मगर), मीन में जलाशय दिखाई देता है।

चतुर्थे तिष्ठति भृगौ रजतं वस्तु पश्यति ॥८॥
कुजश्चेन्मांसरक्तांश्च सशुक्लफलमंगनाम् ।

चतुर्थ में शुक्र हो तो चांदी की चीज, मंगल हो तो मांस, रक्त और सफेद फल लिये हुई औरत दिखाई पड़ती हैं।

मृगं शनिश्चेत् सौम्यश्चेत् शिलां स्वप्ने तु पश्यति ॥६॥
आदित्यश्चेन्मृतान् पुंसः पतनं शुष्कशालिनाम् ।
चंद्रश्चेत् वदनं शीतं राहुमध्यविषं भवेत् ॥१०॥

शनि चतुर्थ में हों तो मृग, बुध हो तो शिला, सूर्य हो तो मरे हुए मनुष्यों को अथवा सूखे धान्यों को, चन्द्रमा हो तो शीतवदन और राहु हो तो मध्य विष का दर्शन स्वप्न में

अत्र किंचित् विशेषोऽस्ति छत्रारूढोदयेषु च।
छत्रस्थितश्चेत् सौम्यश्चेत् सौधसौम्यामरान् वदेत् ॥११॥

इस प्रश्नाध्याय मे लग्न राशियों के पक्ष विशेष यह है कि शुभग्रह कभी छत्रारूढ हो तो ………सुन्दर गृह अथवा देवतादिक का दर्शन होता है।

चतुर्थभवनात् स्वप्नं ब्रूयात् ग्रहनिरीक्षकः ।
तत्रानुक्तं यदखिलं ब्रूयात् पूर्वोक्तवस्तुना ॥१२॥

चतुर्थ भवन से ग्रहज्ञो को स्वप्न फल कहना चाहिये। जो कुछ न भी कहा गया है उसे भी पूर्व कथित वस्तु पर से समझ लेना चाहिये।

इति स्वप्नकाण्डः

अथोभयर्क्षे पथिको दुर्निमित्तानि पश्यति ।
स्थिरोदये निमित्तानां निरोधेन न गच्छति ॥१॥
चरोदये निमित्तानां समायातीति ईरयेत् ।

यात्री द्विस्वभाव लग्न में जाने से दुःशकुन देखता है। स्थिर लग्न में शकुनों के प्रभाव से यात्रा हो स्थगित कर देता है और चर लग्न में शुभ शकुनों के प्रभाव से सफलतापूर्वक लौट आता है।

चन्द्रोदये दिवाभीतचषपारावतादयः ॥२॥
शकुनं भविता दृष्टं (?) इति ब्रूयाद्विचक्षणः।

लग्न में यदि चन्द्र हो तो रास्ते में उल्लू कबूतर आदि का शकुन होगा—यह बताना चाहिये।

राहूदये तथा काकभरद्वाजादयः खगाः ॥३॥
मन्दोदये कुलिंगः स्यात् ज्ञोदये पिंगलस्तथा।

लग्न में राहु हो तो काक भरदूल आदि, शनि हो तो चटक और बुध हो तो बन्दर।

सूर्योदये च गरुडः सव्यासव्यवशाद् वदेत् ॥४॥
स्थिर राशौ स्थिरान् पश्येत् चरे तिर्य्यग्गता यदि।
उभयेऽध्वनि वृत्तस्य ग्रहस्थितिवशादमी ॥५॥

सूर्य लग्न में हो दाहिने बाये को विचार के गरुड बताना चाहिये। स्थिर में स्थिर वस्तु, चर में चर—पक्षी आदि—और द्विस्वभाव में रास्ते से लौटते हुए आदमी दिखाई पड़ते हैं। यही बात ग्रहस्थिति के वश से इस प्रकार है।

राहोर्गौर्लिर्विधोश्चात्र ज्ञस्य चुन्नधरी भवेत्।
दधि शुक्रस्य जीवस्य क्षीरसर्पिरुदाहरेत् ॥६॥
भानोश्च श्वेतगरुडः शिवा भौमस्य कीर्तिताः।
शनैश्चरस्य वह्निश्च निमित्तं दृष्टमादिशेत् ॥७॥
शुक्रस्य पक्षिणौ ब्रूयात् गमने शरटा बकाः।
जीवकाण्डप्रकारेण वीक्षणस्य विचारयेत् ॥८॥

राहु का गौ और विच्छी चन्द्रमा का ········ बुध का चुन्नधरी (पक्षि विशेष) शुक्र का दही, बृहस्पति का दूध घी, सूर्य का श्वेत गरुड़, मंगल का श्रृगालियां, शनि का

आग, शुक का दो पक्षी शरट और बक—ये शकुन होते हैं। जीव काण्ड में कहे हुये प्रकार से शकुन दर्शन का विचार कर लेना चाहिये।

इति निमित्तकाण्डः



प्रश्ने वैवाहिके लग्ने कुजः स्यादुदये यदि।
वैधव्यं शीघ्रमायाति सा वधू नेति संशयः ॥१॥

× × × × × × × × ×

प्रश्न लग्न में, यदि विवाह संबंधी प्रश्न हो तो, यदि मंगल हो तो शीघ्र विना संदेह के वधू विधवा हो जायगी।

उदये मन्दरे नारी रिकाम्मृगसुता भवेत्। (?)
चन्द्रोदये तु मरणं दम्पत्योः शीघ्रमेव च ॥२॥
शुक्रजीवबुधा लग्ने यदि तौ दीर्घजीविनौ।

× × × × × × ×

लग्न में चन्द्रमा हो तो दोनों स्त्री पुरुष शीघ्र मर जायगे, शुक्र बृहस्पति या बुध के लग्न में रहने से वे दीर्घजीवी होंगे।

द्वितीयस्थे निशानाथे बहुपुत्रवती भवेत् ॥३॥
स्थितिमध्यर्कमन्दाराः मनःशोको दरिद्रता।

यदि द्वितीय में चंद्र हो तो बहु पुत्रवती और दशम में सूर्य मंगल और शनि हों तो मानसिक कष्ट और दारिद्रय प्राप्त होता है।

द्वितीये राहुसंयुक्ता सा भवेत् व्यभिचारिणी ॥४॥
शुभग्रहा द्वितीयस्था मांगल्यायुष्यवर्द्धना।

द्वितीय स्थान में राहु हो तो कन्या व्यभिचारिणी और शुभ ग्रह हों तो मंगल और आयु से पूर्ण होती है।

तृतीये राहुजीवौ चेत्सा वन्ध्या भवति ध्रुवम् ॥५॥
अन्ये तृतीयराशिस्था धनसौभाग्यवर्द्धना ।

राहु और बृहस्पति यदि तृतीय में हों तो स्त्री वन्ध्या होगी। उसी स्थान में अन्य ग्रह हों तो धन और सोहाग से भरपूर होगी।

नाथा दिनेशस्तिष्ठंतो यदि तुर्ये ततोऽशुभः ॥६॥(?)
शनिश्च स्तन्यहीना स्यादहिः सापत्न्यवत्यसौ ।
बुधजीवारशुक्राश्चेत् अल्पजीवनवत्यसौ ॥७॥

चतुर्थ में सूर्य हो तो (अशुभ फल), शनि हो तो सन्तानहीना, राहु हो सौत वाली होगी। वहीं बुध बृहस्पति, मंगल या शुक्र हों तो अल्पायु होगी।

पंचमे यदि सौरिः स्याद् व्याधिभिः पीडिता भवेत् ।
शुक्रजीवबुधाश्चापि पशुश्चेत् बहुपुत्रवत् ॥८॥
चन्द्रादित्यौ तु वन्दी स्यात् अहिश्चेत् मरणं भवेत् ।
आरश्चेत् पुत्रनाशः स्यात् प्रश्ने पाणिग्रहोचिते ॥९॥

पंचम में यदि शनि हो तो रोगिणी, शुक्र, बृहस्पति और बुध हों तो बहुत पशु और पुत्र से युक्त, चन्द्रमा और सूर्य हों तो वन्दी, राहु हो तो मरण और मंगल हो तो पुत्रनाश यह वैवाहिक प्रश्न में बताना।

षष्ठे शशी चेद्विधवा बुधः कलहकारिणी ।
षष्ठे तिष्ठति शुक्रश्चेद्दीर्घमांगल्यधारिणी ॥१०॥
अन्ये तिष्ठन्ति चेन्नारी सुखिनी वृद्धिमिच्छति ।

षष्ठ स्थान में चन्द्रमा हो तो विधवा, बुध हो तो कलही, शुक्र हो तो सर्व मांगल्य-धारिणी और अन्य ग्रह हों तो सुखी और वृद्धिमती कन्या होती है।

सप्तमस्थे शनौ नारी तरसा विधवा भवेत् ॥११॥
परेणापहृता याति कुजे तिष्ठति सप्तमे ।
बुधजीवौ सन्मतिः स्याद्राहुश्चेद् विधवा भवेत् ॥१२॥
व्याधिग्रस्ता भवेन्नारी सप्तमस्थो रविर्यदि ।

सप्तमस्थे निशाधीशे ज्वरपीडावती भवेत् ॥१३॥
शुक्रश्चेत्सप्तमे स्थाने सा वधूर्मरणं व्रजेत् ।

सप्तम में यदि शनि हों तो शीघ्र विधवा, मंगल हों तो दूसरे से हरी जाकर अन्य-गामिनी, बुध और बृहस्पति हों तो सद्बुद्धि वाली, राहु हो तो विधवा, सूर्य हो तो व्याधि ग्रस्त, चन्द्रमा हो तो बुखार की पीड़ा से आकुल और शुक्र हो तो मृत्यु को प्राप्त होती है।

अष्टमस्थाः शुक्रगुरुभुजगा नाशयंति च ॥१४॥
शनिज्ञौ वृद्धिदौ भौमचंद्रौ नाशयतः स्त्रियम् । (?)
आदित्यारौ पुनर्भूः स्यात्प्रश्ने वैवाहिके वधू ॥१५॥

अष्टम में शुक्र, गुरु और राहु नाश करने वाले, शनि और बुध वृद्धि करने वाले, मंगल और चंद्र मारक, सूर्य और मंगल पुनर्विवाह कारक होते हैं।

नवमे यदि सोमः स्यात् व्याधिहीना भवेद्व वधूः ।
जीवचंद्रौ यदि स्यातां बहुपुत्रवती वधूः ॥१६॥
अन्ये तिष्ठन्ति नवमे यदि वंध्या न संशयः ।

नवम में यदि बुध हो तो वधू नीरोग, बृहस्पति और चन्द्रमा हों तो बहु पुत्रवाली और अन्य ग्रह हों तो वन्ध्या होती है—इसमें सन्देह नहीं।

दशमे स्थानके चंद्रो वन्ध्या भवति भामिनी ॥१७॥
भार्गवो यदि वेश्या स्यात् विधवार्किकुजादयः ।
रिक्ता गुरुश्चेज्ज्ञादित्यौ यदि तस्याः शुभं वदेत् ॥१८॥

दशम में चन्द्र हों तो बांझ शुक्र हो तो वेश्या, शनि मंगल आदि हो तो विधवा, गुरु होतो रिक्ता और बुध सूर्य हो तो अशुभ (?) फल वाली होती है।

लाभस्थानगताः सर्वे पुत्रसौभाग्यवर्द्धकाः ।
लग्नद्वादशगश्चंद्रो यदि स्यान्नाशमादिशेत् ॥१९॥

एकादश स्थान में सभी ग्रह पुत्र और सौभाग्य के वर्द्धक तथा लग्न और द्वादश में यदि चंद्रमा हो तो नाशकारक होता है।

शनिभौमौ यदि स्यातां सुरापानवती भवेत् ।
सर्पादित्यौ स्थितौ वन्ध्या शुक्रे सुखवती भवेत् ॥२०॥

द्वादश में यदि शनि और भौम हों तो मदिरा पान करने वाली, राहु और सूर्य हों तो वन्ध्या और शुक्र हो तो सुखी होगी।

इति विवाहकाण्डः

क्षुरिकालक्षणं सम्यक् प्रवक्ष्यामि यथा तथा ।
राहुणा रहिते चन्द्रे शत्रुभंगो भविष्यति ॥१॥

अथ क्षुरिका—युद्ध संबन्धी—लक्षणों को कहता हूं यदि चंद्रमा राहु से रहित हो तो शत्रु अवश्य नष्ट होगा यही उत्तर प्राश्निक को देना चाहिये।

नीचारिक्तास्तु (?) पश्यंति यदि खड्गस्य भंजनम् ।
शुभग्रहयुते चन्द्रे दृष्टे चास्त्रं शुभं वदेत् (भवेत्) ॥२।

चन्द्रमा को यदि नीच और शत्रु ग्रह देखते हों तो तलवार का टूटना और शुभ ग्रह के युत और दृष्ट होने पर उसकी सफलता बतानी चाहिये।

पापग्रहसमेतेषु छत्रारूढोदयेषु च ।
येषु ग्रहा स्थितः किंतु तदस्त्रेण हतो भवेत् ॥३॥

छत्र, आरूढ और लग्न यह पाप ग्रह दृढ़ युक्त हो और जिसमें ग्रहस्थित हो उसके शास्त्रानुसार उस पर का मरण कहना।

अथवा कलहः खड्गः परेणापहृतो भवेत् ।
एषु स्थानेषु सौम्येषु खड्गस्तु शुभदो भवेत् ॥४॥

या कलह होगा या तलवार कोई दूसरा चुरा ले जायगा इन्हीं स्थानों में शुभ ग्रह हों तो खड्ग शुभ फल तथा विजय-का दाता होगा।

प्रदेशे तस्य लग्नस्य लग्ने वा पापसंयुते।
खड्गस्यादावृणं ब्रूयात् त्रिकोणे पापसंयुते ॥५॥

(इस श्लोक के चौथे चरण का अर्थ नीचे के श्लोक की टीका में सम्मिलित है)

लग्न में यदि पाप हों तो तलवार के प्रारंभ में ऋण लेना पड़ा होगा।

तस्करो भंगतो व्योम्नि चतुर्थे पापसंयुते।
खड्गस्य भंगो मध्ये स्यादिति ज्ञात्वा वदेत्सुधीः॥६॥

यदि त्रिकोण (१, ५, ६) पाप युत हों तो चोरी हो जाती है,……चतुर्थ में पापग्रह हों तो लड़ाई के बीच में ही तलवार के टूटने की संभावना रहती है।

एकादशे तृतीये च पापे शस्त्रस्य भंजनम्।
मित्रस्वाम्युच्चनीचादिवर्गेनादि (?) गताः ग्रहाः ॥७॥

एकादश और तृतीय में यदि पाप ग्रह हों तो शस्त्र टूट जायगा। मित्र, स्वामी, उच्च, नीच आदि वर्गों में गत ग्रह—

तत्तद्वर्गस्थलायां तु शस्त्रमित्यभिधीयते।
संमुखे यदि खड्गः स्यात्तत्तीर्यग्ग्रहमुच्यते ॥८॥

उन उन वर्गों के स्थल के सम्मुख शस्त्रपात का भय करते हैं, यदि सन्मुख में तिर्यक्ग्रह हों तो खड्गपात का भय करते हैं।

तिर्यग्मुखश्चेत्तच्छत्रं अन्यशस्त्रं वदेत्सुधीः।
अधोमुखश्चेत्संग्रामे च्युतमाहतमुच्यते ॥९॥

तिर्यग् मुख की राशि हो बहुत चोटीला (?) हथियार है, यदि अधोमुख राशि हो तो संग्राम में वह पुरुष मारा जायगा ऐसा उपदेश करना चाहिये।

तत्तच्चेष्टानुरूपेण तस्य वै मरणं स्मृतम्।

उनकी चेष्टा के अनुरूप ही उस पुरुष का संग्राम मे मरण अथवा जय पराजय का निर्देश करना।

इति क्षुरिका काण्डः

——०——

स्त्रीपुंसो रतिभोगौ च स्नेहोऽस्नेहः पतिव्रता ।
शुभाशुभौ क्रमात्प्रोक्तौ शास्त्रे ज्ञान-प्रदीपिके ॥१॥

इस ज्ञानप्रदीपक शास्त्र में स्त्री-पुरुष का पारस्परिक प्रेम पातिव्रत्य और द्रोह, इस प्रकार शुभ और अशुभ होते हैं वह कहा गया—

तीव्रता (?) उदयारूढो (?) खेंद्रेषु भुजगो यदि ।
तेषां दुष्टस्त्रियः साक्षाद्देवानामपि संशयः ॥२॥

लग्न, आरूढ़, दशम में यदि राहु हो तो स्त्री दुष्ट होगी, चाहे वह देवता के घर ही क्यों न हो ।

लग्नादेकादशस्थाने तृतीये दशमे शशी ।
जीवदृष्टियुतस्तिष्ठेत् यदि भार्या प्रतिव्रता ॥३॥

लग्न से एकादश, तृतीय और दशम में यदि चंद्र हो और गुरु की दृष्टि से युक्त हो तो भार्या पतिव्रता होगी ।

चन्द्रं पश्यन्ति पुंखेटास्तेन युक्ता भवंति चेत् ।
तद्भार्यां दुर्जनां ब्रूयादिति शास्त्रविदो विदुः ॥४॥

चन्द्रमा को पुरुष ग्रह देखते हों या युत हों तो निश्चय ही भार्या दुर्जन होगी । यही शास्त्रज्ञों का कहना है ।

सप्तमस्थो द्विषत्खेटैः नीचारिगशशी तथा ।
बंधुविद्वेषिणी लोके भ्रष्टा सा तु शुभाशुभैः ॥५॥

नीच किंवा शत्रुस्थानगत चन्द्रमा यदि सप्तम में शत्रु-ग्रह से युत किंवा दृष्ट हो तो स्त्री भ्रष्टा होगी ।

भानुजीवौ निशाधीशं पश्यंतौ च युतौ यदि ।
पतिव्रता भवेन्नारी रूपिणीति वदेद् बुधः ॥६॥

सूर्य और गुरु यदि चंद्रमा को देखते हों या युत हों तो वह स्त्री स्वरूपवती और पतिव्रता होगी ।

शुक्रेण युक्तो दृष्टो वा भौमश्चेत्परगामिनी।
बृहस्पतिर्बुधाराभ्यां युक्तश्चेत्कन्यका यदि ॥७॥

शुक्र से यदि भौम (मंगल) युत या दृष्ट हो तो परपुरुषगामिनी और गुरु यदि बुध और मंगल से युत दृष्ट हो तो कन्या भी स्वैरिणी होती है।

शुक्रवर्गयुते भौमे भौमवर्गयुते भृगौ।
पृथके (?) विधवा भर्ता तस्या दोषान्न विंदते ॥८॥

शुक्र वर्ग से भौम या भौम वर्ग से यदि शुक्र युत हो तो पति से पृथक् वह स्त्री विधवा की भांति रहती है और वह उसके दोष नहीं जानता।

भानुवर्गयुते शुक्रे राजस्त्रीणां रतिर्भवेत्।
जीववर्गयुते चंद्रे स्नेहेन रतिमान्भवेत् ॥९॥

सूर्य वर्ग से यदि शुक्र हो तो राजस्त्रियों से रति बताना चाहिये। गुरुवर्ग से यदि चन्द्रमा युत हो तो प्रेम पूर्वक रतिमान् कहना चाहिये।

चंद्रस्त्रिवर्गयुक्तश्चेत् स्त्री सुतज्ञवती भवेत्।
शनिश्चंद्रेण युक्तश्चेत् अतीवव्यभिचारिणी ॥१०॥

चन्द्र यदि त्रिवर्ग से युत हो तो स्त्री पुत्रवती और शनि चंद्र से युत हो तो अधिक व्यभिचारिणी होती है।

पापवर्गयुते दृष्टे शुक्रश्चेत् व्यभिचारिणी।
अरिवर्गयुतश्चन्द्रो यद्यमित्रं वधूनरः (?) ॥११॥

यदि शुक्र पाप वर्ग से युत या दृष्ट हो तो व्यभिचारिणी और शत्रु वर्ग से यदि चंद्र-युत हो तो स्त्री पुरुष में स्नेह नहीं होता।

नीचवर्गयुतश्चंद्रो न च स्त्रीभोगकामुकः।
मित्रवर्गयुतश्चंद्रः मित्रवर्गवधूरतः ॥१२॥

यदि चन्द्र नीच वर्ग से युत हो तो स्त्रीभोग से मनुष्य कामुक नहीं होता। मित्र वर्ग से यदि युत हो तो पुरुष मित्र की स्त्री से रत है—यह बताना चाहिये।

स्वक्षेत्रे यदि शीतांशुः स्वभार्यायां रतिर्भवेत् ।
उच्चवर्गयुतश्चंन्द्रः स्वच्छवंशस्त्रियां रतिः ॥१३॥

यदि चन्द्रमा अपने क्षेत्र में हो तो अपनी स्त्री में रति बताना चाहिये । किन्तु यदि उच्च वर्ग से युत हो तो अपने से ऊंचे खान्दान की स्त्री में रति बतानी चाहिये ।

उदासीनग्रहयुतो दृष्टो वा यदि चन्द्रमाः ।
उदासीनवधूभोगमिति प्राहुर्मनीषिणः ॥१४॥

यदि समग्रह (न मित्र न शत्रु) से चन्द्र युत किंवा दृष्ट हो तो वधू से उदासीन प्रेम (न अत्यधिक न कम) होगा ।

लग्ने च दशमस्थेऽत्र पञ्चमे शनियुक् शशी ।
चोररूपेण कथयेत् रात्रौ स्वर्गवधूरतिः ॥१५॥

लग्न में दशम में और पंचम में चन्द्रमा शनि से युक्त हो तो चोरी से वारांगना-गमन बताना चाहिये ।

ओजोदयस्तदधिपे ओजस्थे चैकमैथुनं ।
समोदये तदधिपे समस्थे द्विरतिं तथा ॥१६॥
लग्नेश्वरफलं ज्ञात्वा तेषां किरणसंख्यया ।
अथवा कथयेद् द्विद्विसंदृष्टग्रहसंख्यया ॥१७॥

लग्न विषम हो लग्नेश सममें हो तो दो एक मैथुन, सम लग्न हो लग्नेश सम में हो तो दो मैथुन होगा । लग्नेश्वर की किरण संख्या से भी यह बताया जाना चाहिये ।

चन्द्रे भौमयुते दृष्टे कलहेन पृथक्शयः ।
भृगुवारियुते दृष्टे स्वस्त्रीकलहमुच्यते ॥१८॥

चन्द्रमा मंगल से युक्त या दृष्ट हो तो स्त्रीपुरुष कलह करके पृथक् सोये और शुक्र और चंद्र (?) युत हों तो अपनी स्त्रियों से कलह हुआ यह बताना चाहिये ।

चतुर्थे चन्द्रतिर्ये(?)च पञ्चमे सप्तमेऽपि वा ।
चन्द्रशुक्रयुते दृष्टे स्वस्त्रिया कलहो भवेत् ॥१९॥

चतुर्थ, तृतीय, पंचम या सप्तम भाव में यदि चंद्र शुक्र योग हो तो स्वस्त्री से कलह बताना चाहिये।

तदीयवसनच्छे (?) कलहं परिकीर्तयेत्।
सप्तमे पापसंयुक्ते दशमे भौमसंयुते ॥२०॥
तृतीये बुधसंयुक्ते स्त्रीविवादस्थले शयः।

..... सप्तम में पाप ग्रह हो दशम में मंगल तथा तृतीय में बुध हो (चन्द्रमा युत दृष्ट हो तो) स्त्री से विवादपूर्वक भूशयन बताना।

लग्ने चन्द्रयुते भौमे द्वितीयस्थे तथा यदि ॥२१॥
जागरश्चोरभीत्या च राशिनक्षत्रसंधिषु।
पृष्ठश्चेद्विधवाभोगः संकटादिति कीर्तयेत ॥२२॥

लग्न में या द्वितीय में यदि मंगल और चंद्र का योग हो तो जागरण चोर के डर आदि से संकटपूर्वक विधवा से रति बताना। यह फल राशिसंधि और नक्षत्रसंधि में भी घटेगा।

तत्संधौ शुक्रसौम्यौ चेत् तत्तज्ज्ञातिपतिं वदेत्।
यत्र कुत्रापि शशिनं पापाः पश्यन्ति चेत्तथा ॥२३॥

राशि संधि नक्षत्र संधि में शुक्र या चंद्र हो तो स्वजातीय स्त्री से रति तथा

× × × × × × × × ×

नपुंसो (?) सेव्यति (?) वधूः शुभश्चेत्पुरुषप्रिया।
सात्विकाश्चन्द्रजीवार्का राजसौ भृगुसोमजौ ॥२४॥
तामसौ शनिभूपुत्रौ एवं स्त्रीपुंगणाः स्मृताः ॥२५॥

कहीं पर स्थित चन्द्रमा को यदि पापग्रह देखते हों तो स्त्री पति की सेवा नहीं करती। चंद्र, बृहस्पति सूर्य ये सत्वगुणी शुक्र, बुध रजोगुणी, शनि, मंगल तमोगुणी है। स्त्री पुरुष का गुण इन्हीं के बलाबल से विचार लेना चाहिये।

इति कामकाण्डः

पुत्रोत्पत्तिनिमित्ताय त्रयः प्रश्ना भवन्ति हि।
उदयारूढछत्रेषु राहुश्चेद् गर्भमादिशेत् ॥१॥

पुत्रोत्पति के लिये तीन प्रश्नों का उत्तर वर्णन किया गया—लग्न आरूढ और छत्र में यदि राहु हो तो गर्भ बताना।

लग्नाद्वा चन्द्रलग्नाद्वा त्रिकोणे सप्तमेऽपि वा।
बृहस्पतिः स्थितो वापि यदि पश्यति गर्भिणी ॥२॥

लग्न किंवा चन्द्र से त्रिकोण (५, ९) या सप्तम में बृहस्पति स्थित होकर प्रश्न लग्न को देखता हो तो गर्भिणी होगी।

शुभवर्गेण युक्तश्चेत् सुखप्रसवमादिशेत्।
अरिनीचग्रहाश्चेत् सुतारिष्टं भविष्यति ॥३॥

शुभ वर्ग से युक्त हो तो प्रसव सुख से और नीच और शत्रु-ग्रह से युत दृष्ट होने पर बालारिष्ट होता है।

प्रश्नकाले तु परिधौ दृष्टे गर्भवती भवेत्।
तदन्तस्थग्रहवसात् पुंस्त्रीभेदं वदेद्बुधः ॥४॥

प्रश्न लग्न परिधि ग्रह दृष्ट हो तो वह स्त्री गर्भवती है ऐसा उपदेश करना और परिधि लग्न के बीच में स्त्रीकारक अथवा पुरुष कारक जो ग्रह बलवान हों उनके अनुसार स्त्री पुरुष का जन्म बताना चाहिये।

यत्र तत्र स्थितश्चन्द्रः शुभयुक्ते तु गर्भिणी।
न लग्नानि न भूतेषु शुक्रादित्येन्दवः क्रमात् ॥५॥
तिष्ठन्ति चेन्न-गर्भं चेत्स्यादेकत्रैते (?) स्थितेन वा।

जहां कहीं भी चन्द्रमा शुभ युक्त हो तो गर्भ है ऐसा निर्देश करना और लग्न भूतादि में अपने युक्त सूर्य चन्द्रमा पृथक् हो अथवा एकत्र ही जहाँ कहीं भी हो तो गर्भ नहीं है ऐसा उपदेश करना चाहिये।

स्त्रीपुंविलोके गर्भिण्यः प्रष्टुर्वा तत्र कालिके ॥६॥
परिवेषादिके दृष्टे तस्या गर्भं विनश्यति।

प्रश्न काल में स्त्री-पुरुष ग्रहों में जो बलवान होकर देखता है, उसी के अनुसार स्त्री अथवा पुरुष का जन्म कहना किन्तु लग्न यदि परिवेषादि दुष्ट ग्रहों से देखा जाता हो तो गर्भ का नाश हो जाता है।

लग्नादोजस्थिते चंद्रे पुत्रं सूते समे सुताम् ।
वशान्नक्षत्रयोगानां तथा सूते सुतं सुतां ॥७॥

लग्न से विषम गृह में चंद्र हो तो पुत्र सम में हो तो पुत्री उत्पन्न होती है। नक्षत्र योग आदि के वश से भी पुत्र पुत्री का विचार किया जाता है।

लग्नतृतीयनवमे दशमैकादशेऽपि वा ।
भानुः स्थितश्चेत् पुत्रः स्यात्तथैव च शनैश्चरः ॥८॥

लग्न, तृतीय, नवम, दशम, एकादश में यदि सूर्य या शनि हो तो पुत्र पैदा होगा।

ओजस्थानगताः सर्वे ग्रहाश्चेत्पुत्रसंभवः ।
समस्थानगताः सर्वे यदि पुत्री न संशयः ॥९॥

लग्न से विषम स्थान में यदि सभी ग्रह हों तो पुत्र और सम स्थान में हों तो पुत्री इसमें सन्देह नहीं।

आरूढात्सप्तमं राशिं यावतीं तां सुरेष्यति (?) ॥१०॥
तावन्नक्षत्रसंख्याकैः सुतः स्याद्दिवसैः सुतम् ।

आरूढ़ से सप्तम राशि पर्यन्त जितने नक्षत्र होंगे उतने ही दिनों मे पुत्र उत्पन्न होगा।

इति पुत्रोत्पत्तिकाण्डः



सुतारिष्टमथो वक्ष्ये सद्यः प्रत्ययकारणम् ।
लग्नषष्ठे स्थिते चंद्रे तदस्ते पापसंयुते ॥१॥
मातुः सुतस्य मरणं किंतु पंचमषष्ठगाः ।
पापाः तिष्ठन्ति चेन्मातुर्मरणं भवति ध्रुवम् ॥२॥

अब शीघ्र विश्वास दिलाने का कारणस्वरूप सुतारिष्ट को बताता हूं। यदि लग्न और षष्ठ में चंद्रमा हो और उन से सप्तम में पापग्रह हों तो माता और पुत्र दोनों का मरण होता है। किंतु यदि पंचम और षष्ठ में पाप ग्रह हों तो माता का मरण निश्चय होगा।

द्वादशे चंद्रसंयुक्ते पुत्रवामाक्षिनाशनम्।
व्ययस्थे भास्करे नश्येत् पुत्रदक्षिणलोचनम् ॥३॥

द्वादश में चंद्रमा हो तो पुत्र की बांई आंख और सूर्य हो तो दाहिनी आंख नष्ट होती है।

पापाः पश्यन्ति भानुं चेत् पितुर्मरणमादिशेत्।
चन्द्रादित्यौ गुरुः पश्येत् पित्रोः स्थितिरितीरयेत् ॥४॥

पाप-ग्रह यदि सूर्य को देखते हों तो पिता की मृत्यु और गुरु यदि चंद्र सूर्य को देखते हों तो मा-बाप को स्थिति बताना चाहिये।

यदि लग्नगतो राहुर्जीवदृष्टिविवर्जितः।
जातस्य मरणं शीघ्रं भवेदत्र न संशयः ॥५॥

यदि लग्न में राहु बिना बृहस्पति की दृष्टि के हो तो पुत्र शीघ्र ही मरेगा—इसमें संशय नहीं।

द्वादशस्थौ अर्किचंद्रौ नेत्रयुग्मं विनश्यति।
षष्ठे वा पंचमे पापाः पश्यन्तीन्दुदिवाकरौ ॥६॥
पित्रोर्मरणमेवास्ति तयोर्मंदः स्थितो यदि।
भ्रातृनाशं तथा भौमे मातुलस्य मृतिं वदेत् ॥७॥

द्वादश स्थान में यदि शनि और चंद्र हों तो जातक की दोनों आंखें मारी जाती हैं। पंचम किंवा षष्ठ में यदि पाप-ग्रह रहें और चन्द्र सूर्य को देखें और पंचम और षष्ठ में शनि भी पड़ा हो तो मां-बाप मर जायंगे। शनि बैठा हो तो भाई का नाश, मंगल हो तो मामा की मृत्यु बताना चाहिये।

उदयादित्रिकस्थेषु कण्टकेषु शुभा यदि।
मित्रस्वात्युच्चवर्गेषु सर्वारिष्टं विनश्यति ॥८॥

लग्नं च चन्द्रलग्नं च, चन्द्रो यदि न पश्यति ।
पापाः पश्यन्ति चेत्पुत्रो व्यभिचारेण जायते ॥६॥

लग्न, पञ्चम नवम में यदि शुभ ग्रह हों और मित्र और उच्च तथा निज गृह में हों तो सब आरिष्ट नष्ट होते हैं। लग्न और चन्द्र लग्न को पाप-ग्रह तो देखते हों पर चन्द्र नहीं देखते हों तो पुत्र व्यभिचार से उत्पन्न होता है।

इति पुत्रप्रश्नकाण्डः

शल्यप्रश्ने तु तत्काले पादभावसुतेऽत्र युक् ।
अर्काभ्यस्तान्नपापं च शेषाणां फलमुच्यते ॥१॥ (?)

शल्य के प्रश्न में प्रश्नकाल मे प्रश्न लग्न से चतुर्थ में जो भाव पड़ा हो उसकी जो संख्या हो उसे १२ से गुणा कर नव को भाग देने से जो शेष वचे उसका फल जानना।

कपालोस्तोष्टकालोष्ठा काष्ठदेवविभूतयः ।
सवासारष्टधान्यानि धनपाषाणदुर्धराः ॥२॥ (?)

सूर्यादि अंश में क्रम से कपाल-इंटा चका काष्ठ देवता की सामग्री सवस्त्र अष्ट धान्य धन पाषाण ये दुर्धर से होते हैं।

गोस्तिश्वावाचपेशामाधीक्रमात् पलानि षोडश ।
येषु शल्येषु मंडूकस्वर्णगोस्थिसुधादिकं ॥३॥ (?)

× × × × × × × × ×

दृष्टाश्चेदुत्तमं चान्ये सर्वेस्युरशुभस्थिताः ।
अष्टाविंशतिकोष्ठेषु वह्निदिष्टयादिकं न्यसेत् ॥४॥

यदि गृह उक्त स्थान में स्थित हों और अशुभान्वित हों तो पूर्व काल को कहते हैं। अट्ठाइस कोष्ठ में कृतिका नक्षत्रों को लिखना चाहिये।

च्छत्रभे तिष्ठति शशी तत्र शल्यमुदाहृतम् ।
उदयक्ष्यादिकं न्यस्येदष्टाविंशतिकोष्ठके ॥५॥

जिस नक्षत्र में चन्द्रमा हो वहां पर शल्य कहना चाहिये। उदय नक्षत्रादिक का न्यास २८ अट्ठाइसों कोष्ठ में रखना चाहिये।

गणयेच्चन्द्रनक्षत्रं तत्र शल्यं प्रकीर्तितम्।
शंकास्ति शल्यविस्तारयामात्रन्योन्यताडितम् ॥६॥
विंशत्यापहृतं षष्ठमरत्निरिति कीर्तितम्।

वहां पर चन्द्रमा के नक्षत्र तक गणना करके शल्य का निर्देश करना चाहिये। इस रीति से जितने कोष्ठ के भीतर शल्य की शंका हो उसकी लंबाई चौडाई का परस्पर गुणा करके बीस से भाग देकर फिर ६ से भाग देना उसकी संज्ञा कही गई है।

रत्निर्गुणित्वा नवभिर्नीलाप्ता (?) तालमुच्यते।
तत् प्रदेशं प्रगुण्यान्तैर्हित्वा विंशतिभिर्यदि ॥७॥
शेषमंगुलमेवोक्तं रत्नप्रादेशमंगुलम्।
एवं क्रमेण रत्न्यादिमगदं कथयेत्तथा ॥८॥

रत्नि को नव से गुणा कर तीस से भाग देना उसकी ताल संज्ञा कही गई है इस रीति से उस प्रदेश में शब्द का निर्देश करना चाहिये। उन उन प्रदेशों को तत्तत अंकों से गुणा कर बीस से भाग देने से शेष अगुलादिक होता हैं इस तरह रत्नी तुल्य वित्ता वश और अंगुल का विचार करना इसी तरह इत्यादिक के उस भूमि का शोधन कहा गया है।

केन्द्रेषु पापयुक्तेषु पृष्ठं शल्यं न दृश्यते।
शुभग्रहयुतेष्वेषु शल्यं तत्र प्रजायते ॥९॥

प्रश्नकर्ता के प्रश्न समय केन्द्रों में पाप ग्रह का योग हो तो हड्डी (शल्य) होते हुए भी दीख नहीं पडेगा—यदि शुभ ग्रह का योगादिक हो तो वहां पर शल्य होता और मिलता है

पापसौम्ययुते केन्द्रे शल्यमस्तीति निर्दिशेत्।
शनिः पश्यति चेद्देवं कुजश्चेत् प्राहुराक्षसान् ॥१०॥
केन्द्रे चन्द्रारसहिते कुजनक्षत्रकोष्ठके।
श्वशल्यं (?) विद्यते तत्र केन्द्रे शुक्रेन्दुसंयुते ॥११॥

यदि पाप ग्रह और शुभ ग्रह दोनों का योग केन्द्र स्थान में हो तो अवश्य शल्य है ऐसा कहना चाहिये। यदि शनैश्चर देखता हो तो देवता का निवास कहना, मंगल देखता होतो राक्षस का और यदि केन्द्र में चन्द्रमा मंगल के साथ मंगल कोष्ठ में पड़ा हो तो घोड़े का शल्य वहां पर है ऐसा कहना चाहिये।

शुक्रस्थे तक्षके कोष्ठे रौप्यश्वेतशिला पिता (?)।
पञ्चषड्वसुभूतानि सपादैकं तथैव च ॥१२॥
सार्धरूपाक्षोरवक्ष (?) सूर्यादीनां क्रमात् स्मृताः।
स्वशल्यगादनैव (?) क्रूरेण कथयेत् सुधीः ॥१३॥

यदि केन्द्र में शुभ चन्द्रमा संयुक्त होकर तक्षक कोष्ठ में शुभ बैठा हो तो चांदी वा सफेद पत्थल उस भूमि में होता है। सूर्यादि ग्रहों के लिये क्रम से पांच छः आठ पांच सवा एक डेढ़ और चार यह अंक होते हैं। शल्य विचार में इतनी इतनी गहराई पर शल्य का निर्देश करना चाहिये।

इति शल्यकाण्डः

अथ वक्ष्ये विशेषेण कूपकाण्डविनिर्णयम्।
आयामे चाष्टरेखाःस्युस्तिर्यग्रेखास्तु पंच च ॥१॥

अब इसके बाद कूपकाण्ड के निर्णय को कहते हैं खड़ी आठ रेखा और पड़ी पांच रेखायें करनी चाहिये।

एवं कृते भवेत् कोष्ठा अष्टाविंशतिसंख्यकाः।

इस रीति से करने से अठ्ठाइस कोष्ठ का एक चक्र बनाया जाता है।

प्रभाते प्राङ्मुखो भूत्वा कोष्ठेष्वेतेषु बुद्धिमान्।
चक्रमालोकयेद्विद्वान् रात्रार्द्धादुत्तराननः ॥२॥

बुद्धिमान् को चाहिये कि प्रातः काल से आधी रात तक प्रश्न देखना हो तो चक्र को पूर्वाभिमुख और आधी रात के बाद उत्तराभिमुख हो कर इस चक्र को देखना चाहिये।

मध्येन्दुमुखमारभ्य मैत्रभाद् भानिशामुखाः । (?(
ईशकोष्ठद्वयं त्यक्त्वा तृतीयादित्रिषु क्रमात् ॥३॥
कृतिकादित्रयं न्यस्यं तदधो रौद्रभं न्यसेत् ।
तदुत्तरं त्रयेष्येव पुनर्वस्वादिकं त्रयम् ॥४॥

बीच से मृगशीर्ष से लेकर लिखना और अनुराधा से तथा भाभिमुख लिखना ईशान कोण में दो कोष्ठ छोडकर तीनों पङ्क्तियों में क्रम से कृतिकादि तीन तीन न्यास कर उसके नीचे आर्द्रा को लिखना उसके बाद तीनों में पुनर्वस्वादि तीन नक्षत्रों को लिखना चाहिये।

तत्पश्चिमादिथाम्येषु मघाचित्रावसानकं ।
तत्पूर्वकोष्ठयोः स्वातीविशाखे न्यस्य तत्परम् ॥५॥

उनसे पश्चिम दक्षिण क्रम से मघा से लेकर चित्रा तक लिखना। उसके पूर्वकोष्ठों में स्वाती और विशाखा को रखना।

प्रदक्षिणक्रमादग्निनक्षत्रास्ताश्च तारकाः ।
मध्याह्ने दक्षिणस्यास्य पश्चिमान्त्यानिशामुखात् (?)॥६॥

प्रदक्षिण क्रम से कृतिकादि नक्षत्रों को न्यास करना चाहिये। मध्याह्न में दक्षिणाभिमुख और ऊर्ध्वोत्तर रात्रि में पश्चिमाभिमुख कोष्ठ को समझ कर देखना चाहिये।

अर्द्ध रात्रौ धनिष्ठाद्यं पूर्ववद्गणयेत् क्रमात् ।
आग्नेय्यां दिशि नैरृत्यां वायाव्यां कोष्ठकद्वयम् ॥७॥
त्यक्त्वा प्रत्येकमेवं हि तृतीयायां विलोकयेत् ।

आधी रात को धनिष्ठादि क्रम से पहले कही हुई रीति से गणना करनी चाहिये। आग्नेय कोण नैरृत्य और वायव्य कोष्ठकों में दो दो कोष्ठ छोड छोड कर प्रत्येक को तीसरे क्रम से देखना चाहिये।

दिनार्धं सप्तभिर्हत्वा तल्लब्धं नाड़िकादिकम् ।
ज्ञात्वा तत्प्रमाणेन कृतिकादीनि विन्यस्येत् ॥८॥

दिनार्ध को सात से भाग देने पर जो प्राप्त हो उसे नाड्यादिक समझ कर उसी के प्रमाण से कृतिकादि नक्षत्रों का विन्यास करना चाहिये।

यन्नक्षत्रं तथा सिद्धं प्रश्नकाले विशेषतः ।
कृतिकास्थानमारभ्य पूर्ववद्गणयेत्सुधीः ॥९॥

इस रीति से जो नक्षत्र आवे और प्रश्न काल में विशेष कर इस रीति से देखकर कृतिका के स्थान से लेकर पहले कही हुई रीति से गणना करनी चाहिये।

यत्रेन्दुर्दृश्यते तत्र सम्वृद्धिरुदकं भवेत् ।
शुक्रनक्षत्रकोष्ठेषु तत्तत्स्वर्णमुदाहरेत् ॥१०॥

जहां पर चन्द्रमा दीख पड़े वहां पर बहुत ज्यादे जल होता हैं और शुक्रादि नक्षत्र कोष्ठक में वहां वहां पर स्वर्णादिक को कहना चाहिये ।

तुलोक्षनक्रकुंभालिमीनकर्क्यालिराशयः ।
जलरूपास्तदुदये जलमस्तीति निर्दिशेत् ॥११॥

तुला, वृष, मकर कुंभ, वृश्चिक, मीन और कर्क ये जल राशियां हैं अतः इनके उदय में प्रचुर जल बहाना चाहिये ।

तत्रस्थौ शुक्रचंद्रौ चेदस्ति तत्र बहूदकम् ।
बुधजीवोदये तत्र किंचिज्जलमितीरयेत् ॥१२॥

उसमें यदि शुक्र और चन्द्र हों तो पानी ज्यादा और बुध वृहस्पति हों तो कुछ कुछ जल बताना चाहिये ।

एतान् राशीन् प्रपश्यंति यदि शन्यर्कभूमिजाः ।
जलं न विद्यते तत्र फणिदृष्टे बहूदकम् ॥१३॥

इन राशियों को यदि शनि सूर्य और मंगल देखते हों तो जल नहीं और राहु देखें तो बहुत जल होता हैं।

अधस्तादुदयारूढं छत्रयोरुपरि स्थिते ।
जलग्रहयुते दृष्टे अधस्तात्पाददो जलम् ॥१४॥

उदय लग्न से नीचे और छत्र से ऊपर यदि जल ग्रहों का दृष्टि योग हो तो नीचे पैर तक ही जल बताना चाहिये ।

उच्चे दृष्टे ग्रहे राशौ उच्चमेवोदकं भवेत् ।
ऊर्ध्वादधस्थलयोः तिष्ठति नोदमधोजलम् ॥१५॥

जल राशियां उच्च ग्रह से युत दृष्ट हों तो पानी ऊंचे और नीच ग्रह से युत दृष्ट हों तो नीचे होता है। (?)

चतुःस्थाननाधस्तान् नागमं वदेत् ।
दशमे नवमे वर्षे केचिदाहुर्मनीषिणः ॥१६॥ (?)

जलाजलग्रहवशात् जलनिर्णयमादिशेत् ।
केन्द्रेषु तिष्ठतश्चन्द्रो जीवो यदि शुभोदकम् ॥१७॥

जल ग्रह और अजल ग्रह पर से पानी का विचार करना चाहिये। केन्द्र में यदि चंद्र और गुरु हों तो पानी अच्छा होगा।

चन्द्रशुक्रयुते केन्द्रे पर्वतेऽपि जलं भवेत् ।
चन्द्रसौम्ययुते केन्द्रे जीर्णालाधरणोदकम् ॥१८॥

केन्द्र में यदि चन्द्र और शुक्र हों तो पर्वत मे भी जल मिले। केन्द्र में यदि चंद्र बुध हो तो पुराने खंडहरों में भी जल मिले।

आरूढात्केन्द्रके चन्द्रे परिध्यादिविवीक्षिते ।
अधो जलंततोऽगाधं पूर्वोक्तग्रहराशिभिः ॥१९॥

आरूढ़ से केन्द्र स्थान में चन्द्र हों और परिध्यादि से दृष्ट हो तो नीचे पहले कहे हुये ग्रहों की राशि से अगाध जल जानना।

शुक्रेण सौम्ययुक्तेन कषायजलमादिशेत् ।
कन्यामिथुनगःसौम्यो जलं स्यादन्तरालकम् ॥२०॥

पूर्वोक्त जल ग्रह और जल राशि से बुध शुक्र का योग होता हो तो पानी कसेला होगा। यदि बुध कन्या और मिथुन में हो तो जल भीतर ही भीतर होगा।

भास्करे क्षारसलिलं परिवेषं धनुर्यदि ।
राहुणा संयुते मंदे जलं स्वादंतरालकम् ॥२१॥

उन राशियों में सूर्य हो तो पानी खारा और परिवेष धनुराशियों में राहु शनैश्चर का योग हो तो अन्तराल में जल होता है।

बृहस्पतौ राहुयुते पाषाणो जायतेतराम्।
शुक्रे चन्द्रयुते राहौ अगाधजलमेधते ॥२२॥

यदि बृहस्पति और राहु युक्त हो तो नीचे खोदने पर पत्थल निकलता है शुक्र (१) चन्द्रमा राहु का योग हो तो अगाध जल वहां पर होता है।

अर्कस्योन्नतभूमिः स्यात् पाषाणा कांडकस्थले।
नालिकेरादिपुन्नागपूगयुक्ता क्षमा गुरोः ॥२३॥

काण्डकस्थल—निर्जन स्थान में सूर्य की पाषाण मयी उन्नत भूमि होती है। नारियल पान सुपारी इत्यादि से युक्त भूमि बृहस्पति की होती है।

शुक्रस्य कदलीवल्ली बुधस्य फलिता वदेत्।
वल्लिका केतकी राहोरिति ज्ञात्वा वदेद्बुधः ॥२४॥

शुक्र के लिये केले का वृक्ष और बुध के लिये फली हुई लता होती है। केतकी की वल्ली राहु की होतो यह सब जान कर विद्वान् को आदेश करना चाहिये।

शनिराहूदये कोष्ठे रङ्गवल्लीकदर्शनम्।
स्वामिदृष्टियुते वाऽपि स्वक्षेत्रमिति कीर्तयेत् ॥२५॥

शनि राहु का उदय कोष्ठ में होतो रङ्ग वल्ली को दिखलाता है यदि लग्न स्वामी से दृष्ट वा युत हो तो अपनी जमीन में अपना वृक्ष कहना चाहिये।

अन्ये (?) युक्तेऽथवा दृष्टे परकीयस्थलं वदेत्।

यदि दूसरे का दृष्टि योग हो तो दूसरे की भूमि बताना चाहिये।

इति कूपकाण्डः

सेनस्यागमनं चैव प्रवक्ष्याम्यरिभूभृताम्।
चरोदये च सारूढे पापाः पञ्चगमा यदि ॥१॥

सेना के आगमन के विषय में भी, जो शत्रु राजा समय समय पर आया करते हैं, कहता हूं—चर लग्न हो चर आरूढ़ हो और पाप ग्रह यदि पञ्चम स्थान में हों।

सेनागमनमस्तीति कथयेत् शास्त्रवित्तमः।
चतुष्पादुदये जाते युग्मे राश्युदये पिता (?) ॥२॥

तो शास्त्रज्ञ को सेना का आगमन बताना चाहिये। चतुष्पद राशि का उदय या युग्म राशि का उदय हो,

लग्नस्याधिपतौ वक्रे सेना प्रतिनिवर्तते।
चरोदये चरारूढे भौमार्किगुरवो रविः ॥३॥

और लग्नेश वक्र हो तो सेना लौट जायगी। यदि लग्न भी चर हो और आरूढ़ भी चर हो और उसमें मंगल शनि और गुरु एवं सूर्य,

तिष्ठंति यदि पश्यंति सेना याति महत्तरा।
आरूढे स्वामिमित्रोच्चग्रहयुक्तेऽथ वीक्षिते ॥४॥

पड़े हों या देखते हों तो बडी भारी सेना भी लौट जाती है। आरूढ़ यदि स्वामी, मित्र या उच्च ग्रह से युक्त हो अथवा दृष्ट हो,

स्थायिनो विजयं ब्रूयात् यायिनो रोगमादिशेत्।
एवं छत्रे विशेषोऽस्ति विपरीते जयो भवेत् ॥५॥

तो स्थायी की जीत होगी और यायी रोगाक्रान्त होगा। छत्र मे भी यही विशेषता है। इसके विपरीत होने से यायी की जय होगी।

आरूढे बलसंयुक्ते स्थायी विजयमाप्नुयात्।
यायी बलं समायाति छत्रे बलसमन्विते ॥६॥

आरूढ़ यदि बली हो तो स्थायी की और छत्र यदि बली हो तो यायी की जीत बतानी चाहिये।

आरूढे नीचरिपुभिर्ग्रहैर्युक्तेऽथ वीक्षिते।
स्थायी परगृहीतस्य छत्रेप्येवं विपर्यये ॥७॥

आरूढ़ यदि शत्रु नीच आदि ग्रहों से युक्त किंवा दृष्ट हो तो स्थायी दूसरे द्वारा गिरफ्तार कर लिया जाता है। इससे उलटा अर्थात् उच्च आदि ग्रहों से यदि छत्र युक्त दृष्ट हो तो भी यही फल होता है।

शुभोदये तु पूर्वाह्णे यायिनो विजयो भवेत्।
शुभोदये तु सायाह्ने स्थायी विजयमाप्नुयात् ॥८॥

लग्न में शुभ ग्रह हों तो पूर्वाह्न में आक्रमणकारी की विजय और शुभ लग्न में ही अपराह्न में स्थायी की विजय बताना।

छत्रारूढोदये वापि पुंराशौ पापसंयुते।
तत्काले पृच्छतां सद्यः कलहो जायते महान् ॥९॥

छत्र आरूढ़ के उदय में या पुरुष राशि के पापयुत होने पर यदि कोई पूछे तो शीघ्र ही कलह बताना चाहिये।

पृष्ठोदये तथारूढे पापैर्युक्तेऽथ वीक्षिते।
दशमे पापसंयुक्ते चतुष्पादुदयेऽपि च ॥१०॥
कलहो जायते शीघ्रं संधिः स्याच्छुभवीक्षिते।

आरूढ़ यदि पृष्ठोदय राशि हो और पाप से युत या दृष्ट हो दशम में पाप ग्रह हों या लग्न में चतुष्पद राशि हो तो शीघ्र कलह होगा। पर यदि शुभ ग्रह देखते हों तो संधि होती है।

उदयादिषु षष्ठेषु शुभराशिषु चेत् स्थिताः ॥११॥
स्थायिनो विजयं ब्रूयात् तदूर्ध्वं चेद्रिपोर्जयम्।

लग्न से लेकर छः भावों में शुभ राशियों में यदि ग्रह हों तो स्थायी की अन्यथा आक्रमणकारी की विजय होती है।

पापग्रहयुते तद्वान्मित्रे (?) संधिः प्रजायते ॥१२॥
उभयत्र स्थिताः पापाः बलवन्तः सतोजयम्।

यदि उन्हीं ६ राशियों में पाप ग्रह हों तो संधि और यदि दोनों बली पाप ग्रह हों तो यायी और स्थायी में जो सज्जन हो उसी को विजय बतानी चाहिये।

तुर्यादिराशिभिः षड्भिः स्थायिनो बलमादिशेत् ॥१३॥
एवं ग्रहस्थितिवशात् पूर्ववत्कथयेद् बुधः।

यदि चतुर्थ से लेकर नवम पर्यन्त ६ राशियों में शुभ ग्रह हों तो स्थायी की जय होती है,—बुद्धिमान् ग्रहों के वश से फल कहें।

ग्रहोदये विशेषोऽस्ति शन्यर्कांगारका यदि ॥१४॥
आगतस्य जयं ब्रूयात् स्थायिनो भंगमादिशेत्।

विशेषता यह है कि प्रश्न लग्न में शनि सूर्य या मंगल हों तो यायी की जय और स्थायी की हार होगी।

बुधशुक्रोदये संधिः जयः स्थायी (?) गुरूदये ॥१५॥
पंचाष्टलाभारिष्वेषु तृतीयेऽर्किः स्थितो यदि।
आगतः स्त्रीधनादीनि हृत्वा वस्तूनि गच्छति ॥१६॥

उसी प्रश्न लग्न में यदि बुध और शुक्र हों तो सन्धि हो जाती है पर गुरु हों तो स्थायी की विजय होती है। ५, ८, ११, ६ इनमें या तृतीय में यदि शनि हो तो आगत राजा स्त्री धन आदि ले कर चला जायगा।

द्वितीये दशमे सौरिः यदि सेनासमागमः।
यदि शुक्रः स्थितः षष्ठे योग्यसंधिर्भविष्यति ॥१७॥

यदि २, या १० में शनि हो तो सेना आयेगी पर यदि षष्ठ में शुक्र हो तो सन्धि हो जायगी।

चतुर्थे पंचमे शुक्रो यदि तिष्ठति तत्क्षणात्।
स्त्रीधनादीनि वस्तूनि यायी हृत्वा प्रयास्यति ॥१८॥

यदि ४ या ५ वें स्थान में शुक्र हो तो शीघ्र ही यायी (चढ़ाई करने वाला,) स्त्री धन आदि को हरण करके चला जायगा।

सप्तमे शुक्रसंयुक्ते स्थायी भवति दुर्लभः।
नवाष्टसप्तसहजान्वितान्यत्र कुजो यदि ॥१६॥
स्थायी विजयमाप्नोति परसेनासमागमे।

सप्तम में यदि शुक्र हो तो स्थायी मुश्किल से बचता है। यदि ६, ८, ७, ३ इन से अन्यत्र मंगल हो तो शत्रु की सेना का आक्रमण होने पर स्थायी की विजय होगी।

चतुर्थे पंचमे चन्द्रो यदि स्थायी जयी भवेत् ॥२०॥
तृतीये पंचमे भानुः यदि सेनासमागमः।
मित्रस्थानस्थितः संधिर्नोचेत्स्थायी जयी भवेत् ॥२१॥

४, या ५ में यदि चन्द्रमा हो तो स्थायी की जय होगी, ३ या ५ में यदि सूर्य हो और वह यदि मित्र स्थान में हो तो संधि, अन्यथा स्थायी की जय बतानी चाहिये।

चतुर्थे वित्तदः स्थायी अष्टमे यायिनो मृतिः।

यदि सूर्य ४र्थ में हो तो स्थायी को धनद और ८ में हो तो यायी की मृत्यु बतानी चाहिये।

उदयात् सहजे सौम्यो द्वितीये यदि भास्करः ॥२२॥
स्थायिनो विजयं ब्रूयात् व्यत्यये यायिनो जयं।
ससौम्ये भास्करे युक्ते समं ब्रूयात् द्वयोस्तयोः ॥२३॥

लग्न से तृतीय में यदि शुभ ग्रह हों द्वितीय में यदि सूर्य हो तो स्थायी की अन्यथा यायी की विजय होती है। किन्तु यदि सूर्य शुभग्रहों से युत हो तो दोनों को बराबर कहना चाहिये।

उदयात् पंचमे सौम्ये स्थायी भवति चार्तिकः।
द्वित्रिस्थे सोमजे यायी विजयी भवति ध्रुवम् ॥२४॥

लग्न से यदि पंचम में बुध हो तो स्थायी कातर होगा। यदि बुध २ रे, ३रे स्थान में हो तो यायी निश्चय विजयी होता है।

एकादशे व्यये सौम्ये स्थायी विजयमेष्यति।
एकादशे रवौ यायी हतस्त्रीपतिबांधवः ॥२५॥

यदि बुध ११, या १२ वें स्थान में हो तो स्थायी की विजय होती है। रवि यदि ११ वें स्थान में हो तो यायी का स्त्री धन आदि सर्वस्व नष्ट होगा।

शत्रुनीचस्थिते सूर्ये स्थायिनो भंगमादिशेत्।
उदयात्पंचमे शत्रुव्ययेषु विषये यदि ॥२६॥

विपरीतेषु युद्धं स्यात् भानौ द्वादशके यदि।
तत्र युद्धं न भवति शास्त्रे ज्ञानप्रदीपिके ॥२७॥

सूर्य यदि शत्रु या नीच राशि में हो तो स्थायी की हार होती है। लग्न से पंचम, षष्ठ और १२ वें में युद्ध होता है। यदि सूर्य द्वादश में हो तो युद्ध नहीं होता।

चरराशिस्थिते चन्द्रे चरराश्युदयेऽपि वा।
आगतारेर्हि सन्धानं विपरीते विपर्ययः ॥२८॥

चन्द्रमा चर राशि में या चर लग्न में हो तो आगत शत्रु से संधि और अन्यथा युद्ध होगा।

युग्मराशिगते चन्द्रे स्थिरराश्युदयेऽपि वा।
अर्द्धमार्गं समागत्य सेना प्रतिनिवर्तते ॥२९॥

चन्द्रमा यदि द्विस्वभाव राशि में हो और लग्न में स्थिर राशि हो तो सेना आधे रास्ते से आकर लौट जायगी।

सिंहाद्याः राशयः षट् च भास्करः स्थायिरूपिणः।
कर्काद्युत्क्रमेणैव चन्द्रो वै यायिरूपिकाः ॥३०॥

सिंह से लेकर मिथुन तक ६ राशियाँ और सूर्य ये स्थायी के रूप हैं। और बाकी ६ राशि और चन्द्रमा यायी के स्वरूप हैं।

स्थायी (?) यायी (?) क्रमेणैवं ब्रूयाद्ग्रहवशाद्बलम्।

इस प्रकार स्थायी और यायी के बल की विवेचना क्रम से होनी चाहिये।

इति सेनागमनकाण्डः।

यात्राकाण्डं प्रवक्ष्यामि सर्वेषां हितकाम्यया।
गमनागमनं चैव लाभालाभौ शुभाशुभौ ॥१॥
विचार्य कथयेद्विद्वान् पृच्छतां शास्त्रवित्तमः।

ज्ञानप्रदीपिका ।

सब के हितार्थ यात्रा काण्ड कहता हूं। इस काण्ड से गमन आगमन लाभ हानि, शुभ, अशुभ आदि बातें विचार कर कहनी चाहिये।

मित्रक्षेत्राणि पश्यन्ति यदि मित्रग्रहास्तदा ॥२॥
मित्राय गमनं ब्रूयात् नीचं नीचग्रहाणि (?) च ।
नीचाय गमनं ब्रूयात् उच्चानुच्चग्रहाणि (?) च ॥३॥

यदि मित्रक्षेत्र को मित्रग्रह देखते हों तो मित्र के लिये गमन कहना चाहिये। योंही यदि नीच ग्रह नीच स्थानों को देखते हों तो नीच के लिये और उच्च ग्रह देखते हों तो अपने से उच्च के पास यात्रा बतानी चाहिये।

स्वाधिकाये(?)ऽतिगमनं पुंराशिं पुंग्रहा यदि ।
स्त्रिया गमनमित्युक्तमन्येष्वेवं विचारयेत् ॥४॥

पुरुष राशि को यदि पुंग्रह देखते हों तो स्त्री के लिये गमन होता है। अन्य परिस्थितियों में भी ऐसे ही विचार लेना चाहिये।

चरराश्युदयारूढे तत्तद्ग्रहविलोकने ।
तत्तदाशासु तिष्ठन्ति पृच्छतां शास्त्रनिर्णयः ॥५॥

चर राशि यदि लग्न या आरूढ़ में हो तो जो ग्रह उन्हें देखता हो उसी की दिशा का प्रश्न कहना चाहिये ऐसा शास्त्रीय सिद्धान्त है।

स्थिरराश्युदयारूढे शन्यर्काङ्गारकाः स्थिताः ।
अथवा दशमे वा चेद् गमनागमने न च ॥६॥

स्थिर राशि उदय या आरूढ़ में हों और शनि, सूर्य और मंगल हो या दशम में भी ये हों तो गमन या आगमन नहीं होता।

शुक्रसौम्येन्दुजीवाश्चेत् तिष्ठन्ति स्थिरराशिषु ।
विद्येते स्वेष्टसिद्ध्यर्थं गमनागमने तथा ॥७॥

यदि स्थिर राशि में शुक्र, बुध, चंद्र या बृहस्पति हों तो अपनी इष्टसिद्धि के लिये गमनागमन बताना च ये।

स्थितिप्रश्नेति (?) तं ब्रूयान्मस्तकोदयराशिषु ।
पृष्ठोदये तु गमनं तथा गमनमेधते ॥८॥

यदि ये शीर्षोदय राशि में हों तो प्रश्न स्थिति का बताना चाहिये। पृष्ठोदय राशि में हों तो वृद्धिपूर्वक गमन बताना।

द्वितीये च तृतीये च तिष्ठन्ति यदि पुंग्रहाः ।
त्रिदिनात्पत्रिका याति ...... प्रोषितस्य च ॥९॥

द्वितीय तृतीय में यदि पुरुष ग्रह हों तो दो या तीन दिन में विदेशस्थ व्यक्ति का पत्र आता है।

लग्नस्थसहजव्योमलाभेष्विंदुज्ञभार्गवाः ।
तिष्ठन्ति यदि तत्काले चावृतिः प्रोषितस्य च ॥१०॥

यदि चंद्र, बुध और शुक्र, १, ३, १० या ११ वें स्थान में हो तो प्रवासी शीघ्र ही लौटेगा।

चतुर्थे वारि वा पापाः तिष्ठन्ति चेत् शुभग्रहाः ।
पत्रिका प्रोषितस्याशु समायाति न संशयः ॥११॥

यदि ४र्थ और षष्ठ में क्रमशः पाप ग्रह और शुभ ग्रह हों तो प्रवासी की पत्रिका निः सन्देह शीघ्र आवेगी।

चापोक्षछागसिंहेषु यदि तिष्ठति चन्द्रमाः ।
चिन्तितस्तत्तदाऽऽयाति चतुर्थे चेत्तदागमः ॥१२॥

धनु, वृष, मेष और सिंह में यदि चन्द्रमा हो तो चिन्तित आवेगा पर कर्क में हो तो उसका आगमन हो गया हैं।

स्वस्वक्षेत्रेषु तिष्ठन्ति शुक्रजीवेन्दुसोमजाः ।
प्रयाणे गमनं ब्रूयात् तत्तदाशासु सर्वदा ॥१३॥

यदि शुक्र, वृहस्पति, चंद्र और बुध अपनी राशि में हों तो उनकी दिशाओं में यात्रा बतानी चाहिये।

ग्रहाः स्वक्षेत्रमायान्ति यावत्तावत् फलं वदेत् ।
शुभग्रहवशात् सौख्यं पीडां पापग्रहैर्वदेत् ॥१४॥

ग्रह जितने दिन में अपने क्षेत्र में आवें उतने दिन में समाचार आना चाहिये। शुभ ग्रह हो तो शुभ और अशुभ ग्रह हो तो अशुभ फल बताना चाहिये।

सप्तमाष्टमयोः पापास्तिष्ठन्ति यदि च ग्रहाः ।
प्रोषितो हृतसर्वस्वस्तत्रैव मरणं व्रजेत् ॥१५॥

यदि सप्तम और अष्टम में पापग्रह हों तो प्रवासी विदेश में ही हृतसर्वस्व हो कर मर जाता है।

षष्ठे पापयुते मार्गगामी बद्धो भविष्यति ।
चरराशिस्थिते पापे चिरेणायाति निश्चितम् ॥१६॥

षष्ठ में यदि पाप-ग्रह हो तो प्रवासी पुरुष मार्ग में ही बद्ध हो जाता है। यदि पाप ग्रह चर राशि में स्थित हो तो वह चिरकाल में आवेगा।

बलाबलवशेनैव शुभाशुभनिरूपणम् ।

इस प्रकार ग्रहों में बलाबल के विचार से शुभाशुभ फल का निरूपण होता है।

इति यात्राकाण्डः

जलराशिषु लग्नेषु जलग्रहनिरीक्षणे ।
कथयेद् वृष्टिरस्तीति विपरीते न वर्षति ॥१॥

लग्न में जल राशि हो और जलग्रह देखते हों तो वृष्टि होगी अन्यथा नहीं।

जलराशिषु शुक्रेन्दू तिष्ठतो वृष्टिरुत्तमा ।
जलराशिषु तिष्ठन्ति शुक्रजीवसुधाकराः ॥२॥
आरूढोदयराशिं चेत् पश्यन्त्यधिकवृष्टयः ।

जलराशि में यदि शुक्र, तथा चन्द्र हों तो अच्छी वृष्टि होगी। और जल राशि में शुक्र, बृहस्पति चन्द्र हों और लग्न और आरूढ़ को देखते हों तो अधिक वृष्टि होगी।

एते स्वक्षेत्रमुच्चं वा पश्यन्ति यदि केन्द्रकम् ॥३॥
त्रिचतुर्दिवसादन्तर्महावृष्टिर्भविष्यति ।

यदि शुक्र बृहस्पति और चन्द्रमा अपने क्षेत्र को उच्च राशि को या दशम एकादश को देखते हों तो तीन ही चार दिनों के भीतर महावृष्टि होगी ।

लग्नाच्चतुर्थे शुक्रः स्यात्तद्दिने वृष्टिरुत्तमा ॥४॥
चन्द्रे पृष्ठोदये जाते पृष्ठोदयमवीक्षिते ।
तत्काले परिवेषादिदृष्टे वृष्टिर्महत्तरा ॥५॥

यदि लग्न से चतुर्थ में चन्द्रमा हो तो उसी दिन उत्तम वृष्टि होगी चन्द्रमा यदि पृष्ठोदय राशि में हों और पृष्ठादय राशि को देखते हों और उस पर परिवेषादि उपग्रहों की दृष्टि हो तो वृष्टि अच्छी होगी ।

केन्द्रेषु मन्दभौमज्ञराहवो यदि संस्थिताः ।
वृष्टिर्नास्तीति कथयेदथवा चण्डमारुतः ॥६॥

केन्द्र (१, ४, ७, १०) में यदि शनि, मंगल, बुध और राहु स्थित हों तो वृष्टि न होगी या प्रचण्ड वायु बहेगी ।

पापसौम्यविमिश्रैश्च अल्पवृष्टिः प्रजायते ।
पापश्चेन्मन्दराहुश्चेत् वृष्टिर्नास्तीति कीर्तयेत् ॥७॥

यदि उपर्युक्त स्थानों में पाप और शुभ दोनों प्रकार के ग्रह हों तो वृष्टि थोड़ी होगी यदि शनि और राहु हों तो वृष्टि नहीं होगी ।

शुक्रकार्मुकसन्धिश्चेद्धारावृष्टिर्भविष्यति ।

यदि धनु में शुक्र पड़े हों तो मूसलाधार पानी बरसेगा ।

इति वृष्टिकाण्डः

उच्चेन दृष्टे युक्ते वा अर्घ्यवृद्धिर्भविष्यति।
नीचेन युक्ते दृष्टे वा अर्घ्यक्षयमितीरितम् ॥१॥
मित्रस्वामिवशात् सौम्यामित्रं ज्ञात्वा वदेत्सुधीः।
शुभग्रहयुते दृष्टे त्वर्घ्यवृद्धिर्भविष्यति ॥२॥

उच्च से दृष्ट किंवा युक्त होने पर अर्घ्य (अन्न का भाव) की वृद्धि और नीच से युत वा दृष्ट होने पर क्षति होती है। इस विषय में विद्वान को मित्र, शत्रु, स्वामी, शुभ, पाप का पूर्ण विचार करना चाहिये। शुभ ग्रह से युत दृष्ट होने पर अर्घ (दर) की वृद्धि होगी।

पापग्रहयुते दृष्टे त्वर्घ्यवृद्धिक्षयो भवेत्।
नीचशत्रुवशान्न्यूनमर्घ्यनिर्णयमोरितम् ॥३॥

लग्न यदि पाप ग्रह से युत या दृष्ट हो तो दर की बढ़वारी घटेगी नीच और शत्रु के वश से इसकी न्यूनता का निर्णय कहा जाता है।

इत्यर्घ्यकाण्डः

जलराशिषु लग्नेषु जीवशुक्रोदयो यदि।
पोतस्यागमनं ब्रूयादशुभश्चेन्न सिद्ध्यति ॥१॥

लग्न में जल राशि हो और उसमें बृहस्पति और शुक्र पड़े हों तो जहाज शीघ्र लौटेगा। यदि अशुभ ग्रह हों तो काम सिद्ध नहीं होगा।

आरूढकेन्द्रलग्नेषु वीक्षितेष्वशुभग्रहैः।
पोतभंगो भवति च शत्रुभिर्वा तथा वदेत् ॥२॥

आरूढ, केंद्र (१, ४, ७, १०) को यदि अशुभ ग्रह देखते हों तो शत्रुओं ने जहाज लूट लिया है—ऐसा—ऐसा बताना।

अदृष्टस्योदये लग्ने शुभे नौका व्रजेत्स्वयम्।
तद्ग्रहे तु यथा दृष्टे तथा नौदर्शनं भवेत् ॥३॥

यदि लग्न शुभ ग्रह से दृष्ट पाप ग्रह से अदृष्ट हो तो नौका अनायास चलेगी । उन ग्रहों में जैसे ग्रह का दृष्टियोग हो वैसे ही नौका का दर्शन होगा ।

चरराशौ चरच्छत्रे द्रुत आयाति नौस्तथा ।
चतुर्थे पंचमे चन्द्रो यदि नौः शीघ्रमेष्यति ॥४॥

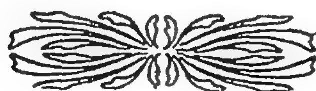
चर राशि में और चर छत्र में यदि चंद्रमा हो तो द्रुत नौका आ जाती है। चन्द्रमा यदि चौथे या पांचवें स्थान में हो तो नौका शीघ्र आयेगी यह कहना चाहिये ।

द्वितीये वा तृतीये वा शुक्रश्चेन्नौसमागमः ।
अनेनैव प्रकारेण सर्वं वीक्ष्य वदेत्स्फुटम् ॥५॥

यदि द्वितीय तृतीय स्थान में शुक्र हो तो नौका का आगमन शीघ्र ही होगा । इस प्रकार से सब देख भाल कर स्पष्ट फल बताना चाहिये ।

इति नौकाण्डः

इति ज्ञानप्रदीपिका नाम ज्यौतिषशास्त्रम् समाप्तम् ।



देवकुमार-ग्रन्थमाला का द्वितीय पुष्प (ख)

सामुद्रिक-शास्त्र

(ज्योतिष-शास्त्र)

अनुवादक और सम्पादक,

ज्योतिषाचार्य पण्डित रामव्यास पाण्डेय

प्रकाशक,

निर्मलकुमार जैन

मन्त्री

श्री जैन सिद्धान्त भवन, आरा।

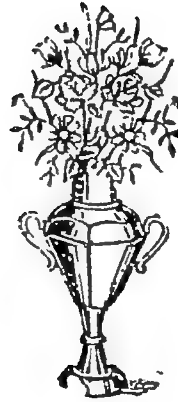
वीर संवत् २४६० (सन् १९३४)

सामुद्रिक-शास्त्र

की

विषय-सूची

पृष्ठ



परिशिष्टम्

जिनेन्द्राय नमः

सामुद्रिका-शास्त्रम्

आदिदेवं नमस्कृत्य सर्वज्ञं सर्वदर्शिनम् ।
सामुद्रिकं प्रवक्ष्यामि शुभांगं पुरुषस्त्रियोः ॥१॥

सबके ज्ञाता, सब कुछ देखने वाले, आदि देव, (ऋषभदेव) परमात्मा को नमस्कार करके, पुरुष और स्त्रियों के शुभ लक्षणों को बताने वाले सामुद्रिक शास्त्र को कहता हूं ।

पूर्वमायुः परीक्षेत पश्चाल्लक्षणमादिशेत् ।
आयुर्हीननराणां तु लक्षणैः किं प्रयोजनम् ॥२॥

सामुद्रिक शास्त्र के द्वारा शुभाशुभ फलों के विवेचन करने वाले पुरुष को पहले प्रश्न-कर्त्ता की आयु की परीक्षा कर अन्य लक्षणों का आदेश करना चाहिये। क्योंकि जिसकी आयु ही नहीं है वह अन्य लक्षण जान कर क्या करेगा ?

वामभागे तु नारीणां दक्षिणे पुरुषस्य च ।
निर्दिष्टं लक्षणं चैव सामुद्र-वचनं यथा ॥३॥

इस शास्त्र के वचन के अनुसार, पुरुष के दाहिने और स्त्री के वांये अंग के लक्षणों का निर्देश करना चाहिये ।

पंचदीर्घं चतुर्ह्रस्वं पंचसूक्ष्मं षडुन्नतम् ।
सप्तरक्तं त्रिगम्भीरं त्रिविस्तीर्णमुदाहृतम् ॥४॥

जैसा कि आगे बताया है, मनुष्य के पांच अंगों में दीर्घता (बड़ा होना) चार अंगों में ह्रस्वता (छोटाई), पांच में सूक्ष्मता (बारीकी) छः अंगों में ऊंचाई, सात में ललाई, तीन में गंभीरता (गहराई) और तीन में विस्तीर्णता (चौड़ाई) प्रशस्त कही गई है ।

बाहुनेत्रनखाश्चैव कर्णनासास्तथैव च ।
स्तनयोरुन्नतिश्चैव पंचदीर्घं प्रशस्यते ॥५॥

भुजाओं में, नेत्रो में, नखों में कानों में और नाक में दीर्घता होनी चाहिये। स्तनों में दीर्घता के साथ ही साथ कुछ ऊंचाई होनी चाहिये। इन्हीं पांच अंगो की दीर्घता प्रशस्त बताई गई है।

ग्रीवा प्रजननं पृष्ठं ह्रस्वजंघे प्रपूरिते।
ह्रस्वानि यस्य चत्वारि पूज्यमाप्नोति नित्यशः ॥६॥

गर्दन पीठ और भरी हुई जंघा ये चार अंग जिसके ह्रस्व (छोटे) होते हैं वह सदा पूजा पाता है।

सूक्ष्मान्यंगुलिपर्वाणि दन्तकेशनखत्वचः।
पञ्च सूक्ष्माणि येषां स्युस्तेनरा दीर्घजीविनः ॥७॥

अंगुलों के पोर, दाँत, केश नख और त्वक् (चमड़ा) ये पाँचों जिन पुरुषों के सूक्ष्म (बारीक) होते हैं वे दीर्घजीवी होते हैं।

कक्षः कुक्षिश्च वक्षश्च घ्राणस्कन्धौ ललाटकम्।
सर्वभूतेषु निर्दिष्टं षडुन्नतशुभं विदुः ॥८॥

कक्ष (कांख), कुक्षि, (कोंख) छाती, नाक, कन्धे और ललाट, इन छः अंगों का ऊंचा होना किसी भी जीव के लिये शुभ हैं।

पाणिपादतले रक्ते नेत्रान्तानि नखानि च।
तालु जिह्वाधरोष्ठौ च सदा रक्तं प्रशस्यते ॥९॥

हथेली, चरणों के नीचे का भाग, नेत्रों के कोने, नख, तालु, जीभ और निचले होंठ इन सात अंगों का सदा लाल रहना उत्तम है।

नाभिस्वरं सत्वमिति प्रशस्तं गंभीरमन्ते त्रितयं नराणाम्।
उरो ललाटो वदनं च पुंसां विस्तीर्णमेतत् त्रितयं प्रशस्तम् ॥१०॥

नाभि, स्वर और सत्व ये तीन यदि पुरुषों के गम्भीर हों तो प्रशस्त कहे जाते हैं। इसी प्रकार छाती, ललाट और मुख का चौड़ा होना शुभ होता है।

वर्णात् परतरं स्नेहं स्नेहात्परतरं स्वरम्।
स्वरात् परतरं सत्त्वं सर्वं सत्त्वे प्रतिष्ठितम् ॥११॥

मनुष्य की देह में, रंग से उत्तम स्निग्धता (चिकनाई, आव) है, स्निग्धता से भी उत्तम स्वर है और स्वर (आवाज़) से भी उत्तम सत्त्व है। (सत्त्व वह वस्तु है जिसके कारण मनुष्य की सत्ता है, जिसके न रहने से मनुष्यत्व ही नहीं रहता) इसी लिये सत्त्व ही सब का प्रतिष्ठा-स्थान है।

नेत्रतेजोऽतिरक्तं च नातिपिच्छलपिंगलम् ।
दीर्घबाहुनिभैश्वर्यं विस्तीर्णं सुन्दरं मुखम् ॥१२॥

आखों में तेज और गाढ़ी लालिमा का होना तथा बहुत चिकनाई और पिंगल वर्ण (माँजर-पन) का न होना, भुजाओं का दीर्घ होना, और मुंह का विशाल और सुन्दर होना, ऐश्वर्य को प्राप्त करते हैं।

उरोविशालो धनधान्यभोगी शिरोविशालो नृपपुंगवः स्यात् ।
कटेर्विशालो बहुपुत्रयुक्तो विशालपादो धनधान्ययुक्तः ।१३

जिसकी छाती चौड़ी हो वह धन धान्य का भोक्ता, जिसका ललाट चौड़ा हो वह राजा, जिसकी कमर विशाल हो वह बहुत पुत्रोंवाला तथा जिसके चरण विशाल हों वह धनधान्य से युक्त होता है।

वक्षस्नेहेन सौभाग्यं दन्तस्नेहेन भोजनम् ।
त्वचःस्नेहेन शय्या च पादस्नेहेन वाहनम् ॥१४॥

वक्षःस्थल (छाती) की चिकनाई से सौभाग्य, दाँत की चिकनाई से भोजन, चमड़े की चिकनाई से शय्या और चरणों की चिकनाई से सवारी मिलती है।

अकर्मकठिनौ हस्तौ पादौ चाध्वानकोमलौ ।
तस्य राज्यं विनिर्दिष्टं सामुद्रवचनं यथा ॥१५॥

विना काम काज किये भी जिसका हाथ कठिन (कड़ा) हो, और मार्ग चलने पर जिसके पैर कोमल रहते हों, उस मनुष्य को इस शास्त्र के कथन के अनुसार, राज्य मिलना चाहिये।

दीर्घलिंगेन दारिद्र्यम् स्थूललिंगेन निर्धनम् ।
कृशलिंगेन सौभाग्यं ह्रस्वलिंगेन भूपतिः ॥१६॥

जिस पुरुष का लिंग (जननेन्द्रिय) लंबा हो वह दरिद्र, मोटा हो वह निर्धन, पतला हो वह सौभाग्यशील एवं छोटा हो वह राजा होता है।

कनिष्ठिकाप्रदेशाद्या रेखा गच्छति तर्जनीम् ।
अविच्छिन्नानि वर्षाणि तस्य चायुर्विनिर्दिशेत् ॥१७॥

कनिष्ठा अंगुली के नीचे से जो रेखा जाती है वह यदि तर्जनी तक चली गई हो तो समझना चाहिये कि इसकी आयु पूर्णायु अर्थात् १२० वर्ष की है।

कनिष्ठिका प्रदेशाद्या रेखा गच्छति मध्यमाम् ।
अविच्छिन्नानि वर्षाणि अशीत्यायुर्विनिर्दिशेत् ।

वही रेखा यदि मध्यमा अंगुली तक गई हो तो उसकी आयु विना बाधा के अस्सी वर्ष जानना।

कनिष्ठिकांगुलेर्देशाद्रेखा गच्छत्यनामिकाम् ।
अविच्छिन्नानि वर्षाणि षष्ठिरायुर्विनिर्दिशेत् ॥१६॥

वही (कनिष्ठा के अधः प्रदेश से जाने वाली) रेखा यदि अनामिका तक गई हो तो पुरुष की आयु, बे खटके ६० वर्ष की होती है।

कनिष्ठिकांगुलेर्देशात् रेखा तत्रैव गच्छति ।
अविच्छिन्नानि वर्षाणि विंशत्यायुर्विनिर्दिशेत् ॥२०॥

वही (कनिष्ठा के अधः प्रदेशवाली) रेखा यदि कनिष्ठा के मूल तक जाकर ही रह जाय तो आयु के वर्ष बीस (वर्ष) होंगे।

ललाटे यस्य दृश्यन्ते पंच रेखा अनुत्तराः ।
शतवर्षाणि निर्दिष्टं नारदस्य वचो यथा ॥२१॥

जिस पुरुष के ललाट पर पाँच रेखायें, एक दूसरे के बाद, दिखाई दें, उसकी आयु, नारदमुनि के कथनानुसार, सौ वर्ष होनी चाहिये।

ललाटे यस्य दृश्यन्ते चतूरेखाः सुवर्णितम् ।
निर्दिष्टाशीतिवर्षाणि सामुद्रवचनं यथा ।२२॥

जिस पुरुष के ललाट पर चार रेखायें, खूब अच्छी तरह से दिखाई पड़ें, इस शास्त्र के अनुसार उसकी आयु अस्सी वर्ष की होगी।

ललाटे दृश्यते यस्य रेखात्रयमनुत्तरम् ।
षष्ठिवर्षाणि निर्दिष्टं नारदस्य वचो यथा ॥२३॥
ललाटे दृश्यते यस्य रेखाद्वयमनुत्तरम्
वर्षविंशतिनिर्दिष्टं सामुद्रवचनं यथा ॥२४

जिसके ललाट में तीन रेखायें हों उसकी साठ तथा जिसके ललाट पर दो रेखायें हों उसकी बीस वर्ष की आयु समझनी चाहिये—ऐसा नारद का वाक्य है।

कुचैलिनं दन्तमलप्रपूरितम् बह्वाशिनं निष्ठुरवाक्यभाषिणम् ।
सूर्योदये चास्तमये च शायिनं विमुञ्चति श्रीरपि चक्र-पाणिनम् ।२५॥

मैले वस्त्र को धारण करने वाले, दाँत के मल को साफ न करने वाले, बहुत खाने वाले, कटु वाक्य बोलने वाले, सूर्योदय और सूर्य्यास्त के समय सोने वाले पुरुष को—वे चाहे विष्णु ही क्यों न हों—लक्ष्मी छोड़ देती हैं।

अंगुष्ठोदरमध्यस्थो यवो यस्य विराजते ।
उत्तमो भक्ष्यभोजी च नररस्स सुखमेधते ॥२६॥

जिसके अंगूठे के उदर (बीच) में जौ का चिन्ह हो उत्तम भोग को प्राप्त करता हुआ सुख की वृद्धि पाता है।

अतिमेधातिकीर्तिश्च अतिक्रान्तसुखी तथा ।
अस्निग्धचैलि निर्दिष्टमल्पमायुर्विनिर्दिशेत् ॥२७॥

जो मनुष्य अत्यधिक बुद्धिमान्, अतिशय कीर्त्तिमान् और अत्यन्त सुखी तथा मलिन वस्त्रधारी रहता है-वह अल्पायु होता है ऐसा जानना चाहिये।

रेखाभिर्बहुभिः क्लेशी रेखाल्प-धनहीनता ।
रक्ताभिः सुखमाप्नोति कृष्णाभिश्च वने वसेत् ॥२८

हथेली में बहुत रेखायें हों तो मनुष्य दुःखी एवं कम हों तो निर्धन होता है। रेखायें यदि लाल हों तो सुख और काली हों तो वनवास होता है ॥२८॥

श्रीमान्नृपश्च रक्ताक्षो निरर्थः कोऽपि पिङ्गलः ।
सुदीर्घं बहुधैश्वर्य्यं निर्मांसं न च वै सुखम् ॥२६॥

आँखे लाल हों तो धनवान और राजा, पिङ्गलवर्ण की हों तो निर्धन, बड़ी २ हों तो ऐश्वर्य्यवान् और मांस हीन हों (धँसी हुई हो) तो दुःखी जानना चाहिये।

पंचरेखा युगत्रीणि द्विरेखा च समास्थितं ।
नवत्यशीतिः षष्ठिश्च चत्वारिंशच्च विंशतिः ॥३८

जिसके क्रमशः पाँच, चार, तीन, और दो रेखायें हों क्रमशः ६०, ८०, ६०, ४० और २० वर्ष जीता है ।

इत्यायुर्लक्षणं नाम प्रथमं पर्व



द्वितीयं पर्व

अथ तत् सम्प्रवक्ष्यामि देहावयवलक्षणम् ।
उत्तमं मध्यमं हीनं समासेन हि कथ्यते ॥१॥

अब मैं संक्षेप में शरीर के उन लक्षणों को कहता हूं जिन से उत्तम, मध्यम और अधम का ज्ञान होता है ।

पादौ समांसलौ स्निग्धौ रक्तावर्तिमशोभनौ ।
उन्नतौ स्वेदरहितौ शिराहीनौ प्रजापतिः ॥२॥

जिस पुरुष के पैर मांसयुक, चिकने, रक्तिमा लिये हुये, सुन्दर उन्नत और पसीना न देने वाले तथा शिराहीन (ऊपर से शिरा न दिखाई दें—ऐसे) हों वह बहुत प्रजा (सन्तानों) का मालिक होता है ।

यस्य प्रदेशिनी दीर्घा अंगुष्ठादतिवर्द्धिता ।
स्त्रीभोगं लभते नित्यं पुरुषो नात्र संशयः ॥३॥

जिसकी प्रदेशिनी (पैर के अंगूठे के पास वाली उंगली) अंगूठे से भी बड़ी हो वह पुरुष निस्सन्देह नित्य ही स्त्रीभोग पाता है ।

तथा च विकृतैरूक्षैर्नखैर्दारिद्र्यमाप्नुयात् ।
पतिताश्च नखा नीला ब्रह्महत्यां विनिर्दिशेत् ॥४॥

विकृत, रूखे नखों वाला पुरुष दरिद्र होता है । गिरे हुए और नील वर्ण के नख से ब्रह्महत्या का निर्देश करना चाहिये ।

श्वेतवर्णप्रभैः कान्त्या नखैर्बहुसुखाय च ।

ताम्रवर्णनखा यस्य धान्यपद्मानि भोजनम् ॥५॥

जिनके नख की कान्ति सफेद और प्रकाशमान हो उनको बहुत सुख होता है; जिनके नख की कान्ति लाल (तामे की तरह) हो उन्हें असंख्य धान्य और भोजन प्राप्त होता है।

सर्वरोमयुते जंघे नरोऽत्र दुःखभाग्भवेत् ।

मृगजंघे तु राजाह्वो (न्यः) जायते नात्र संशयः ॥६॥

जिसके जंघो में (घुटनों के नीचे और फीलों के ऊपर) अधिक रोयें हों वह मनुष्य दुःखी होता हैं। जिसकी जंघा मृग के समान हो वह राजपुरुष (राज कुमार) होता है इसमें सन्देह नहीं ।

श्रृगालसमजंघेन लक्ष्मीशो न स जायते ।

मीनजंघं स्वयं लक्ष्मीः समाप्नोति न संशयः ॥७॥

स्थूलजंघनरा ये च अन्यभाग्यविवर्जिताः ।

सियार के समान जंघा वाला धनी नहीं होता, पर मछली के समान जंघा वाला खूब धनी होता है। मोटी जंघा वाला भाग्यहीन होता हैं।

एकरोमा लभेद्राज्यं द्विरोमा धनिको भवेत् ।

त्रिरोमा बहुरोमाणो नरास्ते भाग्यवर्जिताः ॥८॥

जिस पुरुष के रोम कूपों से एक एक रोयें निकले हों वह राजा होता है, दो रोम वाला धनिक और तीन या अधिक रोम वाला भाग्यहीन होता है।

हंसचक्रशुकानां च यस्य तद् गतिर्भवेत् ॥९॥

शुभदंगादवन्तश्च (?) स्त्रीणामेभिः शुभा गतिः ।

यदि चाल हंस, चकवा या सुग्गे की तरह हो तो वह पुरुष के लिये अशुभ है; पर यही चाल स्त्रियों के लिये शुभ होती है।

वृषसिंहगजेन्द्राणां गतिर्भोगवतां भवेत् ॥१०॥

मृगवज्जह्नुयाने(?) च काकोलूकसमा गतिः ।

द्रव्यहीनस्तु विज्ञेयो दुःखशोकभयङ्करः ॥११॥

वल, सिंह और मस्त हाथी की सी चाल वाले भोगवान् होते हैं। मृग के समान शृगाल के समान तथा कौए और उल्लू के समान गति वाले मनुष्य द्रव्यहीन तथा भयङ्कर दुःख-शोक से ग्रस्त होते हैं।

श्वानोष्ट्रमहिषाणां च (१) शूकरोष्ट्रधरास्ततः।
गतिर्येषां समास्तेषां ते नरा भाग्यवर्जिताः ॥१२॥

कुत्ते, ऊंट, भैंसे और सूअर की तरह गतिवाला पुरुष भाग्यहीन होता है।

दक्षिणावर्तलिंगस्तु स नरो पुत्रवान् भवेत् ।
वामावर्ते तु लिंगानां नरः कन्याप्रजो भवेत् ॥१३॥

जिस पुरुष का शिश्न (जननेन्द्रिय) दाहिनी ओर झुका हो वह पुत्रवान तथा जिसकी बांई ओर झुका हो वह कन्याओं का जन्मदाता होता है।

ताम्रवर्णमणिर्यस्य समरेखा विराजते ।
सुभगो धनसम्पन्नो नरो भवति तत्त्वतः ॥१४।

जिसके लिंग के आगे का भाग (मणि) की कान्ति लाल हो तथा रेखायें समान हों वह व्यक्ति सौभाग्यशील तथा धनवान होता है।

सुवर्णरौप्यसदृशैर्मणियुक्तसमप्रभैः ।
प्रवालसदृशैः स्निग्धैः मणिभिः पुण्यवान् भवेत् ॥१५।

सोना, चाँदी, मणि, प्रवाल (मूंगा) आदि के समान प्रभा वाले चिकने मणि (शिश्नाग्रभाग) वाले पुरुष पुण्यवान् होते हैं।

समपादोपनिष्टस्य गृहे तिष्ठति मेदिनी।
ईश्वरं तं विजानीयात्प्रमदाजनवल्लभं ॥१६॥

वह पुरुष सामर्थ्यवान् तथा स्त्रियों का प्यारा होता है जिस के पैर पृथ्वी पर बराबर बैठते हैं। उसके घर पृथ्वी भी रहती है।

द्विधारं पतते मूत्रं स्निग्धशब्दविवर्जितम् ।
स्त्रीभोगं लभते सौख्यं स नरो भाग्यवान् भवेत् ॥१७॥

पेशाब करते समय जिसका मूत्र दो धार हो कर गिरे और उनमें से शब्द न निकले तो वह पुरुष भाग्यवान् होता है और स्त्रीभोग तथा सुख को प्राप्त होता है।

---

१ समासगत नियम विरुद्ध जान पड़ता है, "श्वोष्ट्रमहिषाणां च" ऐसा होना चाहिये था।

मीनगन्धं भवेद्रेतः स नरः पुत्रवान् भवेत् ।
मद्यगन्धं भवेद्रेतः स नरस्तस्करो भवेत् ॥१८॥
होमगन्धं भवेद्रेतः स नरः पार्थिवो भवेत् ।
कटुगन्धं भवेद्रेतः पुरुषो दुर्भगो भवेत् ॥१९॥
क्षारगन्धं भवेद्रेतः पुरुषा दारिद्र्यभोगिनः ।
मधुगंधं भवेद्रेतः पुमान्दारिद्र्यवान् भवेत् ॥२०॥

जिस पुरुष के वीर्य से मछली की गंध आती हो वह पुत्रवान्; शराब की गंध आती हो वह चोर, होम की गंध आती हो वह राजा, कडुई गंध आती हो वह अभागा; खारी गन्ध आती हो वह दरिद्र एवं मधु की गन्ध हो वह निर्धन होता है।

किंचिन्मिश्रं तथा पीतं भवेद्यस्य च शोणितम् ।
राजानं तं विजानीयात् पृथ्वीशं चक्रवर्तिनम् ॥२१॥

जिसका रक्त कुछ पीलापन लिये हुये हो उसे पृथ्वी का मालिक चक्रवर्ती राजा जानना चाहिये।

मृगोदरो नरो धन्यः मयूरोदरसन्निभः ।
व्याघ्रोदरो नरः श्रीमान् भवेत् सिंहोदरो नृपः ॥ २२ ॥

मृग और मोर की तरह पेट वाला मनुष्य भाग्यवान्, बाघ की तरह पेट वाला धनवान् और सिंह के पेट के समान पेट वाला मनुष्य राजा होता है।

सिंहपृष्ठो नरो यः स धनं धान्यं विवर्धयेत् ।
कूर्मपृष्ठो लभेद्राज्यं येन सौभाग्यभाग्भवेत् ॥ २३ ॥

सिंह जैसी पीठ वाला धन धान्य से युक्त और कछुये जैसी पीठ वाला राज्य सौभाग्य से युक्त होता है।

पाण्डुरा विरला वृक्षरेखा या दृश्यते करे ।
चौरस्तु तेन विज्ञेयो दुःखदारिद्र्यभाजनम् ॥ २४ ॥

पाण्डुर वर्ण की, विरल, वृक्ष के आकार की रेखा जिसके हाथ में हो वह दुःख और दरिद्रता से युक्त चोर होता है।

यस्य मीनसमा रेखा दृश्यते करसंतले
धर्मवान् भोगवाँश्चैव बहुपुत्रश्च जायते ॥२५॥

जिसके हाथ में मछली की रेखा हो वह धर्मनिष्ठ, भोगवान् और अनेक पुत्रों वाला होता है।

तुला यस्य तु दीर्घा च करमध्ये च दृश्यते ।
वाणिज्यं सिध्यते तस्य पुरुषस्य न संशयः ॥ २६ ॥

जिसके हाथ में लंबी तराजू के आकार की रेखा हो वह पुरुष निश्चय ही उत्तम व्यापारी होता है।

अंकुशो वाऽथ चक्रं वा पद्मवज्रौ तथैव च ।
तिष्ठन्ति हि करे यस्य स नरः पृथिवी-पतिः ॥ २७ ॥

जिसके हाथ में अंकुश, चक्र, कमल अथवा वज्र का चिह्न हो वह मनुष्य पृथ्वी का मालिक (राजा) होता है।

शक्तितोमरबाणञ्च यस्य करतले भवेत् ।
विज्ञेयो विग्रहे शूरः शस्त्रविद्यैव भिद्यते ॥ २८ ॥

शक्ति, तोमर, बाण के चिह्नों से अंकित हाथ वाला पुरुष युद्ध में शूर होता है, वह शस्त्र विद्या को भेदने वाला होता है।

रथो वा यदि वा छत्रं करमध्ये तु दृश्यते ।
राज्यं च जायते तस्य बलवान् विजयी भवेत् ॥ २९ ॥

जिसके हाथ में रथ, छत्र का चिह्न हो वह बलवान् और राज्य का जीतने वाला होता है।

वृक्षो वा यदि वा शक्तिः करमध्ये तु दृश्यते ।
अमात्यः स तु विज्ञेयो राजश्रेष्ठी च जायते ॥ ३० ॥

जिसके हाथ में वृक्ष या शक्ति का चिह्न हो वह मंत्री और राजा का सेठ होता है।

ध्वजं वा ह्यथवा शंखं यस्य हस्ते प्रजायते ।
तस्य लक्ष्मीः समायाति सामुद्रस्य वचो यथा ॥ ३१ ॥

जिसके हाथ में ध्वज या शंख का चिह्न हो उसके पास, सामुद्रशास्त्र के कथनानुसार लक्ष्मी जाती है।

कोष्ठाकारस्तथा राशिस्तोरणं यस्य दृश्यते ।
कृषिभोगी भवेत् सोऽयं पुरुषो नात्र संशयः ॥ ३२ ॥

जिसके हाथ में कोले का आकार, राशि, किंवा तोरण (वन्दनवार) का चिह्न हो वह पुरुष, निस्सन्देह, कृषिजीवी होता हैं ।

दीर्घबाहुर्नरो योग्यः स सर्वगुणसंयुतः ।
अल्पबाहुर्भवेद्योऽसौ परप्रेषणकारकः ॥३३॥

जिस पुरुष की बांहे लंबी हों वह योग्य तथा सर्वगुणसम्पन्न होता हैं इसी प्रकार छोटी बांहुओं वाला दूसरे का नौकर होता हैं ।

वामावर्ती भुजो यस्य दीर्घायुष्यो भवेन्नरः ।
सम्पूर्णबाहवश्चैव स नरो धनवान् भवेत् ॥ ३४ ॥

जिसको भुजायें वाईं ओर घुमी हों वह पुरुष दीर्घ आयु वाला तथा धनी होता हैं ।

ग्रीवा तु वर्तुला यस्य कुंभाकारा सुशोभना ।
पार्थिवः स्यात् स विज्ञेयः पृथ्वीशो कान्तिसंयुतः ॥३५॥

जिसकी गर्दन घड़े की भांति गोल और सुन्दर हो वह सुन्दर स्वरूप वाला राजा होगा ऐसा जानना चाहिये ।

शशग्रीवा नरा ये ते भवेयुर्भाग्यवर्जिताः ।
कम्बुग्रीवा नरा ये च ते नराः सुखजीविनः ॥३६॥

जिनकी गर्दन खरगोश कीसी होवे अभागे होते हैं और जिनकी गर्दन शंख जैसो हो वे मनुष्य सुखी होते हैं ।

कदलीस्तंभसदृशं गजस्कंधसुबन्धुरम् ।
राजानं तं विजानीयात् सामुद्रवचनं यथा ॥ ३७ ॥

जिसका कन्धा केले के खंभे की तरह अथवा हाथी के कन्धे की तरह भरा पूरा स्थूल हो वह राजा होगा ऐसा इस शास्त्र का वचन हैं ।

चन्द्रबिम्बसमं वक्त्रं धर्मशीलं विनिर्दिशेत् ।
अश्ववक्त्रो नरो यस्तु दुःखदारिद्र्यभाजनम् ॥ ३८ ॥

करालवक्त्वैरूपो स नरस्तस्करः स्मृतः ।
बकवानरवक्त्रश्च धनहीनः प्रकीर्तितः ॥ ३९ ॥

यदि मुंह चन्द्रमा के बिम्ब जैसा हो तो धर्मशील, घोड़े के मुंह जैसा हो तो दुःखी और दरिद्र, भयानक तथा रूखा हो तो चोर, बगुला या बानर जैसा हो तो मनुष्य निर्धन होता है ।

यस्य गंडस्थलौ पूर्णौ पद्मपत्रसमप्रभौ ।
कृषिभोगी भवेत सोऽपि धनवान् मानवान् पुमान् । ४०॥

जिसका गंडस्थल भरा हुआ तथा कमल के पत्ते के समान हों वह पुरुष धन तथा मान के सहित कृषिजीवी होता हैं ।

सिंहव्याघ्रगजेन्द्राणां कपालसदृशं भवेत् ।
भोगवन्तो नराश्चैव सर्वदक्षा विदुर्बुधाः ॥ ४१॥

सिंह, बाघ, हाथी आदि के सदृश कपाल वाले पुरुष भोगी, चतुर ज्ञानी और श्रेष्ठ होते हैं ।

रक्ताधरो नृपो ज्ञेयो स्थूलोष्ठो न प्रशस्यते ।
शुष्काधरो भवेत्तस्य नुः सुसौभाग्यदायिनः ॥ ४२ ॥

लाल होठों वाला राजा होता हैं, मोटा होंठ अच्छा नहीं होता शुष्क अधर सौभाग्य के सूचक है ।

कुंदकुसुमसंकाशैः दशनैर्भोगभागितैः ।
यावज्जीवेत् धनं सौख्यं भोगवान् स नरो भवेत् ॥ ४३ ॥

कुन्द की कोई के समान शुभ्र दांतो वाला मनुष्य जोवन भर सुख, भोग और धन आदि से युक्त रहता हैं ।

रुक्षपाण्डुरदन्ताश्च ते क्षुधानित्यपीड़िताः ।
हस्तिदन्ता महादन्ता स्निग्धदन्ताः गुणान्विताः ॥ ४४ ॥

रूखे और पोले दांतो वाले मनुष्य सदा भूख से सताये हुए होते हैं । हाथी जैसे दांतो वाले, बड़े बड़े दांतो वाले तथा चिकने दांतों वाले मनुष्य गुणी होते हैं ।

द्वात्रिंशद्दशनै राजा एकत्रिंशच्च भोगवान् ।

त्रिंशद्दन्ता नरा ये च ते भवन्ति सुभोगिनः ॥ ४५ ॥
एकोनत्रिंशद्दशनैः पुरुषाः दुःखजीविनः ।

३२ दाँतों वाला पुरुष राजा, ३१ दाँतों वाला सुखी, ३० दाँतों वाला भोगी और २९ दाँतो वाला मनुष्य दुःखी होता हैं ।

कृष्णा जिह्वा भवेद्येषां ते नरा दुःखजीविनः ॥ ४६ ॥
श्यामजिह्वो नरो यः स्यात्स भवेत् पापकारकः ।
स्थूलजिह्वा प्रधातारो नराः परुषभाषिणः ॥ ४७ ॥
श्वेतजिह्वा नरा ये च शौचाचारसमन्विताः ।
पद्मपत्रसमा ये तु भोगवन्मिष्टभोजनाः ॥ ४८ ॥

काली जीभ वाले दुःखी, सांवली (हलकी कालिमामयी) जीभ वाले पापी, मोटी जीभ वाले परुष (कड़ा) बोलने वाले सफेद जीभ वाले पवित्र आचार शील, तथा कमल पत्र के समान चिकनी जीभ वाले मनुष्य भोगी तथा मिष्ट पदार्थ खाने वाले होते हैं ।

किंचित्ताम्रं तथा स्निग्धं रक्तं यस्य च दृश्यते ।
सर्वविद्यासु चातुर्यं पुरुषस्य न संशयः ॥ ४९ ॥

जिसकी जीभ कुछ लालिमा के साथ चिकनाई भी लिये हो वह पुरुष निःसन्देह सब विद्याओं में चतुर होता है ।

कृष्णतालुनरा ये च संभवं कुलनाशम् ।
पद्मपत्रसमं तालु स नरो भूपतिर्भवेत् ॥ ५० ॥

काले तालु वाला पुरुष कुल का नाशक तथा कमल-पत्र के समान तालु वाला राजा होता है ।

श्वेततालुनरा ये च धनवंतो भवन्ति ते ।

जिन मनुष्यों का तालु सफेद रंग का होवे धनवान् होते हैं ।

हयस्वरनरा ये च धनधान्यसुभोगिनः ॥५१॥
मेघगम्भीरनिर्घोषो भृंगाणां च विशेषतः ।
ते भवन्ति नरा नित्यं भोगवन्तो धनेश्वराः ॥५२॥

हंसस्वरश्च राजा स्यात् चक्रवाकस्वरस्तथा ।
व्याघ्रस्वरो भवेत् क्लेशी सामुद्रवचनं यथा ॥५३॥

जिनका स्वर घोड़े के समान होवे धनी होते हैं, मेघ के समान गम्भीर घोष वाले और खास करके भौंरों की गुंजार सरीखे स्वर वाले पुरुष नित्य भोगवान् और बड़े धनवान् होते हैं, हंस की तरह स्वर वाले और चकवे की तरह स्वर वाले राजा होते हैं। बाघ के समान स्वर वाले दुःखी होते हैं—ऐसा सामुद्रिक शास्त्र का कहना है।

पार्थिवः शुकनासा च दीर्घनासा च भोगभाक् ।
ह्रस्वनासा नरो यश्च धर्मशीलशते रतः ॥५४॥
स्थूलनासा नरो मान्यः निंद्याश्च हयनासिकाः ।
सिंहनासा नरो यश्च सेनाध्यक्षो भवेत्स च ॥५५॥

शुक कीसी नाक वाले राजा, लंबी नाक वाले भोगी, पतली नाक वाले धर्मनिष्ठ, मोटी नाक वाले माननीय, घोड़े की सी नाक वाले निंदनीय, और सिंह कीसी नाक वाले सेनापति होते हैं।

त्रिशूलमंकुशं चापि ललाटे यस्य दृश्यते ।
धनिकं तं विजानीयात् प्रमदाजीववल्लभः ॥५६॥

जिसके ललाट पर त्रिशूल या अंकुश का चिह्न दिखाई दे उसे धनी समझना चाहिये। वह स्त्री का प्राण-प्यारा होता है।

स्थूलशीर्षनरा ये च धनवंतः प्रकीर्तिताः ।
वर्तुलाकारशीर्षेण मनुजो मानवाधिपः ॥५७॥

चौड़े सिर वाले मनुष्य धनी और गोलाकार सिर वाले राजा होते हैं।

रूक्षान्निर्वाणि वर्णानि स्नेहस्थूला च मूर्द्धजा ।
निस्तेजाः सः सदा ज्ञेयः कुटिलकेशदुःखितः ॥४८॥

जिसके बाल रूखे और विवर्ण हों तथा तेल आदि लगाने पर जकड़ कर स्थूल हो जाते हों वह पुरुष निस्तेज होता है। कुटिल अलकों वाला मनुष्य दुःखी होता है।

अङ्कुशं कुंडलं चक्रं यस्य पाणितले भवेत् ।
विरलं मधुरं स्निग्धं तस्य राज्यं विनिर्दिशेत् ॥५६॥

जिसकी हथेली में अंकुश, कुंडल या चक्र हों उसको निराले और उत्तम राज्य का पाने वाला बताना चाहिये ।

इति पुरुषलक्षणं नाम द्वितीयं पर्व ॥२॥



अथ स्त्रीलक्षणम्

प्रणम्य परमानन्दं सर्वज्ञं स्वामिनं जिनम् ।
सामुद्रिकं प्रवक्ष्यामि स्त्रीणामपि शुभाशुभम् ॥१॥

परम आनन्द मय, सर्वज्ञ, श्री स्वामी जिनेश्वर को प्रणाम करके स्त्रियों के शुभाशुभ को बताने वाले सामुद्रिक शास्त्र को कहता हूं ।

कीदृशीं बरयेत्कन्यां कीदृशीं च विवर्जयेत् ।
किंचित्कुलस्य नारीणां लक्षणं वक्तुमर्हसि ॥२॥

कैसी कन्या का वरण करना चाहिये, कैसी का त्याग करना चाहिये, कुलस्त्रियों का कुछ लक्षण आप कह सकते हैं ।

कृषोदरी च विम्बोष्ठी दीर्घकेशी च या भवेत् ।
दीर्घमायुः समाप्नोति धनधान्यविवर्द्धिनी ॥३॥

जो स्त्री कृशोदरी (कमर की पतली), विंवफल के समान अधरोंवाली और लंबे लंबे केशों वाली होती है वह धन्यधान्य को बढ़ानेवाली होती है और वहुत दिनों तक जीती है ।

पूर्णचन्द्रमुखीं कन्यां बालसूर्यसमप्रभाम् ।
विशालनेत्रां रक्तोष्ठीं तां कन्यां वरयेद् बुधः ॥४॥

पूर्णचन्द्र के समान मुंहवाली, सबेरे के उगते हुए सूर्य के समान कान्ति वाली, बड़ी आँखों वाली और लाल होंठोंवाली कन्या से विवाह करना चाहिये।

अंकुशं कुण्डलं माला यस्याः करतले भवेत् ।
योग्यं जनयते नारी सुपुत्रं पृथिवीपतिम् ॥५॥

जिस स्त्री की हथेली में अङ्कुश, कुण्डल या माला का चिन्ह हो वह राजा होने वाले योग्य सुपुत्र को पैदा करती है।

यस्याः करतले रेखा प्राकारांस्तोरणं तथा ।
अपि दास-कुले जाता राजपत्नी भविष्यति ॥६॥

जिस स्त्री के हाथ में प्राकार या तोरण का चिन्ह हो यदि दास कुल में भी उत्पन्न हो, तो भी पटरानी होगी।

यस्याः संकुचितं केशं मुखं च परिमण्डलम् ।
नाभिश्च दक्षिणावर्त्ता सा नारी रति-भामिनी ॥७॥

जिस स्त्री के केश घुंघराले हों, मुख गोला हो, नाभी दाहनी ओर घुमी हुई हो, वह स्त्री रति के समान है ऐसा समझना चाहिये।

यस्याः समतलौ पादौ भूमौ हि सुप्रतिष्ठितौ ।
रतिलक्षणसम्पन्ना सा कन्या सुखमेधते ॥८॥

जिसके चरण समतल हों और भूमि पर अच्छी तरह पड़ते हों, (अर्थात् कोई उंगली आदि पृथ्वी को छूने से रह न जाती हों) वह रतिलक्षण से सम्पन्न कन्या सुख पाती है।

पीनस्तना च पीनोष्ठी पीनकुक्षी सुमध्यमा ।
प्रीतिभोगमवाप्नोति पुत्रैश्च सह वर्धते ॥९॥

पीन (मोटे) स्तन कोख और होंठवाली तथा सुन्दर कटिवाली स्त्री प्रीति और भोग पाती हुई पुत्रों के साथ बढ़ती है।

कृष्णा श्यामा च या नारी स्निग्धा चम्पकसंनिभा ।
स्निग्धचंदनसंयुक्ता सा नारी सुखमेधते ॥१०॥

कृष्णवर्ण की श्यामा स्त्री (जो शीतकाल में उष्ण और उष्ण काल में शीत रहे) आवदार, चम्पा के समान वर्ण वाली, चन्दन गंध से युक्त हो वह सुख पाती है।

अल्पस्वेदाल्पनिद्रा च अल्परोमाल्पभोजना ।
सुरूपं नेत्रगात्राणां स्त्रीणां लक्षणमुत्तमम् ॥११॥

पसीना का कम होना, थोड़ी नींद, थोड़े रोयें, थोड़ा भोजन, नेत्रों तथा अन्य अंगों की सुन्दरता,—यह स्त्री का उत्तम लक्षण है।

स्निग्धकेशीं विशालाक्षीं सुलोमां च सुशोभनाम् ।
सुमुखीं सुप्रभां चापि तां कन्यां वरयेद् बुधः ॥१२॥

चिकने केशों वाली, बड़ी आंखों वाली, सुन्दर लोम, मुख और कान्ति वाली सुन्दरी कन्या का वरण करना चाहिये।

यस्याः सरोमकौ पादौ उदरं च सरोमकम् ।
शीघ्रं सा स्वपतिं हन्यात् तां कन्यां परिवर्जयेत् ॥१३॥

जिसके पैर रोयेंदार हों तथा पेट में भी रोयें हों, वह स्त्री शीघ्र ही पति को मारती है; अतः इसका वरण नहीं करना।

यस्या रोमचये जंघे सरोममुखमण्डलम् ।
शुष्कगात्रीं च तां नारीं सर्वदा परिवर्जयेत् ॥१४॥

जिस स्त्री के जंघों और मुख मण्डल पर रोयें हो तथा शरीर सूखा हुआ हो उससे सदा दूर ही रहना चाहिये।

यस्याः प्रदेशिनी याति अंगुष्ठादतिवर्द्धिनी ।
दुष्कर्म कुरुते नित्यं विधवेयं भवेदिति ॥१५॥

जिस स्त्री के पैर के अंगूठे के पास वाली अंगुली अंगूठे से बड़ी हो वह नित्य ही दुराचार करती है और विधवा होती है।

यस्यास्त्वनामिका पादे पृथिव्यां न प्रतिष्ठते ।
पतिनाशो भवेत् क्षिप्रं स्वयं तत्र विनश्यति ॥१६॥

जिसकी अनामिका अंगुली पृथ्वी को नहीं छूती ऊपर ही रहती है उस स्त्री के पति का शीघ्र ही नाश होता है और वह स्वयं नष्ट हो जाती है।

यस्याः प्रशस्तमालो यो ह्यावर्तो जायते मुखे।
पुरुषत्रितयं हत्वा चतुर्थे जायते सुखम् ॥१७॥

जिसके मुख पर सुन्दर आवर्त (भंवरी) रहता है वह तीन पति को नष्ट कर चौथी शादी करती है तब सुख पाती है।

उद्वाहे पिंडिता नारी रोमराजिविराजिता।
अपि राजकुले जाता दासीत्वमुपगच्छति ॥ १८ ॥

रोंये से भरी हुई स्त्री यदि राजकुल में भी उत्पन्न हो तो विवाहित होने पर वह दासी की तरह मारी मारी फिरती है।

स्तनयोःस्तवके चैव रोमराजिविराजते।
वर्जयेत्तादृशीं कन्यां सामुद्रवचनं यथा ॥१९॥

जिस स्त्री के दोनों स्तनों के चारो ओर रोंये हो उसे इस शास्त्र के कथनानुसार, छोड देना चाहिये।

विवादशीलां स्वयमर्थचारिणीं परानुकूलां बहुपापकारिणीम्।
आक्रन्दिनीं चान्यगृहप्रवेशिनीं त्यजेत्तु भार्य्यां दशपुत्रमातरं ॥२०॥

लड़ने वाली, अपने मन की चलने वाली, दूसरे के अनुकूल रहने वाली, अनेक पाप कारिणी, रोने वाली, दूसरे के घर में घुसने वाली स्त्री अगर दस लड़कों की मां भी हो तो भी उसे छोड़ देना चाहिये।

यस्यास्त्रीणि प्रलंबानि ललाटमुदरं कटिः।
सा नारी मातुलं हन्ति श्वसुरं देवरं पतिम् ॥२१॥

जिसके ललाट, पेट और कमर, ये तीन अंग लंबे हों वह स्त्री मामा, ससुर, देवर और पति को मारने वाली होती है।

यस्याः प्रादेशिनी शश्वत् भूमौ न संस्पृश्यते यदि।
कुमारी रमते जारैर्यौवने नात्र संशयः ॥२२॥

जिसके अंगूठे के पास वाली अंगुली पृथ्वी को न छुए वह स्त्री कुमारी तथा यौवनावस्था में दूसरे पुरुषों के साथ व्यभिचार करती है, इसमें सन्देह नहीं।

पादमध्यमिका किल यस्या गच्छति उन्नतिम्।
वामहस्ते ध्रुवं जारं दक्षिणे च पतिं तथा ॥२३॥

जिसके पैर की बिचली अंगुली पृथ्वी से ऊपर रहे वह स्त्री, निश्चय ही, बांये हाथ में जार को और दाहिने में पति को लिये रहती है।

उन्नता पिण्डिका चैव विरलांगुलिरोमशा।
स्थूलहस्ता च या नारी दासीत्वमुपगच्छति ॥२४॥

ऊँची, सिमटी हुई विरल अंगुलियों वाली, रोयें वाली तथा छोटे हाथों वाली औरत दासी होती है।

अश्वत्थपत्रसंकाशं भगं यस्या भवेत्सदा।
सा कन्या राजपत्नीत्वं लभते नात्र संशयः ॥२५॥

जिस स्त्री का जननेन्द्रिय पीपल के पत्ते के समान हो वह पटरानी पद को प्राप्त होती है—इसमे सन्देह नहीं।

पृष्ठावर्ता च या नारी नाभिश्चापि विशेषतः।
भगं चापि विनिर्दिष्टा प्रसवश्री विनिर्दिशेत् ॥२६॥ (?)

मण्डूककुक्षिका नारी न्यग्रोधपरिमण्डला।
एकं जनयते पुत्रं सोऽपि राजा भविष्यति ॥२७॥

मेढ़क के समान कोख वाली तथा बड़ के पत्ते के समान मण्डल वाली स्त्री एक ही पुत्र पैदा करती है सो भी राजा।

स्थूला यस्याः करांगुल्यः हस्तपादौ च कोमलौ।
रक्तांगानि नखाश्चैव सा नारी सुखमेधते ॥२८॥

जिस स्त्री के हाथ की अंगुलियाँ छोटी हों, हाथ पैर कोमल हों, शरीर और नख से खून झलकता हो वह स्त्री सुख पाती है।

कृष्णजिह्वा च लंबोष्ठी पिंगलाक्षी खरस्वरा।
दशमासैः पतिं हन्यात्तां नारीं परिवर्जयेत् ॥२९॥

काली जीभ, लंबे होंठ मंजरी आँख, और तीखे स्वर वाली स्त्री दस महीने में ही पति का नाश करती हैं। उसको छोड देना चाहिये।

यस्याः सरोमकौ पादौ तथैव च पयोधरौ।
उत्तरोष्ठाधरोष्ठौ च शीघ्रं मारयते पतिम् ॥३०॥

जिस स्त्री के पैर पयोधर, ऊपर या नीचे के होंठ रोयेंदार हों वह शीघ्र ही पति को मारती है।

चन्द्रबिम्बसमाकारौ स्तनौ यस्यास्तु निर्मलौ।
बाला सा विधवा ज्ञेया सामुद्रवचनं यथा ॥३१॥

जिसके स्तन निर्मल चन्द्रबिम्ब के समान हों वह स्त्री विधवा होती है; ऐसा इस शास्त्र का वचन है।

पूर्णचंद्रविभा नारी अतिरूपातिमानिनी।
दीर्घकर्णा भवेद्याहि सा नारी सुखमेधते ॥३२॥

पूर्ण चन्द्रमा के समान प्रभा वाली अति रूपशीला अति मानिनी तथा लंबे कानों वाली स्त्री सुखी होती है।

यस्याः पादतले रेखा प्राकारश्छत्रतोरणम्।
अपि दासकुले जाता राजपत्नी भविष्यति ॥३३॥

जिस स्त्री के पैर के तलवे में प्राकार, छत्र या तोरण की रेखा हो वह यदि दासकुल में उत्पन्न हो तो भी पटरानी होगी।

रक्तोत्पलसुवर्णाभा या नारी रक्तपिंगला।
नराणां गतिबाह्वल्पा अलंकारप्रिया भवेत् ॥३४॥

लाल, कमल, और सोने की कान्ति वाली, रक्त और पिंगल वर्ण की औरत तथा पुरुष के समान चलने वाली छोटी भुजाओं वाली औरत गहनों को बहुत चाहती हैं।

अतिदीर्घां भृशं ह्रस्वां अतिस्थूलामतिकृशाम्।
अतिगौरां चातिकृष्णां षडेताः परिवर्जयेत् ॥३५॥

अत्यन्त लंबी, अत्यन्त छोटी, अत्यन्त मोटी, अत्यन्त पतली, अत्यन्त गोरी तथा अत्यन्त काली ये ६ प्रकार की औरतें छोड देनी चाहिये।

शुष्कहस्तौ च पादौ च शुष्कांगी विधवा भवेत् ।
अमंगला च सा नारी धन्यधान्यक्षयंकरी ॥३६॥

शुष्क हाथ, सूखे पैर और सूखे शरीर वाली स्त्री विधवा होती है। यह अमंगला धन धान्य की संहारिणी होती है।

पिंगाक्षी कूपगंडा प्रविरलदशना दीर्घजंघोर्ध्वकेशी ।
लम्बोष्ठी दीर्घवक्त्रा खरपरुषरवा श्यामताम्रोष्ठजिह्वा ।
शुष्कांगी संगताश्रू स्तनयुगविषमा नासिकास्थूलरूपा ।
सा कन्या वर्जनीया पतिसुतरहिता शीलचारित्र्यदूरा ॥३७॥

जिस कन्या की आंखें पिंगल वर्ण की हों; कपोल धसे हुए हों; दांत सुसज्जित रूप से न हों; जंघा लंबी हो; केश खड़े हों; ओंठ लंबे हों; मुंह लंबा हो; बोली कर्कश हो; तालु, होंठ और जीभ काली हों; शरीर सूखा हो; बात बात पर आँसू गिरता हो; दोनों स्तन समान न हों; नाक चिपटी हो; उसके साथ विवाह नहीं करना चाहिये। क्यों कि वह पति और पुत्र से रहित होगी, उसके चरित्र भी दूषित होंगे।

शृगालाक्षी कृशांगी च सा नारी च सुलोचना ।
धनहीना भवेत्साध्वी गुरुसेवापरायणा ॥३८॥

सियार की तरह आँखों वाली, पतले शरीर वाली, सुलोचना स्त्री धनहीन होती हुई भी साध्वी और गुरुजनों की सेवा करने वाली है।

रक्तोत्पलदला नारी सुन्दरी गज-लोचना ।
हेमादिमणिरत्नानां भर्तुः प्राणप्रिया भवेत् ॥३९॥

कमल के पत्ते के समान हाथी जैसी आँखों वाली सुन्दरी रमणी, सुवर्ण मणि और रत्नों के स्वामी की प्राणप्रिया होती है।

दीर्घांगुली च या नारी दीर्घकेशी च या भवेत् ।
अमांगल्यकरी ज्ञेया धनधान्यक्षयंकरी ॥४०॥

बड़ी बड़ी अंगुलियों वाली, और दीर्घ केशों वाली औरत धन धान्य की नाशक तथा अमंगल मयी है।

शंखपद्मयवच्छत्रमालामत्स्यध्वजाः स्त्रियाः
पादयोर्वा भवेद्यस्या राजपत्नी भविष्यति ॥४१॥

जिस स्त्री के दोनों पैर में शंख, पद्म, जौ, छत्र, माला, मछली, ध्वजा का चिह्न है वह राजपत्नी होगी।

मार्जाराक्षी पिंगलाक्षी विषकन्येति कीर्तिता।
सुवर्णपिंगलाक्षी तु दुःखिनीति परे जगुः ॥४२॥

बिल्ली की तरह पिङ्गलवर्ण की आंखों वाली स्त्री को विषकन्या कहा गया है। पर सोने के रंग के समान पिंगलनेत्रा स्त्री दुःखिनी होती है—ऐसा भी किसी आचार्य का मत है।

पृष्ठावर्ता पतिं हन्यात् नाभ्यावर्ता पतिव्रता।
कट्यावर्ता तु स्वच्छन्दा स्कन्धावर्ताऽथ भागिनी ॥४३॥

पीठ की भंवरी वाली स्त्री पति को मारने वाली, नाभि की भँवरी वाली स्त्री पतिव्रता, कमर की भँवरी वाली स्वच्छन्दचारिणी और कन्धे की भंवरी वाली धनी होती है।

मध्यांगुलिमणिबन्धनोर्ध्वरेखा करांगुलिम्।
वामहस्ते गता यस्याः सा नारी सुखमेधते ॥४४॥

बाँए हाथ की कलाई से बिचली अंगुली तक जाने वाली रेखा, जिसके हाथ में होती है, वह स्त्री सुख प्राप्त करती है।

अरेखा बहुरेखा च यस्याः करतले भवेत्।
तस्या अल्पायुरित्युक्तं दुःखिता सा न संशयः ॥४५॥

जिस स्त्री की हथेली में बहुत कम रेखायें या बहुत रेखायें हों वह निःसन्देह थोड़े दिन वियोगी और दुःखी रहेगी।

भगोऽश्वखुरवद् यस्या विस्तीर्णं जघनं भवेत्।
सा कन्या रतिपत्नी स्यात्सामुद्रवचनं यथा ॥४६॥

जिस कन्या का जननेन्द्रिय घोड़े के खुर के समान हो और जिसका जघन स्थान (घुटने के ऊपर का भाग) चौड़ा हो वह साक्षात् रति के समान होगी, ऐसा सामुद्रिक शास्त्र का वचन है।

पद्मिनी बहुकेशी स्यादल्पकेशी च हस्तिनी ।
शंखिनी दीर्घकेशी च, वक्रकेशी च चित्रिणी ॥४७॥

बहुत केशों वाली स्त्री को पद्मिनी, कम केशोंवाली को हस्तिनी, लंबे केशों वाली शंखिनी, टेढ़े मेढ़े केशों वाली को चित्रिणी स्त्री कहते हैं।

वृत्तस्तनौ च पद्मिन्याः हस्तिनी विकटस्तनी ।
दीर्घस्तनौ च शंखिन्याः चित्रिणी च समस्तनी ॥४८॥

पद्मिनी के स्तन गोल, हस्तिनी के विकट, शंखिनी के लंबे, और चित्रिणी के समान होते हैं।

पद्मिनी दन्त-शोभा च उन्नता चैव हस्तिनी ।
शंखिनी दीर्घदन्ता च समदन्ता च चित्रिणी ॥४९॥

पद्मिनी के दांत शोभामय हस्तिनी के ऊंचे, शंखिनी के लंबे और चित्रिणी के समान होते हैं।

पद्मिनी हंसशब्दा च हस्तिनी च गजस्वरा ।
शंखिनी रूक्षशब्दा च काकशब्दा च चित्रिणी ॥५०॥

पद्मिनी का शब्द हंस के समान, हस्तिनी, का हाथी के समान, शंखिनी का रूखा और चित्रिणी का शब्द कौआ के समान होता है।

पद्मिनी पद्मगन्धा च मद्यगन्धा च हस्तिनी ।
शंखिनी क्षारगन्धा च शून्यगन्धा च चित्रिणी ॥

पद्मगन्ध से पद्मिनी, मद्यगन्ध से हस्तिनी, खारी गन्ध से शंखिनी एवं शून्य गन्ध से चित्रिणी जानी जाती है।

इति सामुद्रिकाशास्त्रे

स्त्रीलक्षणकथनं नाम तृतीयं पर्व समाप्तम् ।

——०:(*):०——

भवन की प्रकाशित पुस्तकें

		मूल्य
(१)	मुनिसुव्रतकाव्य सजिल्द संस्कृत और भाषा टीका सहित	२)
(२)	ज्ञान-प्रदीपिका तथा सामुद्रिक-शास्त्र भाषा टीका सहित (सम्मिलित)	१)
(३)	जैन सिद्धान्त भास्कर की १म तथा २य, ३य सम्मिलित किरणें ..	२)
(४)	भवन के संगृहीत शास्त्रों की पुरानी सूची	॥)
(५)	भवन की संगृहीत अंग्रेजी पुस्तकों की नयी प्रकाशित सूची	॥।)

प्राप्ति स्थान :—
जैन सिद्धान्त भवन,
आरा (बिहार)।

बाबू देवेन्द्र किशोर जैन द्वारा श्रीसरस्वती प्रिन्टिङ्ग वर्कस, आरा में मुद्रित।